16

(५) सब ईमानदार व्यक्ति कर्त्तव्यनिष्ठ हैं।
यह व्यक्ति कर्त्तव्यनिष्ठ है।
∴ यह व्यक्ति ईमानदार है।

(६) सब धर्मात्मा व्यक्ति सुखी हैं।
सब धनी व्यक्ति सुखी हैं।
∴ सब धनी व्यक्ति धर्मात्मा हैं।

(७) सब ग्रह गोल हैं।
एक पहिया गोल है।
∴ एक पहिया एक ग्रह है।

नियम (४) : कोई भी पद आश्रयवाक्य में व्याप्त हुए बिना निष्कर्ष में व्याप्त नहीं हो सकता।

पदों की अनियमित व्याप्ति नहीं होनी चाहिए

न्याय-युक्ति निगमनमूलक अनुमान है; अतः निष्कर्ष आश्रय से अधिक व्यापक नहीं हो सकता। अतः यदि कोई पद अपने पूर्ण विस्तार में आश्रय में प्रयुक्त न हो, तो वह पूर्ण विस्तार में निष्कर्ष में भी प्रयुक्त न हो सकेगा।

टिप्पणी—अवैध-साध्य-दोष तथा अवैध-पक्ष-दोष

दोष

इस नियम का उल्लंघन करने से अवैध-प्रक्रिया (Illicit process) का दोष हो जाता है। यदि साध्य आश्रय में व्याप्त हुए बिना ही निष्कर्ष में व्याप्त हो जाता है, तो अवैध साध्य का दोष (Fallacy of Illicit Major) हो जाता है। और यदि पक्ष आश्रय में व्याप्त हुए बिना निष्कर्ष में व्याप्त हो जाता है, तो अवैध-पक्ष का दोष (Fallacy of Illicit Minor) हो जाता है। निम्नलिखित उदाहरण देखिए :—

अवैध-साध्य

(क) अवैध-साध्य दोष

(१) सब गायें चतुष्पद हैं।
कोई भी कुत्ता गाय नहीं है।
∴ कोई भी कुत्ता चतुष्पद नहीं है।

इस युक्ति में अवैध साध्य दोष है, क्योंकि साध्य 'चतुष्पद' निष्कर्ष में तो व्याप्त है, परन्तु आश्रय में व्याप्त नहीं है।

(२) सब हिन्दू आर्य हैं।
कोई भी पारसी हिन्दू नहीं है।
∴ कोई भी पारसी आर्य नहीं है।

(३) सब स्पष्टवक्ता व्यक्ति ईमानदार हैं।
राम स्पष्टवक्ता व्यक्ति नहीं है।
∴ राम ईमानदार नहीं है।

(४) सब कांग्रेसी देशभक्त हैं।
कोई समाजवादी कांग्रेसी नहीं है।
∴ कोई समाजवादी देशभक्त नहीं हैं।

अवैध पक्ष

(ख) अवैध-पक्ष-दोष

(१) कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है।
सब मनुष्य जन्तु हैं।
∴ कोई भी जन्तु पूर्ण नहीं है।

इस युक्ति में अवैध-पक्ष दोष है, क्योंकि पक्ष 'जन्तु' निष्कर्ष में तो व्याप्त है, परन्तु पक्षवाक्य में व्याप्त नहीं है।

(२) सब हिन्दू भारतीय हैं।
सब भारतीय जीवधारी हैं।
∴ सब जीवधारी हिन्दू हैं।

(३) सब जापानी बौद्ध हैं।
सब बौद्ध निरीश्वरवादी हैं।
∴ सब निरीश्वरवादी जापानी हैं।

(४) सब ममुष्य मर्त्य हैं।
सब मनुष्य विचारशील हैं।
∴ सब विचारशील (व्यक्ति) मर्त्य हैं।

(५) सब धातुयें ताप तथा विद्युत् की सुचालक हैं।
सब धातुएँ तत्व हैं।
∴ सब तत्व ताप तथा विद्युत् से सुचालक हैं।

दो निषेधात्मक आश्रयों से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

नियम (५) : दो निषेधात्मक आश्रयों से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

उपपत्ति—निषेधात्मक तर्कवाक्य से यह अर्थ निकलता है कि विधेय उद्देश्य के सम्बन्ध में अस्वीकार किया गया है। और जब दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक होंगे, तो इसका अर्थ यह होगा कि न तो साध्य और न पक्ष किसी भी प्रकार हेतु से सम्बन्धित है। जब हेतु का सम्बन्ध न तो साध्य से और न पक्ष से होगा, तो इनमें कोई भी सम्बन्ध-बन्धक नहीं होगा। साध्य

या पक्ष में से कम-से-कम जब किसी एक का सम्बन्ध हेतु के साथ होगा, तभी हम उसका दूसरे पद से सम्बन्ध निर्धारित कर सकेंगे। उदाहरणार्थ, निम्नलिखित तर्कवाक्यों को देखिये :—

कोई भी मनुष्य चतुष्पदी नहीं।
कोई भी चतुष्पदी विचारशील नहीं है।
इनसे कोई भी निष्कर्ष नहीं निकलता।

टिप्पणी—निषेधात्मक आश्रयों के दोष

निषेधात्मक आश्रयों का दोष

इस नियम का उल्लंघन करने से निषेधात्मक आश्रयों का दोष (Fallacy of Negative Premises) हो जाता है, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरण में दिखलाया गया है। निष्कर्ष प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि कम-से-कम एक आश्रय स्वीकारात्मक हो। निम्न-लिखित उदाहरण देखिए—

कोई भी स्कॉटलैण्ड का निवासी इस व्यंग को नहीं समझ सकता।
वह इस व्यंग्य को नहीं समझ सकता।
∴ वह स्कॉटलैण्ड का निवासी है।

इस युक्ति में निषेधात्मक आश्रयों का दोष है, क्योंकि दोनों आश्रय-वाक्य निषेधात्मक हैं।

एक निषेधात्मक आश्रय से निषेधात्मक निष्कर्ष प्राप्त होता है

नियम (६) : यदि एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो, तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा और निष्कर्ष को निषेधात्मक सिद्ध करने के लिए एक आश्रय निषेधात्मक होना चाहिए।

उपपत्ति—नियम (५) के अनुसार दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक नहीं हो सकते। अतः निष्कर्ष तभी प्राप्त हो सकता है जब कम-से-कम एक आश्रय स्वीकारात्मक हो। नियम (६) के अनुसार यदि एक आश्रय वाक्य निषेधात्मक हो, तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। निषे-धात्मक आश्रय से केवल यह ज्ञात होता है कि हेतु तथा अन्य पद (साध्य अथवा पक्ष) में कोई सम्बन्ध नहीं है और दूसरे आश्रय से, जो स्वीका-रात्मक है, यह ज्ञात होता है कि हेतु तथा दूसरे पद में कोई सम्बन्ध है। इन दोनों से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि पदों (साध्य तथा पक्ष) में कोई संबंध नहीं है।

और इसका विलोम।

इस नियम का विलोम भी शुद्ध होता है, अर्थात् यह सिद्ध करने के लिए कि निष्कर्ष निषेधात्मक है, एक आश्रय निषेधात्मक होना चाहिए। यदि निष्कर्ष निषेधात्मक है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि साध्य तथा पक्ष

में कोई सम्बन्ध नहीं है। यह तभी सिद्ध किया जा सकता है, जब एक आश्रय निषेधात्मक हो, जो यह प्रदर्शित करे कि हेतु तथा एक पद (साध्य अथवा पक्ष) में कोई सम्बन्ध नहीं है, एवं एक आश्रय स्वीकारात्मक हो, जो यह प्रदर्शित करे कि हेतु तथा दूसरे पद में कोई सम्बन्ध है।

दो स्वीकारात्मक आश्रय वाक्यों से स्वीकारात्मक निष्कर्ष प्राप्त होता है।

नियम (७) : यदि दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक हों, तो निष्कर्ष भी स्वीकारात्मक होता है, और यदि निष्कर्ष स्वीकारात्मक हो तो दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक होते हैं।

और सका विलोम

उपपत्ति—यदि दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक हों, तो इसका यह अर्थ होगा कि हेतु का साध्य तथा पक्ष दोनों से सम्बन्ध है और इस बात से यह निष्कर्ष अनिवार्यतः प्राप्त हो जाता है कि साध्य तथा पक्ष में सम्बन्ध है।

यदि निष्कर्ष स्वीकारात्मक हो, तो दोनों आश्रयवाक्य भी स्वीकारात्मक होंगे। यदि दोनों आश्रय स्वीकारात्मक नहीं होंगे, तो या तो वे दोनों निषेधात्मक होंगे अथवा उनमें से एक निषेधात्मक तथा दूसरा स्वीकारात्मक होगा। यदि दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक होंगे, तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकेगा; और यदि उनमें से कोई भी एक निषेधात्मक होगा, तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक हो जायेगा। अतः निष्कर्ष स्वीकारात्मक तभी हो सकता है, जब दोनों आश्रय स्वीकारात्मक हों।

दो विशेष आश्रयवाक्यों से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

नियम (८) : यदि दोनों आश्रय विशेष हों, तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

उपपत्ति—इस नियम को निम्न प्रकार से सिद्ध किया जा सकता है :—

यदि दोनों आश्रायवाक्य विशेष हों, तो उनके संभावित युग्म 'ई-ई' (I-I) 'ई-ओ' (I-O), 'ओ-ई' (O-I) तथा 'ओ-ओ' (O-O) हो सकते हैं। अब हम इन चारों पर पृथक्-पृथक् विचार करेंगे।

'ई-ई'- (I-I') से कोई सिद्ध निष्कर्ष नहीं प्राप्त होता है, क्योंकि 'ई' (I) तर्कवाक्य में न तो उद्देश्य और न विधेय व्याप्त होता है। अतः कोई भी पद व्याप्त नहीं होगा। परन्तु नियम (३) के अनुसार, मध्यस्थ पद अर्थात् हेतु कम-से-कम एक बार आश्रय में व्याप्त होना चाहिए। यदि दोनों आश्रयवाक्य 'ई' (I) तर्कवाक्य होंगे, तो दोनों आश्रयों में अतएव यदि दोनों आश्रयवाक्य 'ई' (I) होंगे, तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा।

'ई'-ओ' (I-O) तथा 'ओ-ई' (O-I):—

यदि एक आश्रय 'ई' (I) हो तथा दूसरा 'ओ' (O) हो, तो दोनों आश्रयों में केवल एक ही पद व्याप्त हो सकेगा। यह पद हेतु होना चाहिए, अन्यथा अव्याप्त-हेतु का दोष हो जायगा। परन्तु एक आश्रय निषेधात्मक है; अतः निष्कर्ष निषेधात्मक होगा, जिसमें साध्य अर्थात् निष्कर्ष का विधेय निष्कर्ष में व्याप्त हो जायेगा, परन्तु वह साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं होगा। अतः यदि हम कोई निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करेंगे, तो या तो अव्याप्त-हेतु का दोष हो जायेगा अथवा अवैध-साध्य का दोष हो जायेगा।

'ओओ (O-O):—दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण नियम (५) के अनुसार कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

अतः दोनों आश्रयवाक्यों के विशेष होने पर कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

नियम (९) : यदि एक आश्रयवाक्य विशेष हो, तो निष्कर्ष भी विशेष होगा।

उपपत्ति—इस नियम को निम्नलिखित प्रकार से सिद्ध किया जा सकता है।

एक आश्रय-वाक्य विशेष हो, तो निष्कर्ष भी विशेष होगा

यदि एक आश्रयवाक्य विशेष हो, तो दूसरा आश्रयवाक्य सामान्य होगा। अतः सम्भावित युग्म निम्नलिखित हो सकते हैं : 'आ-ई' (A-I), 'ई-आ' (I-A), 'आ-ओ' (A-O), 'ओ-आ' (O-A), 'ए-ई' (E-I), 'ई-ए' (I-E), 'ए-ओ' (E.O), तथा 'ओ-ए' (O-E)।

इन आठ संभावित युग्मों से हम 'ए-ओ' (E.O), तथा 'ओ-ए' (O-E) को तुरन्त छोड़ सकते हैं, क्योंकि उनमें दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण कोई निष्कर्ष नहीं निकलता। अब हम अन्य युग्मों का पृथक्-पृथक् परीक्षण करेंगे।

'ओ-ई' (A-I) तथा 'ई-आ' (I-A) :

यदि एक आश्रयवाक्य 'आ' (A) हो तो दूसरा आश्रयवाक्य 'ई' (I) हो, तो दोनों आश्रय में केवल एक ही पद व्याप्त होगा, जो हेतु होना चाहिए, अन्यथा अव्याप्त-हेतु का दोष हो जायेगा। अतः निष्कर्ष में कोई भी पद व्याप्त नहीं हो सकता। अतः निष्कर्ष यदि कोई होगा, तो, वह 'ई' (I) तर्कवाक्य होगा; क्योंकि उसमें ही कोई पद व्याप्त नहीं होता। अतः निष्कर्ष विशेष होता है।

'आ-ओ' (A-O) और 'ओ-आ' (O-A) :

यदि एक आश्रय 'आ' (A) हो, तथा दूसरा 'ओ' (O) हो, तो उनमें केवल दो पद व्याप्त होते हैं—यथा, 'आ' (A) का उद्देश्य तथा 'ओ' (O) का विधेय। इन दोनों व्याप्त पदों में एक हेतु होगा। अतः निष्कर्ष में केवल एक ही पद व्याप्त हो सकता है, परन्तु एक आश्रय निषेधात्मक होने के कारण निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा, जिसका विधेय व्याप्त होगा, अर्थात् साध्य व्याप्त होगा। हम ऊपर कह चुके हैं कि निष्कर्ष में केवल एक ही पद व्याप्त हो सकता है, और वह पद साध्य होगा। अतः पक्ष निष्कर्ष में अव्याप्त होगा। इसलिए निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा, जो विशेष है

'ए-ई' (E-I) और 'ई ए' (I-E) :

इनके आश्रयवाक्यों में केवल दो पद व्याप्त होते हैं—यथा 'ए' (E) तर्कवाक्य के उद्देश्य तथा विधेय। इनमें से एक हेतु होगा और दूसरा साध्य होगा क्योंकि निष्कर्ष निषेधात्मक होने के कारण अपने विधेय अर्थात् साध्य को व्याप्त करेगा। अतः निष्कर्ष में उद्देश्य व्याप्त नहीं होता। दूसरे शब्दों में यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है, तो वह 'ओ' (O) होगा, जो विशेष है। [नियम १० में हम देखेंगे कि 'ई-ए' से कोई निष्कर्ष निकल सकता है।]

इस नियम से यह स्पष्ट हो जाता है कि **यदि निष्कर्ष सामान्य हो, तो दोनों आश्रय भी सामान्य होने चाहिए।** क्योंकि यदि एक आश्रय विशेष होगा तो निष्कर्ष भी विशेष होगा। अतः सामान्य निष्कर्ष तभी प्राप्त होता है, जब आश्रय सामान्य हों।

इस नियम का विलोम शुद्ध नहीं होता, अर्थात् यह बात शुद्ध नहीं होती कि यदि निष्कर्ष विशेष हो तो आश्रय भी विशेष होंगे। ऐसा भी हो सकता है कि दोनों आश्रयवाक्य सामान्य हों, परन्तु तो भी उनसे विशेष निष्कर्ष निकले।

नियम (१०) : यदि साध्यवाक्य विशेष हो, तथा पक्षवाक्य निषेधात्मक हो, तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

यदि साध्यवाक्य विशेष तथा पक्षवाक्य निषेधात्मक हो तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

उपपत्ति—यदि पक्षवाक्य निषेधात्मक होगा, तो साध्यवाक्य स्वीकारात्मक होगा तथा निष्कर्ष निषेधात्मक होगा। निष्कर्ष के निषेधात्मक के कारण उसमें साध्य व्याप्त होगा। परन्तु साध्यवाक्य में, उसके विशेष स्वीकारात्मक होने के कारण कोई भी पद व्याप्त नहीं है। अतः यदि कोई निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया जाय, तो अवैध-साध्य (Illicit Major) का दोष हो जाता है।

यह बात द्रष्टव्य है कि चार नियम पहले चार नियमों के द्वारा ही प्राप्त हो जाते हैं। अन्तिम चार नियमों में से किसी एक का उल्लंघन पहले के किन्हीं नियमों के उल्लंघन का परिणाम होता है। अतः पहले छः नियमों को **प्रधान नियम**, तथा अन्तिम चार नियमों को **अप्रधान नियम** मानते हैं।

सारांश : पहले दो नियमों का सम्बन्ध न्याय-युक्ति की रचना से है; तीसरे और चौथे नियमों का सम्बन्ध पद-व्याप्ति के प्रश्न से है; पांचवाँ, छठा और सातवाँ नियम घटक-तर्कवाक्यों के गुण से सम्बन्ध रखता है; आठवें और नवें नियमों का सम्बन्ध घटक-तर्कवाक्यों के **परिणाम** से है और दसवाँ नियम **परिमाण** तथा गुण दोनों के मिश्रित प्रश्न से सम्बन्धित है।

§ ८ न्याय-युक्ति के 'आकार' (Figures)

न्याय-युक्तिका आकार हेतु के स्थान से निश्चित होता है।

'आकार' (Figure) न्याय-युक्ति का वह रूप है, जिसका निर्णय साध्य और पक्ष के सम्बन्ध में हेतु के आश्रयवाक्यों में स्थान से किया जाता है।

हेतु साध्यवाक्य तथा पक्षवाक्य दोनों में उपस्थित होता है, परन्तु प्रत्येक न्याय-युक्ति में हेतु का स्थान एक-सा नहीं होता। दोनों आश्रय-वाक्यों में हेतु का स्थान चार प्रकार से भिन्न होता है। अतः न्याय-युक्ति के चार आकार होते हैं।

(१) प्रथम आकार (First Figure)

प्रथम आकार में हेतु साध्यवाक्य का उद्देश्य तथा पक्षवाक्य का विधेय होता है। अतः—

'म' 'वि'
'उ' 'म'
'उ' 'वि'

(२) द्वितीय आकार (Second Figure)

द्वितीय आकार में, हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में विधेय होता है। इस प्रकार,

'वि' 'म'
'उ' 'म'
'उ' 'वि'।

(३) तृतीय आकार (Third Figure)

तृतीय आकार में, हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में उद्देश्य होता है। इस प्रकार,

'म' 'वि'
'म' 'उ'
'उ' 'वि'

(४) चतुर्थ आकार (Fourth Figure)

चतुर्थ आकार में, हेतु साध्यवाक्य का विधेय तथा पक्षवाक्य का उद्देश्य होता है। इस प्रकार,

'वि' 'म'
'म' 'उ'
∴ 'उ' 'वि'

§ ९ न्याय-युक्ति "संयोग" (Moods)

(१) केवल आश्रयवाक्यों के आधार पर ६४ संयोग

'संयोग' शब्द का उपयोग भिन्न-भिन्न अर्थों में किया जाता है।

(१) न्याय-युक्ति का संयोग (Mood) उस रूप को कहते हैं, जिसका निर्णय घटक आश्रयवाक्यों के गुण तथा परिमाण के आधार पर किया जाता है।

हमें ज्ञात है कि तर्कवाक्य चार प्रकार के होते हैं; यथा—'आ' (A), 'ए' (E), 'ई' (I) और 'ओ' (O)। और प्रत्येक न्याय-युक्ति में दो आश्रयवाक्य होते हैं। अतः प्रत्येक आकार में सोलह संभावित संयोग होते हैं। यथा—

आ-आ	ए-आ	ई-आ	ओ-आ
आ-ए	ए-ए	ई-ए	ओ-ए
आ-ई	ए-ई	ई-ई	ओ-ई
आ-ओ	ए-ओ	ई-ओ	ओ-ओ

आकार चार होते हैं; इसलिये कुल मिलाकर १६×४=६४ संयोग संभव है।

अतः यदि हम आश्रयवाक्यों के गुण तथा परिमाण के आधार पर ही संयोग बनायें, तो प्रत्येक आकार में १६ संयोग हो सकते हैं; तथा चारों आकारों में मिलाकर ६४ संयोग संभव हैं।

(२) अधिक व्यापक अर्थ में 'संयोग' से तात्पर्य न्याय-युक्ति के उस रूप से होता है, जिसका निर्णय न्याय-युक्ति के घटक-अवयवों (दोनों आश्रयवाक्य तथा निष्कर्ष) के गुण तथा परिमाण के आधार पर किया जाता है।

(२) तीनों तर्क वाक्यों के आधार पर २५६ संयोग

इस दृष्टिकोण से उपर्युक्त ६४ संयोगों में से प्रत्येक के चार रूप हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, प्रथम आकार में 'आ-आ' का संयोग निम्नलिखित चार रूप से ले सकता है :—

आ-आ-आ
आ-आ-ए
आ-आ-ई
आ-आ-ओ

अतः इस दृष्टिकोण से ६४×४=२५६ संयोग चारों आकारों में हो सकते हैं।

(३) कुछ तर्कशास्त्री 'संयोग' शब्द को बड़े संकीर्ण अर्थ में प्रयुक्त करते हैं और उससे उनका तात्पर्य सिद्ध संयोग (valid moods) होता है, अर्थात् वे संयोग जिनसे विशुद्ध निष्कर्ष निकले। हम आगे चलकर देखेंगे कि चारों आकारों में, केवल आश्रयवाक्यों के आधार पर कुल मिलाकर १९ सिद्ध संयोग हैं। यथा—

यदि केवल आश्रयों पर विचार करें तो ६४ में से केवल १९ संयोग सिद्ध है।

आ-आ; ए-आ; आ-ई; ए-ई; प्रथम आकार।
ए-आ; आ-ए; ए-ई; आ-ओ;— द्वितीय आकार।
अ-आ; ई-आ; आ-ई; ए-आ; ओ-आ; ए-ई; तृतीय आकार।
आ-आ; आ-ए; ए-आ; ए-आ, ए-ई;— चतुर्थ आकार।

यह बात द्रष्टव्य है कि इन उन्नीस सिद्ध संयोग में से 'ए-आ' तथा 'ए-ई' चारों आकारों में उपस्थित हैं। अर्थात् 'ए-आ' तथा 'ए-ई' से चारों आकारों में विशुद्ध निष्कर्ष निकलता है।

परन्तु यदि हम तीनों घटक तर्कवाक्यों के अनुसार देखें तो २४ सिद्ध-संयोग होंगे।

आ-आ-आ; आ-आ-ई; ए-आ-ए; ए-आ-ओ; आ-ई-ई; ए-ई-ओ; प्रथम आकार।

ए-आ-ए; ए-आ-ओ; आ-ए-ओ; आ-ए-ओ; ए-ई-ओ; आ-ओ-ओ; द्वितीय आकार।

आ-आ-ई; ई-आ-ई; आ-ई-ई; ए-आ-ओ; ओ-आ-ओ; ए-ई-ओ;
—तृतीय आकार ।

आ-आ-ई; आ-ए-ए; आ-ए-ओ; ई-आ-ई; ए-आ-ओ; ए-ई-ओ;
—चतुर्थ आकार।

यह बात द्रष्टव्य है कि 'ए-आ-ओ' तथा 'ए-ई-ओ' चारों आकारों में सिद्ध हैं।

अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि संयोगों की सिद्धि किस प्रकार ज्ञात की जाति हैं।

§ १० *सिद्ध-संयोगों को ज्ञात करना*

यदि हम केवल आश्रय-वाक्यों पर ही विचार करें, तो १६ संभावित संयोग होते हैं जिनमें से ८ से किसी भी आकार में निष्कर्ष नहीं निकलता।

यदि 'संयोग' से तात्पर्य न्याय-युक्ति के उन रूपों को समझा जाय जिनका निर्णय आश्रयवाक्यों के गुण तथा परिमाण के आधार पर किया जाय, तो प्रत्येक आकार में १६ संयोग होते हैं।

'आ'-'आ'	'ए'-'आ'	'ई'-'आ'	'ओ'-'आ'
'आ'-'ए'	'ए'-'ए'	'ई'-'ए'	'ओ'-'ए'
'आ'-'ई'	'ए'-'ई'	'ई'-'ई'	'ओ'-'ई'
'आ'-'ओ'	'ए'-'ओ'	'ई'-'ओ'	'ओ'-'ओ'

इन सोलह संभावित संयोग में से 'ए-ए' (E-E), 'ए-ओ' (E-O), 'ओ-ए' (O-E) तथा 'ओ-ओ' (O-O) से किसी भी आकार में निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक हैं। और 'ई-' ई' (I-I), 'ई-ओ' (I-O) तथा 'ओ''ई' (O-I) से भी किसी आकार में विशुद्ध निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि दोनों आश्रयवाक्य विशेष हैं। 'ई'-'ए' (I-E) से भी कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता, क्योंकि साध्यवाक्य विशेष है, तथा पक्षवाक्य निषेधात्मक है, (नियम १०) अतः सोलह संभावित संयोगों में से आठ से किसी भी आकार में निष्कर्ष नहीं निकलता।

अब हम यह देखेंगे कि शेष आठ संयोग यथा—'आ'-'आ' (A-A), 'आ'-'ए' (A-E), 'आ'-'ई' (A-I), 'आ'-'ओ' (A-O), 'ए'-'आ' (E-A), 'ए'-'ई' (E-I), 'ई'-'आ' (I-A) तथा 'ओ'-'आ' (O-A) से कौन-कौन से निष्कर्ष निकलते हैं और उनमें से कौन-से निष्कर्ष विशुद्ध अथवा सिद्ध हैं।

(एक) प्रथम आकार के सिद्ध संयोग :

आकार

प्रथम आकार में, हेतु साध्यवाक्य में उद्देश्य तथा पक्षवाक्य में विधेय होता है।

(१) 'आ'-'आ' :

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।	'आ-आ-आ'
'आ' : सब 'उ' 'म' हैं।	सब नरेश मनुष्य हैं।	(बार्बारा)
∴ 'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।	सब नरेश मर्त्य हैं।	

इसमें दोनों आश्रय स्वीकारात्मक हैं, अतः यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह स्वीकारात्मक होगा। हेतु साध्यवाक्य में प्राप्त है। निष्कर्ष में 'आ'-तर्कवाक्य रखने से न्याय युक्ति के किसी नियम का उल्लंघन नहीं होता क्योंकि पक्ष, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, पक्षवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'आ-आ' से प्रथम आकार में 'आ'-निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को 'बार्बारा' (Barbara) कहते हैं।

(२) 'आ'-'ए'

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।

'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है।

'आ-ए' (को निष्कर्ष नहीं)

इनसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा, तो वह निषेधात्मक होगा; इसलिए साध्य 'वि' जो कि साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है, निष्कर्ष व्याप्त हो जायेगा। अतः 'आ'-'ए' प्रथम आकार में सिद्ध-संयोग नहीं हैं।

(३) 'आ'-'ई' :

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।	सब मनुष्य विचारशील हैं।	'आ-ई-ई'
'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं।	कुछ जीव मनुष्य हैं।	(दारीई
'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	कुछ जोव विचारशील हैं।	

इसमें दोनों आश्रय स्वीकारात्मक हैं, और एक आश्रय विशेष है; अतः निष्कर्ष विशेष स्वीकारात्मक होगा अर्थात् 'ई' (I) होगा। हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है और निष्कर्ष में कोई भी पद व्याप्त नहीं है। अतः 'आ'-'ई' से प्रथम आकार में 'ई' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को 'दारीई' (Darii) कहते हैं।

'आ'-'ओ' (कोई निष्कर्ष नहीं)

(४) 'आ'-'ओ' :
'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'म' नहीं हैं।

इससे प्रथम आकार में कोई निष्कर्पक निकलता। एक आश्रय वाक्य के निषेधात्मक होने के कारण यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह निषेधात्मक होगा, जिसका विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त होगा— परन्तु साध्य साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः प्रथम आकार में 'आ-'ओ' सिद्ध-संयोग नहीं है।

'ए'-'आ'-'ए' (केलारेंट)

(५) 'ए'-'आ' :

'ए' : कोई भी 'म' 'व' नहीं है।	कोई भी जीव अमर नहीं है।
'आ' सब 'उ 'म' हैं।	सब मनुष्य जीव हैं।
'ए : कोई भी 'उ नहीं है।	कोई भी मनुष्य अमर नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण, निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। यदि निष्कर्ष 'ए (E) आकार में निकालें, तो न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है और साध्य तथा पक्ष, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त हैं, वे आश्रयों में भी व्याप्त हैं। अतः 'ए'-आ' से प्रथम आकार में 'ए' निष्कर्प निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को केलारेन्ट' (Celarent) कहते हैं।

'ए-ई-ओ' (फेरि...)

(६) 'ए'-'ई' :

'ए' : कोई भी 'म' 'वि नहीं है।	कोई भी चतुष्पद मनुष्य नहीं है।
'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं।	कुछ जन्तु चतुष्पद है।
∴'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴कुछ जन्तु मनुष्य नहीं है।

एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक तथा दूसरा विशेष होने के कारण यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह विशेष-निषेधात्मक अर्थात् 'ओ' (O) हो सकता है। निष्कर्ष में 'ओ' तर्कवाक्य रखने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है और साध्य जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'ए-'ई' (E-I) से प्रथम आकार में 'ओ' (O) निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध संयोग को 'फेरीओ' (Ferio) कहते हैं।

(७) 'ई'-'आ':

'ई : कुछ 'म' 'वि' है।

'आ : सब 'उ' 'म' है

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता है, क्योंकि हेतु किसी भी आश्रय में व्याप्त नहीं है। अतः 'ई'-'आ' प्रथम आकार में सिद्ध-संयोग नहीं है।

'ई'-आ से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(८) 'ओ'-'आ'

'ओ : कुछ 'म' 'वि' नहीं है।

'आ : सब 'उ 'म हैं।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता है क्योंकि हेतु एक बार भी आश्रय में व्याप्त नहीं है। अतः 'ओ'-आ प्रथम आकार में सिद्ध-संयोग नहीं है।

'ओ-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

अतः प्रथम आकार में केवल चार संयोग से सिद्ध निष्कर्ष निकलता है। यथा—'आ'-आ (बार्बारा), ('ए-आ' (केलारेन्ट), 'आ-ई' (दारीई) तथा 'ए-ई' (फरीओ)।

टिप्पणी १ : प्रथम आकार के विशेष नियम।

प्रथम आकार के विशेष नियम निम्नलिखित हैं:—

(१) साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

(२) पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

नियम (१) : साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

उपपत्ति—यदि साध्यवाक्य सामान्य न हो तो वह विशेष होगा। प्रथम आकार में, हेतु साध्यवाक्य का उद्देश्य होता है। साध्यवाक्य विशेष होने के कारण, वह उसमें व्याप्त नहीं होगा। परन्तु हेतु आश्रयवाक्ययों में एक बार व्याप्त आवश्य होना चाहिए। यदि वह साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है, तो वह पक्षवाक्य में व्याप्त होगा। प्रथम आकार में हेतु पक्षवाक्य का विधेय होता है। वह उसमें तभी व्याप्त हो सकता है, जब पक्षवाक्य निषेधात्मक हो क्योंकि निषेधात्मक तर्कवाक्य में ही विधेय व्याप्त होता है। यदि पक्षवाक्य निषेधात्मक होगा, तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा तथा साध्यवाक्य स्वीकारात्मक होगा।

हम यह मानकर चले थे कि साध्यवाक्य विशेष है। अब हमें ज्ञात हुआ कि वह स्वीकारात्मक भी है। साध्यवाक्य, विशेष-स्वीकारात्मक होने के कारण, साध्य को व्याप्त नहीं करता। परन्तु साध्य निष्कर्ष में व्याप्त है। अतः यदि हम यह मानकर चलते हैं कि साध्यवाक्य विशेष

है, तो अन्त में अवैध-साध्य का दोष हो जाता है। इसलिए साध्यवाक्य विशेष नहीं हो सकता, वह सामान्य ही होगा।

नियम (२) : पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

यदि पक्ष वाक्य स्वीकारात्मक न हो तो, वह निषेधात्मक होगा। यदि पक्षवाक्य निषेधात्मक होगा, तो निष्कर्ष भी निषेधात्मक तथा साध्य वाक्य स्वीकारात्मक होगा। प्रथम आकार में साध्य साध्यवाक्य का विधेय होता है। साध्यवाक्य के स्वीकारात्मक होने के कारण उसमें साध्य व्याप्त नहीं होगा। परन्तु निष्कर्ष में, उसके निषेधात्मक होने के कारण, साध्य व्याप्त होगा। अतः यह मानकर चलने से कि पक्षवाक्य निषेधात्मक होगा, अवैध-साध्य (Illicit Major) का दोष हो जाता है। अतः पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

टिप्पणी २ : प्रथम आकार की विशेषतायें।

प्रथम आकार में निम्नलिखित निशेषतायें हैं।:—

(१) **अरस्तु का न्याय-युक्ति सम्बन्धी सिद्धान्त** (Dictum de-comet nullo) प्रथम आकार में सरलता से लागू होता है। यह सिद्धान्त यह मानकर चलता है कि अपने पूर्ण निर्देश में किसी पद का विधान किया जाता है। दूसरे शब्दों में, साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए। दूसरा आश्रय यह बतलाता है कि व्याप्त पद में कुछ वस्तुएं सम्मिलित दूसरे शब्दों में, पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए। ये दोनों शर्तें प्रथम आकार में सरलता से चरितार्थ होती हैं।

(२) प्रथम आकार ही ऐसा आकार है, जिसका निष्कर्ष 'आ' (A) तर्कवाक्य हो सकता है।

(३) प्रथम आकार ही ऐसा आकार है, जो **चारों प्रकार के तर्क-**वाक्य— यथा, 'आ' (A) 'ए' (E), 'ई' (I) तथा 'ओ' (O) सिद्ध करता है।

(४) **प्रथम आकार में न तो साध्य और न पक्ष के स्थानों में परिवर्तन** होता है। क्योंकि आश्रयवाक्यों में तथा निष्कर्ष में पक्ष तो उद्देश्य होता है, तथा साध्य विधेय होता है।

(२) द्वितीय आकार के सिद्ध संयोग :

द्वितीय आकार में, हेतु दोनों आश्रयवाक्यों का विधेय होता है। हम आठों संयोगों का पृथक्-पृथक् अध्यनयन करेंगे।

(१) 'आ-आ'

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'आ' : सब 'उ' 'म' हैं।

'आ-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि हेतु एक बार भी आश्रय-वाक्यों में व्याप्त नहीं है। अतः द्वितीय आकार में 'आ-आ' से विशुद्ध निष्कर्ष नहीं प्राप्त होता।

(२) 'आ-ए'

'आ-ए-ए' (कामेस्ट्रेस')

'आ' सब 'वि' 'म' हैं। सब धातुयें तत्व हैं।
'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है। ∴ कोई भी यौगिक तत्व नहीं है।
'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है। ∴ कोई भी यौगिक धातु नहीं है।

इसमें एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण, निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। यदि हम निष्कर्ष 'ए' निकालें, तो न्याय-युक्ति के किसी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु पक्ष वाक्य में व्याप्त है और साध्य तथा पक्ष, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त हैं, वे आश्रयों में भी व्याप्त हैं। अतः 'आ-ए' से द्वितीय आकार में 'ए' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को कामेस्ट्रेस् (Camestres) कहते हैं।

(३) 'आ-ई'

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं।

'आ-ई' से 'कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता क्योंकि हेतु दोनों आश्रय-वाक्यों में अव्याप्त हैं। अतः द्वितीय आकार में 'आ-ई' से विशुद्ध निष्कर्ष नहीं प्राप्त होता।

(४) 'आ-ओ'

'आ-ओ-ओ' (बारोको)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं। सब घोड़े चतुष्पद हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'म' नहीं हैं? कुछ जन्तु चतुष्पद नहीं हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'व' नहीं हैं। ∴ कुछ जन्तु घोड़े नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य के विशेष निषेधात्मक होने के कारण निष्कर्ष भी विशेष तथा निषेधात्मक हो सकता है। अतः निष्कर्ष 'ओ' निकालने

से न्याय-युक्ति के किसी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु पक्ष वाक्य में भी व्याप्त है और साध्य, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'आ-ओ' से द्वितीय आकार में 'ओ' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को **'बारोको'** (Baroco) कहते हैं।

(५) 'ए-आ' :

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। — कोई भी पूर्ण व्यक्ति मर्त्य नहीं है।

'आ' : सब 'उ' 'म' हैं। — सब मनुष्य मर्त्य हैं।

∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है। — ∴ कोई भी मनुष्य पूर्ण व्यक्ति नहीं हैं।

'ए-आ' (केसारे)

इसका निष्कर्ष निषेधात्मक होगा, क्योंकि एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक है। निष्कर्ष को 'ए' निकालने पर न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है, और साध्य तथा पक्ष, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वे अपने आश्रयवाक्यों में भी व्याप्त हैं। अतः 'ए-आ' से द्वितीय आकार में 'ए' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को **'केसारे'** (Cesare) कहते हैं।

(६) 'ए-ई' :

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। — कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है।

'ई' : कुछ 'ई' 'म' हैं। — कुछ व्यक्ति पूर्ण हैं।

∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'व' नहीं हैं। — ∴ कुछ व्यक्ति मनुष्य नहीं हैं।

इसमें एक आश्रय निषेधात्मक है, तथा दूसरा आश्रय विशेष है। अतः यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है, तो वह 'ओ' होगा। 'ओ' निष्कर्ष निकालने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है, तथा साध्य जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'ए'-'ई' से द्वितीय आकार में 'ओ' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को **'फेस्तीनो'** (Festino) कहते हैं।

'ए-ई-ओ' (फेस्तीनो)

(७) 'ई-आ' :

'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं।
'आ' : सब 'उ' 'म' हैं।

इसमें हेतु एक भी आश्रय में व्याप्त नहीं है, अतः कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

'ई-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(८) 'ओ-आ' :

'ओ' : कुछ 'वि' 'म' नहीं हैं।
'आ' : सब 'उ' 'म' हैं।

इसमें यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह विशेष निषेधात्मक होगा क्योंकि एक आश्रयवाक्य विशेष और निषेधात्मक है। निषेधात्मक निष्कर्ष का विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त होगा, परन्तु वह साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः द्वितीय आकार में, 'ओ-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

'ओ-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

इस प्रकार द्वितीय आकार में केवल चार संयोगों से विशुद्ध निष्कर्ष प्राप्त होते हैं। यथा- 'ए-आ' (केसारे), 'आ-ए' (कास्मेट्रेस्), 'ए-ई' (फेस्तीनों) तथा 'आ-ओ' (बारोको)।

टिप्पणी—द्वितीय आकार के विशेष नियम।

द्वितीय आकार के विशेष नियम निम्नलिखित हैं:—

(१) साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

(२) एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होना चाहिए।

नियम (१) : साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

उपपत्ति—यदि साध्य वाक्य सामान्य नहीं होगा, तो वह विशेष होगा। द्वितीय आकार में, साध्य साध्यवाक्य का उद्देश्य होता है। साध्यवाक्य विशेष होने के कारण, उसमें साध्य अव्याप्त होता है। अतः साध्य निष्कर्ष में भी व्याप्त नहीं हो सकता, जहां वह विधेय के स्थान पर है। अतः निष्कर्ष स्वीकारात्मक होना चाहिए, क्योंकि केवल स्वीकारात्मक तर्कवाक्यों के विधेय ही अव्याप्त होते हैं। निष्कर्ष तभी स्वीकारात्मक होता है, जब दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक हों। अतः आश्रयवाक्यों के विधेय अव्याप्त होंगे। द्वितीय आकार में हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में विधेय होता है, अतः वह एक बार भी व्याप्त न हो सकेगा।

अतः साध्यवाक्य को विशेष मान लेने से, 'अव्याप्त हेतु' का दोष (Fallacy of Undistributed Middle) हो जाता है। अतः साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

नियम (२) : **एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होना चाहिए।**

उपपत्ति—द्वितीय आकार में हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में विधेय होता है। परन्तु स्वीकारात्मक तर्कवाक्य के विधेय व्याप्त नहीं होते; पर हेतु कमसे कम एक वार अवश्य व्याप्त होना चाहिए। अतः एक आश्रयवाक्य का निषेधात्मक होना अनिवार्य है।

(तीन) तृतीय आकार के सिद्ध-संयोग—

तृतीय आकार में, हेतु दोनों आश्रयवाक्य में उद्देश्य होता है।

'आ-आ-ई' (दाराप्ती)

(१) 'आ-आ'

'आ' : सव 'म' 'वि' हैं।	सव मनुष्य विचारशील हैं।
'आ' : सव 'म' 'उ' हैं।	संव मनुष्य मर्त्य हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	∴ कुछ मर्त्य (व्यक्ति) विचारशील हैं।

इसमें दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक हैं, अतः निष्कर्ष भी स्वीकारात्मक होगा। यदि हम निष्कर्ष पें 'आ'-तर्कवाक्य निकालने का प्रयत्न करें, तो उसमें पक्ष व्याप्त हो जायेगा, यद्यपि वह पक्षवाक्य में व्याप्त नहीं होगा। अतः निष्कर्ष 'आ' नहीं हो सकता। परन्तु यदि निष्कर्ष 'ई' निकाला जाय, तो न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु दोनों आश्रयों में व्याप्त होता है तथा निष्कर्ष में किसी भी पद की अनियमित-व्याप्ति नहीं होती। अतः तृतीय आकार में 'आ-आ' का निष्कर्ष 'ई' होता है। इस सिद्ध-संयोग को 'दाराप्ती' (Darapti) कहते हैं।

'आ-ए' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(२) 'आ-ए' :

'आ' : सव 'म' 'वि' हैं।

'ए' : कोई भी 'म' 'उ' नहीं है।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह निषेधात्मक होगा। और उसका विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त होगा; परन्तु साध्यवाक्य में व्याप्त वह नहीं है।

(३) 'आ-ई':

'आ-ई-ई' (दातीसी)

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।	सब रोग कष्टदायक हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।	कुछ रोग उपचारयोग्य हैं।
∴'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	कुछ उपचारयोग्य वस्तुयें कष्टदायक हैं।

इस में एक आश्रय विशेष है; तथा दोनों आश्रयवाक्यों के स्वीकारात्मक होने के कारण, निष्कर्ष, यदि कोई हो, तो 'ई' हो सकता है। 'ई' निष्कर्ष निकालने से न्याय-युक्ति का कोई नियम नहीं टूटता, क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है तथा निष्कर्ष में पदों की नियमित-व्याप्ति है। अतः 'आ-ई' से तृतीय आकार में 'ई' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध संयोग को 'दातीसी' (Datisi) कहते हैं।

'आ-ओ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(४) 'आ-ओ':

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'ओ' : कुछ 'म' 'उ' नहीं हैं।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह निषेधात्मक होगा। जिसका विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त हो जाएगा; परन्तु वह साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है।

'ए-आ-ओ' (फेलाप्तोन)

(५) 'ए-आ':

'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।	कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य विचारशील हैं।
∴'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴कुछ विचारशील (व्यक्ति) पूर्ण नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। यदि हम निष्कर्ष, 'ए' निकालें, तो उसमें पक्ष व्याप्त हो जायगा; परन्तु वह पक्षवाक्य में व्याप्त नहीं है, लेकिन यदि निष्कर्ष 'ओ' निकालें, तो न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में व्याप्त है और साध्य, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'ए-आ' से तृतीय आकार में 'ओ' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को फेलाप्तोन (Felapton) कहते हैं।

ए-ई-ओ'
(फेरीसोन)

(६) 'ए-ई' :

'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं हैं।	कोई भी आक्रमण न्याययुक्त नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।	कुछ आक्रमण सफल होते हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴ कुछ सफल वस्तुयें न्याय-युक्त नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक, तथा दूसरा आश्रयवाक्य विशेष होने के कारण, यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा तो वह विशेष निषेधात्मक हो सकता है। निष्कर्ष को 'ओ' निकालने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता, क्योंकि हेतु साध्यवाक्य में व्याप्त है और साध्य, जो कि निष्कर्ष में व्याप्त है, वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त है। अतः 'ए'-'ई' तृतीय आकार में 'ओ' निष्कर्ष प्राप्त होता है। इस सिद्ध-संयोग को 'फेरीसोन' (Ferison) कहते हैं।

'ई-आ-ई'
(दीसामीस)

(७) 'ई-आ' :

'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।	कुछ मनुष्य चतुर हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	∴ कुछ मर्त्य (व्यक्ति) चतुर हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य विशेष है, तथा दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक हैं, अतः यदि कोई निष्कर्ष निकल सकता है, तो वह 'ई' होगा। निष्कर्ष 'ई' निकालने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः तृतीय आकार में 'ई'-'आ' से 'ई' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को 'दीसामीस' (Disamis) कहते हैं।

'ओ-आ-ओ'
(बोकार्दो)

(८) 'ओ-आ' :

'ओ' : कुछ 'म' 'वि' नहीं हैं।	कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴ कुछ मर्त्य (व्यक्ति) चतुर नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य विशेष निषेधात्मक है; अतः निष्कर्ष 'ओ' हो सकता है। 'ओ' निष्कर्ष निकालने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः 'ओ-आ' से तृतीय आकार में 'ओ' निष्कर्ष प्राप्त होता है। इस सिद्ध संयोग को 'बोकार्दो' (Bocardo) कहते हैं।

अतः तृतीय आकार में छः संयोगों से विशुद्ध निष्कर्ष प्राप्त होता है। यथा—'आ-आ' (दाराप्ती), 'ई-आ' (दीसामीस), 'आ-ई' (दातीसी), 'ए-आ' (फेऊाप्तोन), 'ओ-आ' (बोकार्दो), 'ए-ई' (फेरीसोन)।

टिप्पणी—तृतीय आकार के विशेष नियम।

तृतीय आकार के विशेष नियम निम्नलिखित हैं:—

(१) पक्ष वाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

(२) निष्कर्ष विशेष होना चाहिए।

नियम (१) : पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

उपपत्ति—यदि पक्ष वाक्य स्वीकारात्मक नहीं है तो वह निषेधात्मक होगा। यदि पक्ष वाक्य निषेधात्मक हो, तो साध्यवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए, तथा निष्कर्ष निषेधात्मक होना चाहिए। तृतीय आकार में, साध्य साध्यवाक्य का विधेय होता है। साध्यवाक्य स्वीकारात्मक होने के कारण, उसमें साध्य व्याप्त नहीं हो सकता। परन्तु निष्कर्ष के निषेधात्मक के कारण साध्य उसमें व्याप्त हैं। अतः पक्षवाक्य को निषेधात्मक मान लेने से अवैध-साध्य (Illicit Major) का दोष हो जाता है। अतः पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए।

नियम (२) : निष्कर्ष विशेष होना चाहिए।

उपपत्ति—तृतीय आकार में पक्षवाक्य का विधेय है। नियम (१) के अनुसार, पक्षवाक्य स्वीकारात्मक होना चाहिए। स्वीकारात्मक तर्कवाक्य का विधेय व्याप्त नहीं होता। अतः पक्ष आश्रय में व्याप्त नहीं है; अतः वह निष्कर्ष में भी व्याप्त नहीं हो सकता। पक्ष निष्कर्ष का उद्देश्य होता है और केवल विशेष तर्कवाक्यों के उद्देश्य ही व्याप्त होते हैं। अतएव निष्कर्ष विशेष होना चाहिए, अन्यथा हम 'अव्याप्त-पक्ष' का दोष कर बैठेंगे।

(चार) चतुर्थ आकार के सिद्ध संयोग

चतुर्थ आकार में हेतु साध्यवाक्य का विधेय तथा पक्षवाक्य का उद्देश्य होता है।

(१) 'आ-आ':

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।	सब मनुष्य जन्तु हैं।	**'आ-आ-ई'**
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब जन्तु मर्त्य हैं।	**(ब्रामान्तीप)**
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	∴ कुछ मर्त्य (व्यक्ति) मनुष्य हैं।	

इसमें दोनों आश्रयवाक्य स्वीकारात्मक होने के कारण, निष्कर्ष भी स्वीकारात्मक होगा। यदि हम निष्कर्ष 'आ' निकालें, तो पक्ष बिना पक्ष-वाक्य में व्याप्त हुए ही निष्कर्ष में व्याप्त हो जायगा। परन्तु यदि निष्कर्ष 'ई' निकालें तो न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः 'आ'-'आ' से चतुर्थ आकार में 'ई' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध संयोग को **'ब्रामान्तीप्'** (Bramantip) कहते हैं।

'आ-ए-ए' (कामेनेस्)

(२) 'आ-ए' :

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।
'ए' : कोई भी 'म' 'उ' नहीं हैं।	कोई भी मर्त्य (व्यक्ति) पूर्ण नहीं हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'व' नहीं है।	∴ कोई भी पूर्ण (व्यक्ति) मनुष्य नहीं हैं।

इसमें एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक होने के कारण, निष्कर्ष भी निषेधात्मक होगा। निष्कर्ष 'ए' निकालने से न्याय-युक्ति का कोई भी नियम नहीं टूटता। अतः 'आ-ए' का चतुर्थ आकार में 'ए' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को **'कामेनेस'** (Camenes) कहते हैं।

'आ-ई' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(३) 'आ-ई'

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।

हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में अव्याप्त है, अतः इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

'आ-ओ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(४) 'आ-ओ' :

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ओ' : कुछ 'म' 'उ' नहीं हैं।

इसमें भी हेतु किसी भी आश्रय में व्याप्त नहीं है, अतः कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।

'ए-आ-ओ' (फेसापो)

(५) 'ए-आ' :

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।	कोई भी चतुष्पद मनुष्य नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य जन्तु हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴ कुछ जन्तु चतुष्पद नहीं हैं।

इसमें एक आश्रय निषेधात्मक होने के कारण, निष्कर्ष निषेधात्मक हो सकता है। परन्तु यदि हम 'ए' निष्कर्ष निकालें, तो निष्कर्ष में पक्ष व्याप्त हो जायगा, परन्तु वह आश्रय में व्याप्त नहीं होगा। परन्तु यदि निष्कर्ष 'ओ' निकालें तो न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः 'ए'-'आ' से चतुर्थ आकार में 'ओ' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध संयोग को **'फेसापो'** (Fesapo) कहते हैं।

(६) 'ए-ई' — 'ए-ई-ओ' (फ्रेसीसोन)

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।	कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।	कुछ पूर्ण (व्यक्ति) विचारशील हैं।
∴'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴ कुछ विचारशील (व्यक्ति) मनुष्य नहीं हैं।

इसमें एक आश्रय निषेधात्मक तथा दूसरा विशेष होने के कारण, यदि कोई निष्कर्ष निकलेगा, तो वह 'ओ' होगा। निष्कर्ष 'ओ' निकालने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः चतुर्थ आकार में 'ए'-'ई' का 'ओ' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को **'फ्रेसीसोन'** (Fresison) कहते हैं।

(७) 'ई-आ' — 'ई'-आ-ई' (दीमारीस्)

'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं।	कुछ जीव मनुष्य हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।	∴ कुछ मर्त्य (व्यक्ति) जीव हैं।

इसमें एक आश्रय विशेष तथा दोनों आश्रय स्वीकारात्मक होने के कारण, निष्कर्ष 'ई' हो सकता है। निष्कर्ष को 'ई' रखने से न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः 'ई'-आ' से चतुर्थ आकार में 'ई' निष्कर्ष निकलता है। इस सिद्ध-संयोग को दीमारीस् (Dimaris) कहते हैं।

(८) 'ओ-आ' : — 'ओ-आ' से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

'ओ' : कुछ 'वि' 'म' नहीं हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।

इससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता, क्योंकि एक आश्रयवाक्य निषेधा-

त्मक होने से यदि कोई निष्कर्ष प्राप्त होगा, वह निषेधात्मक ही होगा, जिसमें साध्य व्याप्त होगा; परन्तु साध्य आश्रय में व्याप्त नहीं है।

अतः चतुर्थ आकार में, पांच संयोग से विशुद्ध निष्कर्ष प्राप्त होता है, यथा—'आ-आ' (ब्रामान्तीप्), तथा 'आ-ए' '(कामेनेस' 'ई-आ' (डीमारीस्), 'ए-आ' (फेसापो), 'ए-ई' (फ्रेसीसोन)।

टिप्पणी—चतुर्थ आकार के विशेष नियम

चतुर्थ आकार के विशेष नियम निम्नलिखित हैं :—

(१) यदि साध्यवाक्य स्वीकारात्मक हो, तो पक्षवाक्य सामान्य होगा।

(२) यदि पक्षवाक्य स्वीकारात्मक हो, तो निष्कर्ष विशेष होगा।

(३) यदि कोई भी आश्रय निषेधात्मक हो, तो साध्यवाक्य सामान्य होगा।

नियम (१) : यदि साध्यवाक्य स्वीकारात्मक हो, तो पक्षवाक्य सामान्य होगा।

चतुर्थ आकार में, हेतु साध्यवाक्य का विधेय है अतः यदि साध्य-वाक्य स्वीकारात्मक हो, तो उसमें हेतु व्याप्त नहीं होगा। अतः हेतु पक्षवाक्य में व्याप्त होना चाहिए। विशेष तर्कवाक्यों के उद्देश्य व्याप्त नहीं होते। अतः हेतु को पक्षवाक्य में व्याप्त होने के लिये आवश्यक है कि पक्षवाक्य सामान्य हो।

नियम (२) : यदि पक्षवाक्य स्वीकारात्मक हो, तो निष्कर्ष विशेष होगा।

चतुर्थ आकार में, पक्ष पक्षवाक्य में विधेय होता है। यदि पक्षवाक्य स्वीकारात्मक हो, तो उसमें पक्ष अव्याप्त रहेगा, और इस कारण निष्कर्ष में भी व्याप्त न हो सकेगा। निष्कर्ष में पक्ष उद्देश्य होता है और केवल विशेष तर्कवाक्यों के उद्देश्य ही अव्याप्त होते हैं। अतः निष्कर्ष विशेष होगा।

नियम (३) : यदि कोई एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो, तो साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

यदि कोई-सा भी आश्रयवाक्य निषेधात्मक होगा, तो निष्कर्ष निषेधा-त्मक होगा, जिसका विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त होगा। अतः साध्यवाक्य में साध्य व्याप्त होगा। चतुर्थ आकार में साध्य साध्यवाक्य का उद्देश्य

होता है; और केवल सामान्य तर्कवाक्यों के ही उद्देश्य व्याप्त होते हैं। अतः साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिए।

सारांश

संक्षेप में, यदि 'संयोग' से तात्पर्य न्याय-युक्ति के आश्रयों के गुण तथा परिणाम से निर्धारित रूप हो, तो प्रत्येक आकार में १६ संभावित संयोग होते हैं और चारों आकारों में कुल मिलाकर ६४ संयोग होते हैं। इन ६४ संयोगों में से केवल १९ संयोगों से ही विशुद्ध निष्कर्ष प्राप्त होता है—चार प्रथम आकार में, चार द्वितीय आकार में, छः तृतीय आकार में और पांच चतुर्थ आकार में।

§११ आकारान्तरण (Reduction) अनुलोम—(Direct) तथा प्रतिलोम (Indirect)

आकारान्तरण से तात्पर्य अपूर्ण आकारों के संयोगों को पूर्ण आकार के संयोगों में बदलना है, ताकि उनकी विशुद्धि का प्रदर्शन हो सके।

आकारान्तरण का शाब्दिक अर्थ होता है 'आकार में परिवर्तन करना।' कुछ तर्कशास्त्री 'आकारान्तरण' शब्द का उपयोग बड़े व्यापक अर्थ में करते हैं। उनके विचार में 'आकारान्तरण' किसी भी आकार के संयोगों (moods) को किसी अन्य आकार के संयोगों में बदलने को कहते हैं। इस प्रकार, प्रथम आकार के संयोग द्वितीय आकार के संयोगों में आकारान्तरित किये जा सकते हैं। द्वितीय आकार के संयोग तृतीय आकार के संयोगों में आकारान्तरित किये जा सकते हैं; तृतीय आकार के संयोग चतुर्थ आकार के संयोगों में आकारान्तरित किये जा सकते हैं। यही नहीं; वरन् किसी भी आकार के संयोगों को किसी अन्य आकार के संयोगों में बदला जा सकता है।

'आकारान्तरण' शब्द का उपयोग संकीर्ण अर्थ में भी किया जाता है। इससे तात्पर्य द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ आकार के संयोगों को प्रथम आकार के संयोगों में बदलना होता है।

अरस्तू ने प्रथम आकार को 'पूर्ण आकार' (perfect figure) माना था, क्योंकि उसका न्याय-युक्ति संबंधी सिद्धान्त (Dictum de-omni et nullo) उस पर सरलता से लागू हो जाता था। यह सिद्धान्त द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ आकार के संयोगों पर सरलता से लागू नहीं होता। अतः उन आकारों को उसने 'अपूर्ण आकार' (imperfect figure) कहा है। परन्तु यदि अपूर्ण आकारों के

संयोगों को पूर्ण आकार के संयोगों में आकारान्तरित कर दिया जाय तो अरस्तू का सिद्धान्त उन पर लागू किया जा सकता है। अतः आकारान्तरण के द्वारा तथाकथित अपूर्ण आकारों की अपूर्णता दूर की जा सकती है। दूसरे शब्दों में यह सिद्ध हो जाता है कि यद्यपि यह सिद्धान्त यथाकथित अपूर्ण आकारों पर लागू नहीं होता, परन्तु तो भी यह तथ्य कि ये संयोग पूर्ण आकार के संयोगों में बदले जा सकते हैं, यह बतलाता है कि इन संयोगों के निष्कर्ष भी, प्रथम आकार के संयोगों की भांति, विशुद्ध हैं। अतः आकारान्तरण (Reduction) का उद्देश्य द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ आकार के संयोगों की विशुद्धि को सिद्ध करना है।

अतएव आकारान्तरण उस क्रिया को कहते हैं जिससे अपूर्ण आकारों (imperfect figure) के संयोग (moods) पूर्ण आकार (perfect figure) के संयोगों में बदले जा सकें, ताकि यथाकथित अपूर्ण आकारों के संयोगों की विशुद्धि सिद्ध की जा सके।

आकारान्तरण दो प्रकार का होता है:

अनुलोम आकारान्तरण

(क) अनुलोम:—(Direct या Ostensive Reduction): जिसमें अपूर्ण आकारों का संयोग, परिवर्तन (Conversion) प्रतिवर्तन (Obversion), परिवर्तित-प्रतिवर्तन (Contraposition) अथवा आश्रय-स्थानान्तरण (Transposition of Premises) के द्वारा अनुलोम रीति से प्राप्त किया जाता है। उसे 'अनुलोम' (direct) इसलिए कहते हैं, कि दिए हुए न्यायवाक्य के आश्रयों के द्वारा दिया हुआ निष्कर्ष तुरन्त हो जाता है।

प्रतिलोम आकारान्तरण

(ख) प्रतिलोम आकारान्तरण (Indirect Reduction) से पूर्ण आकार की सहायता से यह सिद्ध किया जाता है कि अपूर्ण आकारों के निष्कर्ष का विरुद्ध (contradictory) असत्य है; अतः वह निष्कर्ष सत्य होना चाहिए।

टिप्पणी : क्या आकारान्तरण आवश्यक है?

क्या आकारान्तरण आवश्यक है?

अरस्तू के समय में आकारान्तरण ही एक ऐसी क्रिया ज्ञात थी, जिसके द्वारा यथाकथित अपूर्ण आकारों के संयोगों को विशुद्ध सिद्ध किया जा सकता था। अतः यह क्रिया नितान्त रूप से अनिवार्य समझी जाती थी। परन्तु

वर्तमान काल में अन्यविधियां भी ज्ञात हैं, जिनकी सहायता से न्याय-युक्ति की विशुद्धता जांची जा सकती है; तथा—न्याय-युक्ति के सामान्य नियम तथा विशेष नियमों का उपयोग। अतः अब आकारान्तरण का उतना महत्व नहीं रहा, जितना कि अरस्तू के समय में था। अब यह अपूर्ण आकारों के संयोगों की विशुद्धि की जांच की एकमात्र विधि न होकर अनेकों विधियों से एक है। यह बात मानते हुए भी, कि आकारान्तरण की क्रिया का महत्व कम हो गया है, यह नहीं सोचना चाहिए कि आकारान्तरण पूर्णरूपेण व्यर्थ है। आकारान्तरण से, एक आकार के संयोगों को दूसरे आकार के संयोगों में बदल सकने के कारण यह सिद्ध हो जाता है कि विभिन्न आकार यद्यपि भिन्न प्रतीत होते हैं, परन्तु वे मूलरूप में अनन्य हैं। अतः **आकारान्तरण सब प्रकार की न्याय-युक्ति द्वारा अनुमान की क्रियाओं की एकता प्रदर्शित करता है।**

§१२ स्मृति-सहायक छन्द (The Mnemonic Verses)

तेरहवीं शताब्दी के लेटिन-वर्ग के विचारकों (Latin schoolmen) ने सिद्ध-संयोगों (valid moods) को याद रखने के लिये कुछ स्मृति-सहायक छन्दों की रचना की थी। इन स्मृति-सहायक छन्दों का निर्माण काल्पनिक शब्दों से किया गया था, जिनमें ये आदेश छिपे हुए थे कि द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ आकार के संयोगों को प्रथम आकार के संयोगों में किस प्रकार अनुलोम-रीति से आकारान्तरित किया जा सकता है। प्रथम आकार में चार, द्वितीय आकार में चार, तृतीय आकार में छः तथा चतुर्थ आकार में पांच सिद्ध-संयोग होते हैं। निम्न-लिखित छन्द की प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पंक्तियां क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ आकार के सिद्ध-संयोगों के नाम व्यक्त करती हैं।

चारों आकार के सिद्ध-संयोग

बार्बारा, केलारेन्ट, दारीई, फेरीओ;
BARBARA, CELARENT, DARII, FERIO,
केसारे, कामेस्ट्रेस, फेस्तीनो, बारोको,
CESARE, CAMESTRES, FESTINO, BAROCO,
दाराप्ती, दीसामीस, दातीसी, फेलाप्तोन, बोकार्दो, फेरीसोन :
DARAPTI, DISAMIS, DATISI, FELAPTON, BOCARDO, FERISON
ब्रामान्तीप, कामेनेस, दीमारीस, फेसापो, फ्रेसीसोन
BRAMANTIP, CAMENES, DIMARIS, FESAPO, FRESISON.

सार्थक अक्षर

इनमें से प्रत्येक में तीन स्वरों का उपयोग है। पहला स्वर साध्यवाक्य के लिए, दूसरा पक्षवाक्य के लिए और तीसरा निष्कर्ष के लिए प्रयुक्त है। अर्थात् इन शब्दों में जो स्वर हैं, वे 'संयोग' का संकेत करते हैं। यथा— 'बार्बारा' प्रथम आकार में 'आ-आ-आ' संयोग को व्यक्त करता है। इसी प्रकार केलारेंट प्रथम आकार में 'ए-आ-ए' संयोग को व्यक्त करता है।

प्रथम आकार के संयोगों के नाम के प्रथम अक्षर अंग्रेजी वर्णमाला के प्रथम चार व्यंजन हैं :—यथा— 'ब' (B), 'क', (C), 'द' (D) तथा 'फ' (F)। 'बारोको' (Baroco) तथा बोकार्दो (Bocardo) के अतिरिक्त, अपूर्ण आकारों के संयोगों के प्रथम अक्षर से यह संकेत मिलता है कि उस संयोग का आकारान्तरण प्रथम आकार के उस संयोग में होगा, जिसका प्रारंभिक अक्षर भी वही व्यंजन हो। इस प्रकार 'ब्रामान्तीप' (Bramantip) का प्रथम अक्षर 'ब' (B) यह संकेत करता है कि उसका आकारान्तरण बार्बारा (Barbara) में होगा। 'केसारे' (Cesare) का 'क' (C) यह संकेत करता है कि उनका आकारान्तरण 'केलारेन्ट' (Celarent) में होगा। 'दाराप्ती' (Darapti) का 'द' (D) यह संकेत करता है कि उसका आकारान्तरण, 'दारीई' (Darii) में होगा। 'फेस्तीनो' (Festino) का 'फ' (F) यह संकेत करता है कि उसका आकारान्तरण 'फेरीओ' (Ferio) में होगा। इसी प्रकार अन्य संयोगों के आकारान्तरण की बात समझी जा सकती है।

[इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि अंग्रेजी भाषा में तो स्वर (vowels) के अक्षर अलग-अलग स्पष्ट दिखलाई देते हैं, परन्तु हिन्दी में पिछले व्यंजनों में मात्रा के रूप में लगे रहते हैं।]

'स' (s) अपने पूर्ववर्ती स्वर द्वारा बतलाये गये तर्कवाक्य के सरल परिवर्तन (Simple Conversion) करने का संकेत देता है।

'प' (p) अपने पूर्ववर्ती स्वर द्वारा बतलाये गये तर्कवाक्य के

असरल परिवर्तन (Conversion per accidens) करने का संकेत देता है।

जब 'स' (s) तथा 'प' (p) तीसरे स्वर के बाद आते हैं, तो उसका अर्थ यह होता है कि नवीन न्याय-युक्ति के निष्कर्ष का, अवस्थानुसार सरल परिवर्तन अथवा असरल परिवर्तन करना है।

'म' (m) से तात्पर्य आश्रयवाक्यों का स्थानान्तरण है, अर्थात् दी हुई न्याय-युक्ति का साध्यवाक्य नई न्याय-युक्ति का पक्षवाक्य बन जाता है और दी हुई न्याय-युक्ति का पक्ष वाक्य नये न्याय वाक्य का साध्यवाक्य बन जाता है। यह प्रथम आकार (First Figure) में ही होता है।

'क' (k) से तात्पर्य इसके पूर्ववर्ती तर्कवाक्य का प्रतिवर्तन (obversion) होता है। अतः 'क्स' (ks) से यह तात्पर्य है कि पहले प्रतिवर्तन, फिर परिवर्तन अर्थात् परिवर्तित प्रतिवर्तन। 'स्क' (sk) से यह तात्पर्य है कि पहले सरल परिवर्तन, फिर प्रतिवर्तन। यदि 'स्क' (sk) तीसरे स्वर के बाद हो, तो इससे यह तात्पर्य होता है कि नई न्याय युक्ति के निष्कर्ष का सरल परिवर्तन करना है, फिर उसका प्रतिवर्तन करना है।

'क' (c) यह बतलाता है कि न्याय-युक्ति का प्रतिलोम आकारान्तरण होगा। 'बारोको' (Baroco) तथा 'बोकार्दो' (Bocardo) ही ऐसे दो संयोग हैं, जिनमें 'क' (c) अक्षर का प्रयोग होता है। प्राचीन तर्कशास्त्रियों ने उनका आकारान्तरण प्रतिलोम-विधि से किया था। अब यह संभव है कि उनका आकारान्तरण अनुलोम विधि से भी हो सके। ऐसी दशा में उनको क्रमशः फाक्सोको (Faksoko) तथा 'दोक्सामोस्क' (Doksamosk) नाम से सम्बोधित करेंगे।

अन्य अक्षर, यथा 'र' (r), 'त' (t), 'ल' (l) 'ब' (b), 'द' (d) तथा 'न' (n) अर्थहीन हैं। इनका उपयोग केवल इसलिए किया गया है कि उच्चारण में सुविधा हो जाय। **अर्थहीन अक्षर**

§१३ अपूर्ण आकारों का अनुलोम आकारान्तरण

(एक) द्वितीय आकार के संयोग।

(१) केसारे (Cesare)
'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'आ' : सव 'उ' 'म' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

केलारेन्ट (Celarent)
(स) कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। 'ए'
सव 'उ' 'म' हैं। 'आ'
∴ कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है। 'ए'

(२) कामेस्ट्रेस् (Camestres)
'आ' : सव 'वि' 'म' हैं।
'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

केलारेन्ट (Celarent)
कोई भी 'म' 'उ' नहीं है। 'ए'
सव 'वि' 'म' हैं। 'आ'
∴ कोई भी 'वि' 'उ' नहीं है। 'ए'
∴ कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।
(परिवर्तन से)

(३) फेस्तीनो (Festino)
'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

फेरीओ (Ferio)
(स) कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। 'ए'
कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

(४) बारोको (Baroco)
=फाक्सोको (Faksoko)
'आ' : सव 'वि' 'म' हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'म' नहीं हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

फेरीओ (Ferio)
(वस) कोई भी अ-'म' वि नहीं है। 'ए'
(क) कुछ 'उ' अ-'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

(दो) तृतीय आकार के संयोग—

(१) दाराप्ती (Darapti)
'आ' : सव 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सव 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

दारीई (Darii)
सव 'म' 'वि' हैं। 'आ'
(प) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' हैं। 'ई'

(२) दीसामीस् (Disamis)

'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

दारीई (Darii) दीसामीस

सब 'म' 'उ' हैं। 'आ'
कुछ 'वि' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'वि' 'उ' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' हैं।
(परिवर्तन से)

(३) दातीसी (Datisi)

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

दारीई (Darii) दातीसी

सब 'म' 'वि' हैं। 'आ'
(स) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' हैं। 'ई'

(४) फेलाप्तोन् (Felapton)

'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

फेरीओ (Ferio) फेलाप्तोन्

कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। 'ए'
(प) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

(५) बोकार्दो (Bocardo)
=दोक्सामोक्स (Doksamosk)

'ओ' : कुछ 'म' 'वि' नहीं हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

दारीई (Darii) बोकार्दो

सब 'म' 'उ' हैं। 'आ'
कुछ अ-'वि' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ अ-'वि' 'उ' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' अ-'वि' हैं।
(परिवर्तन से)
∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।
(प्रतिवर्तन से)

(६) फेरीसोन् (Ferison)

'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

फेरीओ (Ferio) फेरीसोन

कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। 'ए'
(स) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'
∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

(तीन) चतुर्थ आकार के संयोग—

ब्रामान्तीप

(१) ब्रामान्तीप् (Bramantip) — वार्बारा (Barbara)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं। — सब 'म' 'उ' हैं। 'आ'

'आ' : सब 'म' 'उ' हैं। — सब 'वि' 'म' हैं। 'आ'

∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं। — ∴ सब 'वि' 'उ' हैं। 'आ'

∴ कुछ 'उ' 'वि' हैं।

(परिवर्तन से)

कामेनेस्

(२) कामेनेस् (Camenes) — केलारेन्ट (Celarent)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं। — कोई भी 'म' 'उ' नहीं है।

'ए' : कुछ भी 'म' 'उ' नहीं हैं। — सब 'वि' 'म' हैं। 'आ'

∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है। — ∴ कोई भी 'वि' 'उ' नहीं है। 'ए'

∴ कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

(परिवर्तन से)

दीमारीस्

(३) दीमारीस् (Dimaris) — दारीई (Darii)

'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं। — सब 'म' 'उ' हैं। 'आ'

'आ' : सब 'म' 'उ' हैं। — कुछ 'वि' 'म' हैं। 'ई'

∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं। — ∴ कुछ 'वि' 'उ' हैं। 'ई'

∴ कुछ 'उ' 'वि' हैं।

(परिवर्तन से)

फेसापो

(४) फेसापो (Fesapo) — फेरीओ (Ferio)

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। — (स) कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। 'ए'

'आ' : सब 'म' 'उ' हैं। — (प) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'

∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। — ∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

फ्रेसीसोन

(५) फ्रेसीसोन (Fresison) — फेरीओ (Ferio)

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। — (स) कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है। 'ए'

'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं। — (स) कुछ 'उ' 'म' हैं। 'ई'

∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। — ∴ कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं। 'ओ'

§ १४ अपूर्ण आकारों का प्रतिलोम आकारान्तरण (Indirect Reduction)

उस आकारान्तरण को प्रतिलोम (Indirect) कहते हैं, जिसमें प्रथम आकार को एक ऐसी न्याय-युक्ति बना ली जाती है जो मूल निष्कर्ष के सत्य को, उसके विरुद्ध को असत्य सिद्ध करके स्थापित करती है। जब मूल निष्कर्ष का विरुद्ध असत्य सिद्ध कर दिया जाता है, तो मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हो जाता है। इस क्रिया को असंभव प्रदर्शन द्वारा आकारान्तरण (Reductio ad absurdum) भी कहते हैं, क्योंकि इसमें यह बात मानकर चलते हैं कि मूल निष्कर्ष का विरुद्ध (contradictory) सत्य है, परन्तु अन्त में वह मूर्खतापूर्ण तथा असत्य विदित होता है।

प्रतिलोम आकारान्तरण में मूल निष्कर्ष के विरुद्ध को असत्य सिद्ध करके मूल निष्कर्ष को सिद्ध किया जाता है।

प्रतिलोम आकारान्तरण किसी भी अपूर्ण संयोग पर लागू हो सकता है, यद्यपि प्रारम्भ में उसका उपयोग केवल 'बारोको' (Baroco) तथा 'बोकार्दो' (Bocardo) के लिए ही किया जाता था, जैसा कि स्मृति-सहायक छन्द (Mnemonic lines) से विदित होता है। अब हम एक-एक करके समस्त अपूर्ण आकारों के संयोगों का प्रतिलोम आकारान्तरण करेंगे।

(एक) द्वितीय आकार के संयोग

द्वितीय आकारः केसारे

(१) केसारे (Cesare)।

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'आ' : सब 'उ' 'म' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

यदि मूल-निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध (Contradictory) यथा—"कुछ 'उ' 'वि' हैं" ('ई') सत्य होगा। इस तर्क-वाक्य को पक्षवाक्य मानकर और मूल साध्यवाक्य को साध्यवाक्य मानकर, प्रथम आकार में निम्नलिखित नई न्याय-युक्ति बनती है:—

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। (मूल साध्यवाक्य)
'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं। (मूल निष्कर्ष का विरुद्ध)
∴ 'ओ : कुछ 'उ' 'म' नहीं हैं। (नया निष्कर्ष)

यह प्रथम आकार का सिद्ध-संयोग 'फेरीओ' (Ferio) है, क्योंकि हेतु 'वि' साध्यवाक्य में उद्देश्य तथा पक्षवाक्य में विधेय है।

परन्तु हम देखते हैं कि नया निष्कर्ष मूल पक्षवाक्य (अर्थात् "सब 'उ' 'म' हैं") का विरुद्ध (contradictory) है, जो कि न्याय-युक्ति के नियमों के अनुसार सत्य माना जाना चाहिए। अतः उसका विरुद्ध अर्थात् नया निष्कर्ष असत्य होना चाहिए। अब विचारणीय बात यह है कि यह क्यों असत्य है? यह असत्यता तर्क-क्रिया के दोषपूर्ण होने के कारण नहीं हो सकती, क्योंकि वह 'फेरीओ (Ferio) है; और न नये साध्य वाक्य के कारण हो सकती है, जो कि मूल साध्यवाक्य के ही समान है। अतः यह असत्यता नये पक्षवाक्य के कारण ही हो सकती है; अर्थात् नया पक्षवाक्य असत्य है। अतः उसका विरुद्ध, अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य होगा।

टिप्पणी:—इस दशा में, मूल निष्कर्ष का विरुद्ध **पक्षवाक्य** बनाया गया है तथा साध्यवाक्य दी हुई न्याय-युक्ति से ही ले लिया गया है। परन्तु यदि मूल निष्कर्ष का विरुद्ध साध्यवाक्य बना लिया जाता तथा पक्षवाक्य दी हुई न्याय-युक्ति से ही प्राप्त किया जाता, तो हम प्रथम आकार के किसी सिद्ध-संयोग को प्राप्त नहीं कर सकते थे। प्रतिलोम आकारान्तरण में, अनुलोम-आकारान्तरण की भांति दी हुई **न्याय-युक्ति प्रथम आकार** की **न्याय-युक्ति** में बदल जाती है। अतः प्रतिलोम आकारान्तरण में, मूल निष्कर्ष का विरुद्ध साध्यवाक्य अथवा पक्षवाक्य इस प्रकार बनाया जाता है कि **मूल न्याय-युक्ति से दूसरा आश्रय उसमें सम्मिलित करके प्रथम आकार की न्याय-युक्ति का सिद्ध संयोग बन जाय।** कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि मूल निष्कर्ष का विरुद्ध या तो साध्यवाक्य अथवा पक्षवाक्य अपनी इच्छानुसार बनाया जा सकता है; क्योंकि दोनों दशाओं में दूसरे आश्रय के साथ प्रथम आकार में सिद्ध-संयोग प्राप्त हो जाता है।

कामेस्ट्रेस

(२) कामेस्ट्रेस् (Camestres)।

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

यदि मूल निष्कर्ष सत्य नहीं होगा, तो उसका विरुद्ध "कुछ 'उ' 'वि' हैं" सत्य होना चाहिए। इस तर्कवाक्य को पक्ष वाक्य तथा मूल-साध्यवाक्य को साध्यवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:—

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ई' : कुछ 'उ' वि' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं। दारीई (Darii) के अनुसार, क्योंकि नई न्याय-युक्ति में 'वि' हेतु है।

नया निष्कर्ष मूल पक्ष-वाक्य का विरुद्ध (contradictory) है। अतः नया निष्कर्ष असत्य है। इस असत्यता का कारण क्या है? तर्क-प्रक्रिया के कारण यह असत्यता नहीं हो सकती, क्योंकि वह 'दारीई' (Darii) है। और न वह नये साध्यवाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह मूल साध्यवाक्य के ही तुल्य होने से सत्य है। अतः निष्कर्ष के असत्य होने के कारण नये पक्षवाक्य की असत्यता है। इस प्रकार नये पक्षवाक्य को असत्य सिद्ध कर देने से यह सिद्ध हो जाता है कि उसका विरुद्ध अर्थात् मूल-निष्कर्ष, सत्य है।

फेस्तीनो

(३) फेस्तीनो (Festino)
'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध (contradictory) "सब 'उ' 'वि' हैं" सत्य है। इस तर्कवाक्य को पक्षवाक्य बनाकर और मूल-साध्यवाक्य को साध्यवाक्य मानकर, प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन सकती है:

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है। केलारेन्ट (Celarent) के अनुसार, क्योंकि 'वि' हेतु है।

नया निष्कर्ष मूल-पक्षवाक्य का विरुद्ध होने के कारण सत्य नहीं हो सकता। यह नया निष्कर्ष क्यों असत्य है? यह असत्यता न तो तर्क-प्रक्रिया के कारण हो सकती है (क्योंकि वह, 'केलारेन्ट' है) और न नये साध्यवाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह तो मूल साध्यवाक्य के ही समान है। अतः यह असत्यता नये पक्षवाक्य के कारण हो सकती है। इस प्रकार, पक्षवाक्य के असत्य होने से उसका विरुद्ध अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य होगा।

बारोको

(४) बारोको (Baroco)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।	सब घोड़े चतुष्पद हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'म' नहीं हैं।	कुछ जन्तु चतुष्पद नहीं हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'व' नहीं हैं।	∴ कुछ जन्तु घोड़े नहीं हैं।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध अर्थात् "सब 'उ' 'वि' हैं" या "सब घोड़े हैं" सत्य होगा। इस तर्कवाक्य को पक्षवाक्य मान कर तथा मूल-साध्यवाक्य को साध्यवाक्य मानकर, प्रथम आकार में निम्न-लिखित न्याय-युक्ति बन सकती है :

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।	सब घोड़े चतुष्पद हैं।
'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।	सब जन्तु घोड़े हैं।
∴ 'आ' सब 'उ' 'म' हैं।	∴ सब जन्तु चतुष्पद हैं।

यह युक्ति 'बार्बारा' (Barbara) है, जिसमें 'वि' (या घोड़े) हेतु है। नया निष्कर्ष मूल पक्ष-वाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य है। यह असत्यता किस कारण हो सकती है? यह तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं होती; क्योंकि वह तो 'बार्बारा' (Barbara) है और न वह साध्यवाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह मूल साध्यवाक्य के समान है। अतः नवीन पक्षवाक्य असत्य है। इसलिए उसका विरुद्ध अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य होना चाहिए।

द्रष्टव्य——द्वितीय आकार का प्रतिलोम आकारान्तरण करते समय प्रथम आकार में विशुद्ध न्याय-युक्ति तभी प्राप्त होती है जब कि मूल निष्कर्ष का विरुद्ध नई न्याय-युक्ति का पक्षवाक्य बनाया जाय।

तृतीय आकार दाराप्ती

(दो) तृतीय आकार के संयोग :

(१) दाराप्ती (Darapti)

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि मूल निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध अर्थात् "कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है" सत्य होना चाहिए। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनाई जा सकती है:——

'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। (केलारेन्ट के अनुसार जिसमें 'उ' हेतु है।)

नया निष्कर्ष मूल साध्यवाक्य का विपरीत (contrary) होने के कारण असत्य होना चाहिए। यह असत्यता किस कारण से हो सकती है? यह असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं हो सकती,

क्योंकि वह 'केलारेन्ट' (Celarent) है; और वह नये पक्षवाक्य के कारण भी नहीं हो सकती, क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः उसका कारण नया साध्यवाक्य हो सकता है, जिसे इस प्रकार असत्य सिद्ध कर देने पर उसका विरुद्ध, अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हो जाता है।

दीसामीस्

(२) 'दीसामीस्' (Disamis)

'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि मूल निष्कर्ष असत्य है, तो उसका विरुद्ध, "कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है" सत्य होगा। इस तर्कवाक्य को साध्यवाक्य मानकर तथा मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन सकती है :—

'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। [केलारेन्ट (Celarent) के अनुसार, जिसमें 'उ' हेतु है।]

इसमें नया निष्कर्ष मूल साध्यवाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य होगा। यह असत्यता न तो तर्क-प्रक्रिया के कारण हो सकती है क्योंकि वह 'केलारेन्ट' (Celarent) है, और न नये पक्षवाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। इसलिए नया साध्यवाक्य असत्य होगा। अतः उसका विरुद्ध अर्थात् मूल-निष्कर्ष सत्य है।

दातीसी

(३) दातीसी (Datisi)

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि मूल-निष्कर्ष सत्य नहीं हो, तो उसका विरुद्ध अर्थात् "कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है" सत्य होना चाहिए। इससे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है।

'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'म' 'वि' नहीं हैं। ['फेरीओ' (Ferio) के अनुसार, जिसमें 'उ' हेतु है।]

नया निष्कर्ष मूल-साध्यवाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य होना चाहिए। यह असत्यता किस कारण हो सकती है ? यह असत्यता तर्क-क्रिया के कारण नहीं हो सकती, क्योंकि वह 'फेरीओ' (Ferio) है, जो कि प्रथम आकार में शुद्ध संयोग है। यह असत्यता पक्षवाक्य के कारण भी नहीं हो सकती, क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः इस असत्यता का कारण नया साध्यवाक्य ही हो सकता है। उसके असत्य सिद्ध हो जाने से उसका विरुद्ध मूल निष्कर्ष सत्य होगा।

फेलाप्तोन्

(४) फेलाप्तोन् (Felapton)
'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

यदि इसका निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका विरुद्ध, ' सब 'उ' 'वि' हैं" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर निम्नलिखित नई न्याय-युक्ति वन सकती है।

'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴'आ' : सब 'म' 'वि' हैं। [बार्बारा (Barbara) के अनुसार, जिसमें 'उ' हेतु है।]

नया निष्कर्ष मूल साध्यवाक्य का विपरीत (contrary) होने के कारण असत्य है। यह असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह बार्बारा (Barbara) है। और न पक्षवाक्य के कारण हो सकती है क्योंकि वह मूल-पक्षवाक्य के समान है। अतः वह नये साध्यवाक्य के कारण है। इसलिये साध्यवाक्य के असत्य सिद्ध होने के कारण उसका विरुद्ध अर्थात् मूल-निष्कर्ष सत्य होना चाहिए।

बोकार्दो

(५) बोकार्दो (Bocardo)

'ओ' : कुछ 'म' 'वि' नहीं हैं।	कुछ मनुष्य चतुर नहीं हैं
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।	सब मनुष्य मर्त्य हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।	∴कुछ मर्त्य व्यक्ति चतुर नहीं हैं।

यदि मूल निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध "सब 'उ' 'वि' हैं" या "सब मर्त्य व्यक्ति चतुर हैं" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूलपक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन सकती है:—

'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं। सब मर्त्य (व्यक्ति) चतुर हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं। सब मनुष्य मर्त्य हैं।
∴'आ' सब 'म' 'वि' हैं। सब मनुष्य चतुर हैं।

यह नया निष्कर्ष मूल साध्यवाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य है। यह असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं है, क्योंकि वह 'बार्बारा' (Barbara) है। और न वह नये पक्षवाक्य के कारण ही हो सकती है क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः नया साध्यवाक्य असत्य है। अतः उसका विरुद्ध अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य है।

(६) फेरीसोन् (Ferison)

'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

यदि मूल-निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका विरुद्ध, अर्थात् 'सब' 'उ' 'वि' है" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल-पक्षवाक्य को पक्ष वाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:—

'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।

[दारीई (Darii) के अनुसार जिसमें 'उ' हेतु है।]

यह नया निष्कर्ष असत्य है क्योंकि यह मूल साध्यवाक्य की विरुद्ध है। यह असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह 'दारीई' (Darii) है और न पक्ष वाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः वह साध्यवाक्य के कारण है, जिसके असत्य सिद्ध किये जाने पर उसका विरुद्ध अर्थात् मूल-निष्कर्ष सत्य होगा।

द्रष्टव्य—तृतीय आकार के संयोगों का प्रतिलोम आकारान्तरण करते समय मूल निष्कर्ष का विरुद्ध नई न्याय-युक्ति का साध्यवाक्य बनाने पर ही प्रथम आकार में विशुद्ध न्याय-युक्ति प्राप्त होती है।

(तीन) चतुर्थ आकार के संयोग

(१) ब्रामान्तीप्

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका विरुद्ध अर्थात् कोई भी 'उ' 'वि'

नहीं है" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल-पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति प्राप्त होती है :

'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है।

[केलारेन्ट (Celarent) के अनुसार, जिसमें 'उ' हेतु है।]

∴कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। (परिवर्तन के द्वारा)।

इसमें तर्कवाक्य "कोई भी 'वि' 'म' नहीं है" मूल साध्यवाक्य का विपरीत (contary) होने के कारण असत्य होगा। यह तर्कवाक्य, जो कि असत्य सिद्ध किया जा चुका है, नये निष्कर्ष का 'परिवर्तित' (Converse) है। अतः उसकी असत्यता का कारण या तो परिवर्तन (Conversion) के नियमों का उल्लंघन है अथवा परिवर्त्य (Convertend) की असत्यता है। परन्तु परिवर्तन के नियमों का पूर्ण रूप से पालन हुआ है। अतः परिवर्त्य अर्थात् नया निष्कर्ष असत्य है।

यदि नया निष्कर्ष असत्य हो, तो इस असत्यता का कारण क्या हो सकता है? तर्क प्रक्रिया में तो कोई अशुद्ध नहीं है क्योंकि वह केलारेन्ट (Celarent) है और पक्षवाक्य भी मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः वह असत्यता नये साध्यवाक्य के कारण ही हो सकती है। साध्यवाक्य को असत्य सिद्ध कर लेने पर, उसका विरुद्ध, अर्थात् मूल-निष्कर्ष सत्य सिद्ध हो जाता है। अतः दी हुई न्याय-युक्ति शुद्ध है।

(२) कामेनेस (Camenes)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ए' : कोई भी 'म' 'उ' नहीं है।
'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है तो उसका विरुद्ध "कुछ 'उ' 'वि' हैं" सत्य होना चाहिए। इसे पक्षवाक्य मानकर तथा मूल साध्यवाक्य को साध्य वाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन सकती है:

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।
'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।
∴'ई' : कुछ 'उ' 'म' हैं। [दारीई (Darii) के अनुसार जिसमें 'वि' हेतु है।]

∴कुछ 'म' है। (परिवर्तन) से।

यह तर्कवाक्य कि "कुछ 'म' 'उ' हैं" असत्य है क्योंकि वह मूल पक्ष-वाक्य का विरुद्ध है। उसकी असत्यता तर्क-प्रक्रिया अर्थात् 'परिवर्तन' (Converse) के कारण नहीं हो सकती क्योंकि उसके सभी नियमों का पालन किया गया है। अतः वह इस आश्रयवाक्य 'कुछ 'उ' 'म' हैं' के कारण है। अतः नई न्याय-युक्ति का निष्कर्ष "कुछ 'उ' 'म' हैं" असत्य है।

यह असत्यता किस कारण है? यह असाध्यवाक्य के कारण नहीं है क्योंकि वह मूल साध्यवाक्य के समान है। और वह तर्क-प्रक्रिया के कारण भी नहीं हो सकती, क्योंकि वह 'दारीई' (Darii) है। अतः यह असत्यता नये पक्षवाक्य के कारण होगी; जिसे असत्य सिद्ध कर देने पर उसका विरुद्ध, अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य सिद्ध हो जाता है।

(३) दीमारीस (Dimaris)

'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं हो, तो उसका विरुद्ध, अर्थात् "कोई भी 'उ' 'वि' नहीं है" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर तथा मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:—

'ए' : कोई भी 'उ' 'वि' नहीं हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ए' : कोई भी 'म' 'वि' नहीं है। [केलारेंट के अनुसार, जिसमें 'उ' हेतु है।]
∴ 'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। (परिवर्तन से)।

नये निष्कर्ष का परिवर्तित (Converse) असत्य है क्योंकि वह मूल साध्यवाक्य का विरुद्ध है। अतः नया निष्कर्ष असत्य है। नये निष्कर्ष की असत्यता नये साध्यवाक्य की असत्यता के कारण होगी क्योंकि तर्क-प्रक्रिया 'केलारेंट' (Celarent) होने के कारण विशुद्ध है और नया पक्षवाक्य मूल पक्षवाक्य के समान है। नया साध्य-वाक्य असत्य होने के कारण, उसका विरुद्ध अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य होगा।

(४) फेसापो (Fesapo)

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

यदि निष्कर्ष सत्य नहीं है, तो उसका विरुद्ध "सव 'उ' 'वि' हैं" सत्य होगा। इसे साध्यवाक्य मानकर और मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन जाती है :

'आ' : सव 'उ' 'वि' हैं।
'आ' : सव 'म' 'उ' हैं।
∴ 'आ' : सव 'म' 'वि' हैं। [वार्बारा (Barbara) के अनुसार, क्योंकि 'उ' हेतु है।]
'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं। (परिवर्तन से)।

अन्तिम तर्कवाक्य, मूल साध्यवाक्य का विरुद्ध होने के कारण, असत्य है। इस असत्य का कारण दोषपूर्ण परिवर्तन (Conversion) नहीं है; क्योंकि परिवर्तन के सभी नियमों का पालन किया गया है। अतः परिवर्त्य (Convertend) "सव 'म' 'वि' हैं" अर्थात् नया निष्कर्ष, असत्य है। यह असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह बार्बारा (Barbara) है, और न पक्षवाक्य के कारण हो सकती है क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः वह नये साध्यवाक्य के कारण होगी। अतः नया साध्यवाक्य असत्य है; इसलिये उसका विरुद्ध, अर्थात् मूल-निष्कर्ष सत्य है।

द्रष्टव्यः—मूल निष्कर्ष का विरुद्ध पक्षवाक्य माना जाता है और उस दशा में भी प्रथम आकार में विशुद्ध न्याय-युक्ति बन सकती है।

(५) 'फ्रेसीसोन्' (Fresison)
'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है।
'ई' : कुछ 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

यदि यह निष्कर्ष सत्य नहीं है तो इसका विरुद्ध अर्थात् "सव 'उ' 'वि' हैं" सत्य होगा। इसको साध्यवाक्य मानकर और मूल पक्षवाक्य को पक्षवाक्य मानकर प्रथम आकार में निम्नलिखित न्याय-युक्ति बन सकती है:

'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं।
'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं। [दारीई (Darii) के अनुसार जिसमें 'उ' हेतु है।]
'ई' : कुछ 'वि' 'म' हैं। (परिवर्तन से)

अन्तिम तर्कवाक्य मूल साध्यवाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य है। उसकी असत्यता परिवर्त्य (Convertend) अर्थात् नये निष्कर्ष के कारण होगी क्योंकि परिवर्तन के सभी नियमों का पालन किया गया

है। अतः नया निष्कर्ष असत्य है। नये निष्कर्ष की असत्यता तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं है, क्योंकि वह 'दारीई' (Darii) है। और न वह नये पक्षवाक्य के कारण हो सकती है, क्योंकि वह मूल पक्षवाक्य के समान है। अतः नया साध्यवाक्य असत्य है; इसलिए उसका विरुद्ध अर्थात् मूल निष्कर्ष सत्य है।

फ्रेज़ीसोन (Fresison). का प्रतिलोम आकारान्तरण इस प्रकार भी हो सकता है कि मूल निष्कर्ष का विरुद्ध (अर्थात् "सब 'उ' 'वि' हैं") को नई न्याय-युक्ति का पक्षवाक्य मान लिया जाय और मूल साध्यवाक्य ('ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है) को साध्यवाक्य मान लिया जाय। इस प्रकार निम्नलिखित न्याय-युक्ति प्रथम आकार में बनती है:—

'ए' : कोई भी 'वि' 'म' नहीं है। (मूल साध्यवाक्य)
'आ' : सब 'उ' 'वि' हैं। (मूल निष्कर्ष का विरुद्ध)
∴'ए' : कोई भी 'उ' 'म' नहीं है। [केलारेन्ट (Celarent) के अनुसार]
'ए' : कोई भी 'म' 'उ' नहीं है। (परिवर्तन से)

यह अन्तिम तर्कवाक्य "कोई भी 'म' 'उ' नहीं है" मूल पक्षवाक्य का विरुद्ध होने के कारण असत्य है। इस असत्यता का क्या कारण हो सकता है? यह दोषपूर्ण परिवर्तन (Conversion) के कारण नहीं हो सकती, अतः ,आश्रयवाक्य "कोई भी 'उ' 'म' नहीं है" असत्य है। यह असत्यता दोषपूर्ण तर्क-प्रक्रिया के कारण नहीं हो सकती क्योंकि वह केलारेन्ट (Celarent) है। और न नये साध्यवाक्य के कारण हो सकती है क्योंकि वह मूल साध्यवाक्य के समान है। अतः मूल पक्षवाक्य असत्य है। अतः मूल निष्कर्ष सत्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मूल निष्कर्ष के विरुद्ध को इच्छानुसार नई न्याय-युक्ति का या तो साध्यवाक्य अथवा पक्षवाक्य बनाया जा सकता है क्योंकि दोनों दशाओं में अन्य आश्रयवाक्य के साथ उसे सम्मिलित कर लेने पर प्रथम आकार में विशुद्ध संयोग प्राप्त हो जाता है।

परिमाणों का सारांश:—

(१) द्वितीय आकार के संयोग तथा कामेनेस् (Camenes) (चतुर्थ आकार) का प्रतिलोम आकारान्तरण मूल निष्कर्ष के विरुद्ध को पक्षवाक्य बनाकर हो सकता है।

(२) तृतीय तथा चतुर्थ आकार के संयोग [कामेनेस् (Camenes) को छोड़कर] का प्रतिलोम आकारान्तरण मूल निष्कर्ष के विरुद्ध को साध्यवाक्य बनाकर किया जा सकता है।

(३) फेसापो) (Fesapo) तथा फ्रेसीसोन् (Fresison) का प्रतिलोम आकारान्तरण मूल-निष्कर्ष के विरुद्ध को साध्यवाक्य अथवा पक्षवाक्य बनाकर किया जा सकता है।

मूल न्याय-युक्ति में कोई भी पद आश्रयों में अनावश्यक रीति से व्याप्त नहीं होता।

§ १५ मूल (Fundamental), निर्बल (Weakened) तथा सबल (Strengthened) न्याय-युक्ति

(क) मूल (Fundamental) तथा अ-मूल (Non-Fundamental) न्याय-युक्ति।

मूल न्याय-युक्ति उसे कहते हैं, जिसमें साध्य तथा पक्ष बिना निकर्ष में व्याप्त हुए आश्रयवाक्यों में व्याप्त नहीं होते तथा हेतु केवल एक बार व्याप्त होता है। अर्थात् **कोई भी पद अनावश्यक रोति से व्याप्त नहीं होता।**

दाराप्ती, फेलाप्तोन, ब्रामान्तीप और फेसापो मूल नहीं है।

न्याय-युक्ति के नियमों के अनुसार हेतु कम से कम एक बार आश्रयवाक्यों में व्याप्त होना चाहिए और कोई भो पद निष्कर्ष में तब तक व्याप्त (distributed) नहीं होना चाहिए जब तक वह आश्रयवाक्यों (Premises) में व्याप्त न हो। यदि हम उन्नीस सिद्ध संयोगों का परीक्षण करें, तो विदित होगा कि तीन संयोगों, यथा—दाराप्ती (Darapti) (तृतीय आकार), फेलाप्तोन (Felapton) (तृतीय आकार) तथा फेसापो (Fesapo) (चतुर्थ आकार) में हेतु दोनों आश्रयवाक्यों में व्याप्त है। और एक संयोग 'ब्रामान्तीप्' (Bramantip) (चतुर्थ आकार) में साध्य (major term) साध्यवाक्य में तो व्याप्त है, परन्तु निष्कर्ष में व्याप्त नहीं है। अतः हम कह सकते हैं कि दाराप्ती (Darapti), फेलाप्तोन (Felapton) तथा फेसापो (Fesapo) में हेतु एक बार अनावश्यक रीति से व्याप्त है और ब्रामान्तोप (Bramantip) में साध्य आश्रय में अनावश्यक रीति से व्याप्त है। अर्थात् इस प्रकार की व्याप्ति निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए आवश्यक नहीं है। यदि दाराप्ती (Darapti) फेलाप्तोन (Felapton) और फेसापो (Fesapo) में हेतु दोनों

आश्रयों में व्याप्त न होकर केवल एक बार व्याप्त होता और यदि ब्रामान्तीप (Bramantip) में साध्य व्याप्त नहीं होता, तो भी वही निष्कर्ष निकल सकते थे।

अतः १९ सिद्ध संयोगों में से १५ तो मूल हैं और ४ (यथा—दाराप्ती, फेराप्तोन, ब्रामान्तीप और फेसापो) अ-मूल (Non-Fundamental) हैं।

(ख) निर्बल (Weakened) तथा अ-निर्बल (Non-Weakened) न्याय-युक्ति

निर्बल न्याय-युक्ति में निष्कर्ष एक विशेष तर्क-वाक्य निकाला जाता है: यद्यपि उन आश्रयवाक्यों की सहायता से एक सामान्य निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

निर्बल न्याय-युक्ति (Weakened Syllogism or Subaltern Mood) उस न्याय-युक्ति को कहते हैं जिसमें निष्कर्ष 'विशेष' (Particular) निकाला जाता है; तथापि उन्हीं आश्रयवाक्यों की सहायता से सामान्य निष्कर्ष निकाला जा सकता था। उदाहरणार्थ 'आ-आ' से 'आ' निष्कर्ष निकलता है। बार्बारा (Barbara) प्रथम आकार में) अब यदि निष्कर्ष 'आ' हो, तो वह 'ई' (I) भी हो सकता है, क्योंकि 'सामान्य' के सत्य में 'विशेष' का सत्य निहित रहता है। इसी प्रकार, जहां निष्कर्ष 'ए' (E) होता है, वहां वह 'ओ' (O) भी हो सकता है। अतः जब कभी भी सामान्य निष्कर्ष निकाला जा सकता है, तो उसका संगत विशेष निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है। अतः जब किसी न्याय-युक्ति में एक विशेष निष्कर्ष निकाला जाय, जब कि सामान्य निष्कर्ष निकल सकता हो, तो ऐसी न्याय-युक्ति को निर्बल कहते हैं। इनमें निष्कर्ष निर्बल होता है।

पांच निर्बल न्याय युक्ति

चारों आकारों में १९ सिद्ध संयोगों में पांच संयोगों के निष्कर्ष सामान्य होते हैं; यथा—बार्बारा(Barbara), केलारेन्ट(Celarent), केसारे (Cesare), कामेस्ट्रेस्, (Comestres) कामेनेस् (Camenes)। इन पांचों न्याय-युक्तियों को निर्बल किया जा सकता है और उन निर्बल न्याय-युक्तियों को बार्बारी (Barbari)–('आ-आ-ई') और केलारेन्ट (Celarent)-('ए-आ-ओ') (प्रथम आकार में), केसारो(Cesaro) -('ए-आ-ओ') तथा कामेस्ट्रोस (Camestros)-('आ-ए-ओ') (द्वितीय आकार में), और कामेनोस(Camenos) ('आ-ए-ओ')

(चतुर्थ आकार में) कहा जा सकता है। तृतीय आकार में निष्कर्ष विशेष होते हैं, अतः तृतीय आकार में निर्बल न्याय-युक्ति नहीं होती।

(ग) सबल तथा अ-सबल न्याय-युक्ति।

सबल न्याय-युक्ति में एक आश्रयवाक्य सामान्य होता है, यद्यपि उसके विशेष होने पर भी वही निष्कर्ष निकलता है।

सबल (Strengthened) न्याय-युक्ति उसे कहते हैं जिसमें एक आश्रयवाक्य अनावश्यक रीति से सबल हो। अर्थात् उसका एक सामान्य आश्रय विशेष हो सकता है और उस दशा में भी वही निष्कर्ष निकलेगा। उदाहरणार्थ **दाराप्ती** (Darapti) को देखिए:

दाराप्ती

'आ' : सब 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

यदि मूल-साध्यवाक्यों के स्थान पर 'आ' के बदले 'ई' (I) तर्क-वाक्य रख दिया जाय, तो भी वही निष्कर्ष निकलेगा। यथा—

'ई' : कुछ 'म' 'वि' हैं।
'आ' : सब 'म' 'उ' हैं।
∴ 'ई' : कुछ 'उ' 'वि' हैं।

इस संयोग को एक विशेष नाम से सम्बोधित किया जाता है। यथा-**दीसामीस** (Disamis)।

इसी प्रकार, यदि मूल-पक्षवाक्य ('आ') के बदले संगत 'ई' (I) तर्कवाक्य ले लिया जाय, तो भी वही निष्कर्ष निकलेगा। उसे **दातीसी** (Datisi) कहेंगे।

हम देखते हैं कि वे न्याय युक्तियां जो कि मूल (Fundamental) नहीं हैं (अर्थात् दाराप्ती, फेलाप्तोन, ब्रामान्तीप और फेसापो), वे सबल हैं। हम दाराप्ती का उदाहरण ऊपर देख चुके हैं। **फेलाप्तोन** (Felapton) (ए-आ-ओ : तृतीय आकार) में साध्यवाक्य अनावश्यक रीति से सबल है और यदि साध्यवाक्य (O) होता, तो भी वही निष्कर्ष निकलता। ('ओ-आ-ओ' । वोकार्दो) इसी प्रकार **ब्रामान्तीप** (Bramantip) ('आ-अ-ई': चतुर्थ आकार) में, साध्यवाक्य 'आ' के बदले 'ई' (I) रखा जा सकता है ('ई-आ-ई' : दीमारीस्) और **फेसापो** (Fesapo) में ('ए-आ-ओ' : चतुर्थ आकार), में, पक्षवाक्य को आ (A) के बदले

"ई' (I) रक्खा जा सकता है ('ए-ई-ओ' : फ़ेसीसोन) और निष्कर्ष वही प्राप्त होता है।

यह बात ज्ञातव्य है कि इन चार संयोगों के अतिरिक्त **कामेनोस (Camenos) ('आ-ए-ओ' : चतुर्थ आकार) को छोड़कर सब निर्बल न्याय-युक्ति** (Subaltern mood) **भी सबल होते हैं।** जहां तक **कामेनोस** (Camenos) का सम्बन्ध है, हम यह नहीं कह सकते कि उसमें कोई आश्रयवाक्य आवश्यकता से अधिक सबल है, क्योंकि यदि सामान्य आश्रयवाक्य के स्थान पर विशेष रक्खा जाय तो कोई निष्कर्ष नहीं प्राप्त होता। यथा—

कामेनोस (Camenos)

'आ' : सब 'वि' 'म' हैं।

'ए' : कोई भी 'य' 'उ' नहीं है।

∴ 'ओ' : कुछ 'उ' 'वि' नहीं हैं।

इसमें यदि हम साध्यवाक्य को 'ई' (I) रक्खें अथवा पक्षवाक्य को 'ए' (E) रक्खें, तो कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा, अतः **कामेनोस** (Camenos) को सबल न्याय-युक्ति नहीं कह सकते।

कामेनोस न तो मूल है और न सबल क्योंकि यद्यपि एक पद अनावश्यक रीति से व्याप्त है, परन्तु किसी भी पक्ष को निर्बल नहीं किया जा सकता।

यह बात द्रष्टव्य है कि **कामेनोस** (Camenos) में, पक्ष 'उ' अनावश्यक रीति से व्याप्त है अर्थात् वह पक्षवाक्य में तो व्याप्त है, परन्तु निष्कर्ष में अव्याप्त है। अतः वह मूल न्याय-युक्ति (Fundamental Syllogism) नहीं है, जिसमें कोई भी पद अनावश्यक रीति से व्याप्त नहीं होना चाहिए। अतः **कामेनोस** (Camenos) **एक मूल न्याय-युक्ति नहीं है, परन्तु उसे सबल न्याय-युक्ति नहीं कहा जा सकता।**

शेष चारों निर्बल न्याययुक्ति अर्थात् **बार्बारी** (Barbari 'आ-आ-ई' प्रथम आकार)' **केलारोन्ट** (Celaront : 'ए-आ-ओ' : प्रथम आकार), '**केसारो**, (Cesaro : 'ए-आ-ओ' : द्वितीय आकार) और **कामेस्ट्रोस** (Camestros : 'आ-ए-ओ' : द्वितीय आकार) सबल न्याय-युक्ति (Strengthened Syllogism) हैं। **बार्बारी** (Barbari) में पक्षवाक्य को निर्बल कर के 'ई' (I)

किया जा सकता है, और निष्कर्ष वही प्राप्त हो जाता है-'आ-ई-ई' प्रथम आकार : दारीई (Darii)। 'केलारोन्ट (Celaront) में पक्षवाक्य निर्बल करके 'ई' (I) किया जा सकता है, और वही निष्कर्ष प्राप्त हो जाता है-'ए-ई-ओ' फेरीयो (Ferio)। केसारो (Cesaro) में, पक्षवाक्य 'ई' (I) हो सकता है और वही निष्कर्ष अर्थात् 'ओ' (O) फलित होता है-'ए-ई-ओ' -फेस्तीनो। तथा कामेस्ट्रोस (Camestros) में पक्षवाक्य 'ओ' (O) हो सकता है, और वही निष्कर्ष प्राप्त होता है। "आ-ओ-ओ"-बारोको।

सबल न्याय-युक्ति आठ हैं।

अतः यदि हम निर्बल न्याय-युक्तियों को भी सम्मिलित कर लें तो आठ सबल न्याय-युक्ति प्राप्त होती है। यथा—

बार्बारी (Barbari), केलारोन्ट (Celaront) प्रथम आकार।

दाराप्ती (Darapti), कामेस्ट्रोस (Camestros) : द्वितीय आकार।

केसारो (Cesaro), फेलाप्तोन (Felapton) : तृतीय आकार।

ब्रामान्तीप (Bramantip), फेसापो (Fesapo) : चतुर्थ आकार।

फिर यदि हम निर्बल न्याय-युक्तियों को भी सम्मिलित कर लें तो अ-मूल (Non-Fundamental) संयोगों की संख्या पांच हैं। यथा—दाराप्ती (Darapti), फेलाप्तोन (Felapton), ब्रामान्तीप (Bramantip), फेसापो (Fesapo) तथा कामेनोस (Camenos)।

अन्त में यह बात द्रष्टव्य है कि एक न्याय-युक्ति को 'सबल' तब कहा जाता है, जब उसका एक आश्रयवाक्य सबल हो। और न्याय-युक्ति को 'निर्बल' तब कहा जाता है जब निष्कर्ष निर्बल हो। सबल न्याय-युक्ति में एक आश्रयवाक्य को निर्बल किया जा सकता है और निर्बल न्याय-युक्ति में सबल किया जा सकता है।

§ १६ शुद्ध हेतुफलाश्रित (Pure Hypothetical) तथा शुद्ध वैकल्पिक (Pure Disjunctive) न्याय-युक्ति

अब तक हमने अपना ध्यान निरपेक्ष न्याय-युक्ति (Categorical Syllogism) तक ही केन्द्रित किया था, जिसमें तीनों घटक तर्कवाक्य निरपेक्ष होते हैं। इसी प्रकार सब घटक तर्कवाक्य हेतुफलाश्रित हो सकते हैं; तब उस न्याय-युक्ति को शुद्ध हेतुफलाश्रित (Pure Hypothetical) कहते हैं। या फिर तीनों घटक तर्कवाक्य वैकल्पिक हो सकते हैं, तब उस न्याय-युक्ति को शुद्ध वैकल्पिक (Pure Disjunctive) कहते हैं।

शुद्ध हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति में तीन हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य होते हैं। हेतुफलाश्रित तर्कवाक्यों में गुण तथा परिमाण का भेद निरपेक्ष तर्कवाक्यों की ही भांति होता है। अतः शुद्ध निरपेक्ष न्याय-युक्ति के अनुरूप ही शुद्ध हेतुफलाश्रित न्याय-युक्तियों के रूप हो सकते हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित शुद्ध हेतु फलाश्रित न्याय युक्ति 'बार्बारा' (Barbara) के संयोग (Mood) में है:— शुद्ध हेतु-फलाश्रित

यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' है।
यदि 'घ' 'ड.' है, तो 'क' 'ख' है।
∴ यदि 'घ' 'ड.' है, तो 'ग' 'घ' है।

शुद्ध वैकल्पिक न्याय-युक्ति में तीनों घटक तर्कवाक्य वैकल्पिक (Disjunctive) होते हैं। यह बात स्मरणीय है कि सब वैकल्पिक तर्कवाक्य स्वीकारात्मक (Affirmative) होते हैं। अतः न्याय-युक्ति के गुण-सम्बन्धी नियम उन पर चरितार्थ नहीं होते। शुद्ध वैकल्पिक न्याय-युक्तियों की संख्या इतनी कम होती है कि उन पर विचार करना व्यर्थ ही है। शुद्ध वैकल्पिक

§ १७ भारतीय न्याय में अनुमान का स्वरूप

अनुमान का शाब्दिक अर्थ पश्चात ज्ञान है अर्थात् किसी बात जो जानने के पश्चात् यदि उसी के आधार पर किसी दूसरी बात का भी ज्ञान हो, तो उसे अनुमान कहते हैं। जैसे यदि दूर पर हम धुंआ उठते हुए देखें और यह समझ लें कि वहां पर अग्नि है, तो यह अनुमान द्वारा अनुमान का स्वरूप

प्राप्त ज्ञान होगा। यहाँ हम अग्नि का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं करते। केवल धुंए का ही हमें प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, परन्तु इस प्रत्यक्ष बात के आधार पर ही एक परोक्ष वस्तु अग्नि का भी ज्ञान हो जाता है। यहां पर परोक्ष वस्तु का ज्ञान एक चिह्न के द्वारा होता है। इस चिह्न को **लिंग** या **हेतु** कहते हैं और इसके द्वारा परोक्ष वस्तु के ज्ञान होने को **लिंग–परामर्श** कहते हैं। इस उदाहरण में 'धुंआ' वह चिह्न है जिसके द्वारा अग्नि के अस्तित्व का ज्ञान हो जाता है। धुंए को प्रत्यक्ष देखकर ही हम अनुमान लगाते हैं कि वहां पर अग्नि भी है। इसी को **परामर्श** कहते हैं। **परामर्श द्वारा प्राप्त ज्ञान को अनुमिति कहते हैं और अनुमिति के कारण को अनुमान कहते हैं।**

लिंग

परामर्श

उदाहरण के लिए, यदि हम सुदूर पर्वत पर धुंआ देखें और उसके आधार पर यह सिद्ध करना चाहें कि पर्वत पर अग्नि है, तो 'अग्नि' **साध्य** है। यह बात हम इसी आधार पर सिद्ध कर पाते हैं कि वहां धुंआ है। धुंआ ही अग्नि का चिह्न या लिंग है। जिस स्थान पर लिंग (अर्थात् धुंआ) है, उसे (अर्थात् पर्वत को) **पक्ष** कहते हैं।

साध्य

पक्ष

हम धुंए को देखकर अग्नि का अनुमान लगाते हैं क्योंकि धुंआ अग्नि का सूचक (लिंग) समझा जाता है। ऐसा समझने का कारण यह है कि जहां-जहां धुंआ देखने में आता है, वहां-वहां अग्नि भी अवश्य दिखलाई पड़ती है। जैसे रसोई घर में जब कभी भी धुँआ दिखलाई पड़ता है, तो वहां अग्नि भी अवश्य होती है और वहां अग्नि नहीं होती तो धुंआ भी नहीं होता। ऐसे निरपवाद उदाहरणों के आधार पर हम एक सामान्य नियम बना लेते हैं कि जहां-जहां धुआ है, वहां-वहां अग्नि होगी। **अग्नि और धुंए के इस नित्य सम्बन्ध को व्याप्ति कहते हैं।**

व्याप्ति

अनुमान के लिए व्याप्ति सम्बन्ध का पता लगाना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि जब तक हमें यह सामान्य नियम न ज्ञात हो कि जहां-जहां धुंआ होता है, वहां-वहां अग्नि होती है, तब तक हम पहाड़ पर धुंए को देखकर यह अनुमान नहीं कर सकते कि वहां पर अग्नि भी है। इसलिए **व्याप्ति-सम्बन्ध को अनुमान का एक आधार-स्तम्भ मानते हैं।** परन्तु केवल व्याप्ति ज्ञान से ही अर्थात् इस बात से कि जहां-जहां धुआ है, वहां

व्याप्ति-सम्बन्ध

वहां अग्नि है, हम यह निष्कर्ष कि 'पर्वत पर अग्नि है' तब तक नहीं निकाल सकते जब तक हमें यह प्रत्यक्ष ज्ञान न हो कि पर्वत पर धुंआ है। अग्नि का अस्तित्व पर्वत पर दिखलाने के लिए हमें अग्नि के सूचक धुंए का होना भी ज्ञात होना चाहिए। (पक्ष) पर्वत में लिंग (धुंए) का पाया जाना **पक्षधर्मता** कहलाता है। पक्षधर्मता का ज्ञान होने से ही अनुमान-संभव हो पाता है। पक्ष-धर्मता

अतः अनुमान के लिए दो बातों का होना अनिवार्य है। प्रथम व्याप्ति-सम्बन्ध का ज्ञान और द्वितीय पक्षधर्मता (अर्थात् पक्ष में लिंग की उपस्थिति) का ज्ञान। **व्याप्त-सम्बन्ध के ज्ञान और पक्षधर्मता ज्ञान दोनों के मिलने से जो विशेष प्रकार का ज्ञान उत्पन्न होता है, उसको परामर्श कहते हैं।** पक्षधर्मता से पक्ष और लिंग के सम्बन्ध का ज्ञान होता है और व्याप्ति ज्ञान से लिंग और साध्य के सम्बन्ध का ज्ञान होता है। इस प्रकार परामर्श में पक्ष, लिंग तथा साध्य तीनों का समन्वय हो जाता है। जब हम यह देखते हैं कि पर्वत पर धुंआ है और साथ-साथ यह भी जानते हैं कि धुंए और अग्नि में व्याप्ति सम्बन्ध है, अर्थात् जहां-जहां धुंआ है, वहां अग्नि है, तो हम सुगमता से कह सकते हैं कि पर्वत और अग्नि में सम्बन्ध है अर्थात् पर्वत पर अग्नि है। अनुमान की दो अनिवार्य आवश्यकतायें: (क) व्याप्ति-सम्बन्ध (ख) पक्षधर्मता

अनुमान के प्रकार

अनुमान के दो स्वरूप हो सकते हैं; (एक) **स्वार्थानुमान** और (दो) **परार्थानुमान**। जब अनुमान स्वयं अपनी संशय-निवृत्ति अर्थात् अपने समझने के लिए किया जाता है, तो स्वार्थानुमान कहते हैं। दूसरों की संशय-निवृत्ति के लिए किया गया अनुमान परार्थानुमान कहलाता है। अनुमान के प्रकार :

(एक) अपनी शंका की निवृत्ति के लिए किया गया स्वार्थानुमान निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है। कोई व्यक्ति रसोईघर, रेल का इंजन आदि को देखकर इस निर्णय पर पहुंचता है कि जहां-जहां धुंआ है, वहां-वहां अग्नि है। धुंए और अग्नि के इस नित्य सम्बन्ध को ग्रहण करने के पश्चात् वह एक पर्वत के समीप पहुंचता है और देखता है (१) स्वार्थानुमान

कि पर्वत पर धुंआ निकल रहा है ? पर्वत पर धुंआ उठते देखकर उसे तुरन्त याद आ जाता है कि धुंए और अग्नि में नित्य-सम्वन्ध है। व्याप्ति के स्मरण-मात्र से, पर्वत पर हेतु को देखकर वह समझ लेता है कि पर्वत पर अग्नि है।

(२) परार्थानुमानः

(दो) परार्थानुमान दूसरों की शंका के समाधान करने के लिए अनुमान होता है। इसलिए परार्थानुमान स्पष्ट तथा तर्कपूर्ण भाषा में किया जाता है। जिस प्रकार स्वार्थानुमान अपनी शंका-निवृत्ति के लिए एक मानसिक प्रक्रिया के समान है, उसी प्रकार परार्थानुमान उसी का युक्तिपूर्ण तथा न्याय संगत भाषा में व्यक्त रूप है, जो दूसरों को समझाने के लिए ठीक हो।

पांच अवयव

परार्थानुमान में पांच वाक्य होते हैं जिन्हें अवयव कहते हैं। परार्थानुमान के पांच अवयव निम्नलिखित हैं——

(१) प्रतिज्ञा (२) हेतु (३) उदाहरण (४) उपनय और (५) निगमन

(१) प्रतिज्ञा

(१) प्रतिज्ञा——जिस बात को सिद्ध करना है, उसका स्पष्ट निर्देश करना प्रतिज्ञा कहलाता है। जैसे यदि सिद्ध करना है कि पर्वत पर अग्नि है तो सबसे पहले हम अपने साध्य-विषय को प्रस्तुत करते हैं कि पर्वत अग्नियुक्ति है।

(२) हेतु

(२) हेतु——पक्ष में साध्य का अस्तित्व दिलाने के लिए जो युक्ति दी जाती है, उसे हेतु कहते हैं। यहां पर उस चिह्न का वर्णन किया जाता है जिसके कारण पक्ष में साध्य का अस्तित्व सिद्ध किया जाता है। जैसे यह कहना "क्योंकि पर्वत धूमयुक्त है" हेतु हुआ।

(३) उदाहरण

(३) उदाहरण——अपने पक्ष के समर्थन में साध्य-विषय के समान उदाहरण देकर साध्य और हेतु में व्याप्ति-सम्बन्ध प्रगट करना ही उदाहरण कहलाता है। हेतु और साध्य का व्याप्ति-सम्बन्ध स्पष्ट करके एक दृष्टान्त द्वारा उसे समझा दिया जाता है। जैसे——"जहां-जहां धूम है, वहां-वहां अग्नि है, जैसे रसोईघर में" यह वाक्य उदाहरण कहलाता है।

(४) उपनय

(४) उपनय——उदाहरण के द्वारा हेतु और साध्य का व्याप्ति-सम्बन्ध व्यक्त करने के पश्चात् अपने पक्ष में उसका अवतरण करना उपनय कहलाता है। उपनय में हम उदाहरण द्वारा

प्रतिपादित सामान्य नियम को अपने एक पक्ष-विशेष के ऊपर घटित करते हैं। उपनय में हम यह स्पष्ट करते हैं कि पर्वत पर भी उसी प्रकार का धुंआ है जैसा कि रसोई घर पर आदि अग्नियुक्त स्थानों में पाया जाता है, अर्थात् पर्वत का धुंआ भी अग्नि का सूचक है। अतः "पर्वत में उसी प्रकार का धूम है" यह उपनय हुआ।

निगमन

(५) **निगमन**—निगमन में यह स्पष्ट कर दिया जाता है कि प्रतिज्ञा की सिद्धि हेतु के द्वारा हो गई अर्थात् पक्ष में साध्य का अस्तित्व सिद्ध हो गया। 'अतएव पर्वत अग्नि युक्त है।' यह वाक्य निगमन का हुआ।

इस प्रकार भारतीय न्याय के परार्थानुमान का स्वरूप निम्नलिखित हुआ—

१. पर्वत अग्नियुक्त है।	प्रतिज्ञा
२. क्योंकि वह धूमयुक्त है।	हेतु
३. जो-जो धूमयुक्त है, वह अग्नियुक्त है। जैसे रसोईघर इत्यादि।	उदाहरण
४. पर्वत भी इसी प्रकार धूमयुक्त है।	उपनय
५. अतएव पर्वत अग्नियुक्त है।	निगमन

अनुमान और न्याययुक्ति की तुलना

भारतीय अनुमान और पाश्चात्य न्याय-युक्ति की तुलना

कुछ विचारकों का मत है कि भारतीय अनुमान के पांच अवयव पाश्चात्य न्यायवाक्य की भांति तीन अवयवों में घटाए जा सकते हैं। भारतीय अनुमान के प्रतिज्ञा-वाक्य और निगमन-वाक्य में कोई अन्तर नहीं होता। इन दोनों में एक बात कही जाती है। अतः निगमन का वाक्य छोड़ा जा सकता है। फिर, हेतु में पक्ष का अस्तित्व बताने के पश्चात् जब हेतु और साध्य का व्याप्ति-संबन्ध प्रतिपादित किया जा चुकता है तब उपनय की भी कोई विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती। अतः नव्य-न्याय के दार्शनिकों ने अनुमान के केवल तीन अवयवों का ही वर्णन किया है। यथा—

१. पर्वत अग्नियुक्त है।

२. क्योंकि धूम युक्त है।

३. जो-जो पदार्थ धूमयुक्त होते हैं, वे अग्नियुक्त होते हैं।

इसी के समान पाश्चात्य न्यायवाक्य का स्वरूप यह होगा —

सब धूमयुक्त पदार्थ अग्नियुक्त हैं।

पर्वत धूमयुक्त पदार्थ है।

अतः पर्वत अग्नियुक्त है।

उपर्युक्त अनुमान एवं न्यायवाक्य का निरीक्षण करने पर विदित होगा कि दोनों क्रियायें समान हैं। केवल उनके वाक्यों के क्रम में अन्तर है। पाश्चात्य न्यायवाक्य में पहले साध्यवाक्य, फिर पक्षवाक्य और अन्त में निष्कर्ष को व्यक्त किया जाता है। भारतीय अनुमान में पहले प्रतिज्ञा (निष्कर्ष), फिर हेतु (पक्षवाक्य) और अन्त में उदाहरण (साध्यवाक्य) को व्यक्त करते हैं।

पाश्चात्य न्यायवाक्य में जिस प्रकार एक या अधिक वाक्यों को लुप्त करके संक्षिप्त न्यायवाक्य (Enthymeme) का उपयोग होता है, उसी प्रकार यहां मीमांसक, बौद्ध, जैन और वेदान्ती दार्शनिक केवल दो ही अवयवों को परार्थानुमान को पूर्ण करने के लिये पर्याप्त समझते हैं।

इस प्रकार भारतीय परार्थानुमान पाश्चात्य न्यायवाक्य से बहुत सी बातों में समानता रखता है किन्तु दोनों क्रियायें बिलकुल एक ही नहीं हैं। भारतीय अनुमान पाश्चात्य न्यायवाक्य की अपेक्षा अधिक स्वाभाविक और व्यावहारिक प्रतीत होता है क्योंकि विचार करते समय हम अधिकतर भारतीय अनुमान के रूप में ही सोचते हैं।

भारतीय न्याय में आगमन और निगमन का भेद नहीं है। भारतीय परार्थानुमान में आगमन और निगमन दोनों का सम्मिश्रण होता है। पाश्चात्य तर्कशास्त्र आगमन और निगमन की अलग-अलग व्याख्या करता है। इस प्रकार, भारतीय परार्थानुमान में आकारगत और वस्तुगत दोनों प्रकार के सत्य निहित हैं जबकि पाश्चात्य न्यायवाक्य का ध्येय केवल आकारगत सत्य का निरूपण होता है। अतः भारतीय अनुमान पाश्चात्य न्यायवाक्य से श्रेष्ठ कहा जा सकता है।

कुछ हल किये हुए अभ्यास

(१) सिद्ध कीजिये कि यदि निष्कर्ष सामान्य (Universal) हो तो हेतु आश्रयवाक्यों में केवल एक बार व्याप्त हो सकता है।

(उ० प्र० १९६८)

उपपत्तिः—यदि निष्कर्ष सामान्य हो, तो वह या तो 'आ' (A) होगा, या 'ए' (E)।

यदि निष्कर्ष 'आ' (A) हो, तो दोनों आश्रय 'आ' होंगे। दोनों आश्रयवाक्य 'आ' होने के कारण आश्रयवाक्यों में केवल दो पद व्याप्त होते हैं। निष्कर्ष 'आ' होने के कारण उसमें व्याप्त होता है। अतः वह पक्षवाक्य में भी होना चाहिए। आश्रयवाक्यों के दोनों व्याप्त पदों में से एक पक्ष होगा। अतः हेतु केवल एक बार व्याप्त होता है।

यदि निष्कर्ष 'ए' (E) हो, तो, एक आश्रयवाक्य 'ए' (E) तथा दूसरा आश्रयवाक्य 'आ' (A) होगा। यदि एक आश्रय वाक्य 'ए' तथा दूसरा 'आ' होगा, तो उन दोनों में तीन पद व्याप्त होंगे। निष्कर्ष 'ए' होने के कारण पक्ष और साध्य दोनों ही निष्कर्ष में व्याप्त होंगे; अतः वे पहले ही आश्रयों में व्याप्त होंगे। आश्रयों के तीनों व्याप्त पदों में से एक तो पक्ष दूसरा साध्य है। अतः हेतु केवल एक बार व्याप्त हो सकता है।

(२) सिद्ध कीजिये कि 'ओ' (O) प्रथम आकार में आश्रयवाक्य नहीं हो सकता।

उपपत्ति—प्रथम आकार में हेतु साध्यवाक्य में उद्देश्य तथा पक्ष-वाक्य में विधेय होता है।

यदि साध्यवाक्य 'ओ' (O) हो, तो पक्षवाक्य 'आ' '(A) होगा तथा निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा। इस प्रकार, हेतु एक बार भी व्याप्त न हो सकेगा। अतः कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा।

यदि पक्षवाक्य 'ओ' (O) हो, तो साध्यवाक्य 'आ' (A) होगा और निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा। निष्कर्ष के 'ओ' (O) होने के कारण उसमें साध्य व्याप्त होगा। साध्यवाक्य के 'आ' (O) होने के कारण, प्रथम आकार में, उसमें साध्य व्याप्त नहीं होगा। अतः कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा।

इस प्रकार 'ओ' (O) प्रथम आकार में न तो साध्यवाक्य और न पक्षवाक्य हो सकता है।

(३) सिद्ध कीजिये कि 'ओ' (O) द्वितीय आकार को छोड़कर किसी भी आकार में पक्षवाक्य नहीं हो सकता।

(क) प्रथम आकार में 'ओ' (O) पक्षवाक्य नहीं हो सकता, क्योंकि जैसा कि प्रश्न (२) में प्रदर्शित कर दिया गया है, ऐसा न करने से अवैध साध्य (Illicit Major) का दोष हो जायगा।

(ख) तृतीय आकार में यदि 'ओ' (O) पक्षवाक्य हो, तो साध्य वाक्य 'आ' (A) होगा, तथा निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा। इस प्रकार निष्कर्ष में साध्य व्याप्त हो जायेगा। अतः वह साध्यवाक्य में भी व्याप्त होना चाहिए। परन्तु साध्यवाक्य 'आ' है; इसलिए उसका विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त नहीं है। अतः तृतीय आकार में 'ओ' (O) को पक्षवाक्य मानने से अवैध साध्य (Illicit Major) का दोष हो जाता है।

(ग) चतुर्थ आकार में यदि 'ओ' (O) पक्षवाक्य हो, तो साध्य-वाक्य 'आ' (A) होगा। अतः उसमें पक्षवाक्य के 'ओ' (O) होने से, हेतु उसमें भी अव्याप्त रहेगा। अतः चतुर्थ आकार में 'ओ' को पक्षवाक्य मानने से 'अव्याप्त-हेतु" (Undistributed Middle) का दोष हो जायगा।

(घ) परन्तु यदि द्वितीय आकार में 'ओ' (O) पक्षवाक्य हो, तो विशुद्ध निष्कर्ष निकल जाता है। पक्षवाक्य 'ओ' (O) होने पर, साध्य 'आ' (A) होगा, तथा निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा। निष्कर्ष में साध्य व्याप्त होगा, जो कि 'आ' (A) साध्यवाक्य का उद्देश्य होने के कारण उसमें भी व्याप्त होगा। हेतु पक्षवाक्य में व्याप्त है। अतः विशुद्ध निष्कर्ष निकल आता है।

अतः 'ओ' (O) द्वितीय आकार को छोड़कर किसी भी आकार में पक्षवाक्य नहीं हो सकता।

(४) सिद्ध कीजिए कि 'ओ' (O) चतुर्थ आकार में कोई आश्रय-वाक्य नहीं हो सकता। (उ. प्र. १९६८)

उपपत्ति---चतुर्थ आकार में हेतु साध्यवाक्य में विधेय तथा पक्ष वाक्य में उद्देश्य होता है। यदि एक आश्रय 'ओ' (O) हो, तो दूसरा आश्रय 'आ' (A) होगा, तथा निष्कर्ष 'ओ' (O) होगा।

यदि 'ओ' (O) साध्यवाक्य हो, तो उसमें साध्य अव्याप्त रहेगा। अतः वह निष्कर्ष में भी व्याप्त नहीं हो सकता। परन्तु निष्कर्ष 'ओ' (O) होने के कारण अपने विधेय (अर्थात् साध्य) को व्याप्त रखता है। अतः अवैध साध्य का दोष हो जायगा।

यदि 'ओ' (O) पक्षवाक्य हो, तो हेतु उसमें अव्याप्त रहेगा। विशुद्ध निष्कर्ष प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वह साध्यवाक्य में व्याप्त हो, परन्तु ऐसा नहीं है। अतः 'ओ' (O) चतुर्थ आकार में कोई आश्रय नहीं हो सकता।

(५) सिद्ध कीजिए कि यदि निष्कर्ष 'आ' (A) हो तो न्याय-युक्ति प्रथम आकार में होगी। (उ. प्र. १९६५)

उपपत्ति---यदि निष्कर्ष 'आ' (A) है, तो दोनों आश्रयवाक्य 'आ' (A) होंगे पक्ष निष्कर्ष में व्याप्त होगा। पक्ष आश्रय में तभी व्याप्त हो सकता है, जब पक्ष पक्षवाक्य का उद्देश्य हो। इस प्रकार हेतु पक्षवाक्य का विधेय होता है। अतः हेतु पक्षवाक्य में व्याप्त नहीं होता। इसलिए उसे साध्यवाक्य में व्याप्त होना पड़ेगा। अतः वह साध्यवाक्य का उद्देश्य होगा।

अतः यदि निष्कर्ष 'आ' (A) हो, तो हेतु साध्यवाक्य का उद्देश्य तथा पक्षवाक्य का विधेय होगा। अर्थात् वह युक्ति प्रथम आकार में होगी।

प्रश्नमाला ११

(१) न्याय-युक्ति किसे कहते हैं ? यह बतलाइए कि वह सान्तरानुमान का एक रूप है तथा निगमनमूलक अनुमान है।

(२) यदि किसी न्याय-युक्ति के आश्रयवाक्य असत्य हों, तो क्या वह तर्क असत्य हो जाता है ? उदाहरण सहित समझाइए।

(३) न्याय-युक्ति की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(४) न्याय-युक्ति में हेतु की क्या उपयोगिता है ? हेतु का कम-से कम एक बार व्याप्त होना क्यों आवश्यक है ? (उ० प्र० १९६४)

(५) प्रथम आकार को 'पूर्ण आकार' क्यों कहते हैं ? अरस्तू के न्याय-युक्ति संबन्धी सिद्धांत (Dictum de omni et nullo) की व्याख्या कीजिए।

(६) न्याय-युक्ति के नियमों को उदाहरण देकर समझाइए। (उ. प्र. १९५९)

(७) आकारान्तरण किसे कहते हैं ? आकारान्तरण का क्या महत्व है ? कामेस्ट्रेस का अनुलोम आकारान्तरण कीजिये (उ. प्र. १९६३)

(८) 'वारोको' तथा 'फेलाप्तोन') का अनुलोम तथा प्रतिलोम दोनों प्रकार से आकारान्तरण कीजिए।

(९) उदाहरण सहित निम्नलिखित की व्याख्या कीजिए:—

(क) अवैध-साध्य (उ. प्र. १९६४) (ख) संदिग्ध हेतु

(ग) आकार (घ) संयोग (उ. प्र. १९५२)।

(१०) सिद्ध कीजिए कि प्रथम आकार में 'ओ' कोई भी आश्रयवाक्य नहीं हो सकता। (उ. प्र. २९५०)

(११) 'आ-ए-ए' किस आकार में विशुद्ध संयोग है ? (केवल न्यायवाक्य के सामान्य नियमों के आधार पर उत्तर दीजिए।) (उ. प्र. १९४८)

(१२) स्वीकारात्मक साध्यवाक्य के साथ पक्षवाक्य का प्रथम आकार में स्वीकारात्मक तथा द्वितीय आकार में निषेधात्मक होना क्यों आवश्यक है ? (उ. प्र. १९४८)

(१३) सिद्ध कीजिए कि 'ओ'-तर्कवाक्य प्रथम आकार में आश्रय की भांति, द्वितीय आकार में साध्यवाक्य की भांति, तृतीय आकार में पक्षवाक्य की भांति तथा चतुर्थ आकार में आश्रय की भांति प्रयुक्त नहीं हो सकता। (उ. प्र. १९४७)

(१४) सिद्ध कीजिए कि 'ई-ए' से किसी भी आकार में विशुद्ध निष्कर्ष नहीं निकलता तथा 'ए-ई' से प्रत्येक आकार में विशुद्ध निष्कर्ष निकलता है। (उ. प्र. १९४८, १९५१)

(१५) आकारान्तरण से आप क्या समझते हैं ? यह कितने प्रकार का होता है। प्रत्येक प्रकार के आकारान्तरण को उदाहरण सहित समझाइए। (उ० प्र० १९५१, १९४८)

(१६) भारतीय न्याय के अनुसार 'अनुमान' की आवश्यक शर्तें कौन-सी हैं ? न्याय-युक्ति तथा अनुमान का अन्तर स्पष्ट कीजिए। (उ. प्र. १९४६, १९५३)

(१७) 'परार्थानुमान' की व्याख्या कीजिए। उसकी अरस्तू की न्याय-युक्ति से तुलना कीजिए। (उ. प्र. १९४८)

(१८ 'स्वार्थानुमान' तथा 'परार्थानुमान' का अन्तर स्पष्ट कीजिए। उदाहरण सहित 'परार्थानुमान' के अवयवों को समझाइए।
(उ. प्र. १९६०, १९५१)

(१९) अनुमान के पांच अवयव कौन-कौन से हैं। उनकी न्याय-युक्ति के तीनों अवयवों से तुलना कीजिए। क्या अवयवों की संख्या कम की जा सकती है ? (उ. प्र. १९५२)

(२०) भारतीय तर्कशास्त्र में अनुमान की प्रकृति क्या है और वह कितने प्रकार का होता है ? (उ. प्र. १९६०)

(२१) स्वार्थ अनुमान, परार्थ अनुमान के अतिरिक्त भारतीय तर्क-शास्त्र में अनुमान के जो और भेद हैं उन्हें उदाहरण सहित स्पष्ट समझा-इए। (उ. प्र. १९६८)

(२२) सिद्ध कीजिए कि न्यायवाक्य में यदि विधेय वाक्य विशेष हो और उद्देश्य वाक्य निषेधात्मक हो तो कोई निष्कर्ष नहीं निकल सकता।
(उ. प्र. १९६६)

(२३) सिद्ध कीजिए कि 'ओ' तर्कवाक्य न्यायवाक्य के केवल द्वितीय तथा तृतीय आकृतियों में ही एक आधार वाक्य हो सकता है ?
(उ. प्र. १९६६)

(२४) न्याययुक्ति का स्वरूप स्पष्ट करते हुए यह बतावें कि उसकी यथार्थता किन बातों पर निर्भर करती हैं। (उ. प्र. १९६८)

(२५) हेतु क्या है ? निर्दोश हेतु के क्या लक्षण हैं ?
(उ. प्र. १९६८)

द्वादश प्रकरण

मिश्र न्याय युक्ति (Mixed Syllogisms)

§१ हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति।
   (क) नियम।
   (ख) दोष।
   (ग) निरपेक्ष न्याय-युक्ति में परिवर्तन।
§२ वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय-युक्ति।
§३ उभयतोपाश (Dilemma)
   (क) उभयतोपाश का स्वरूप।
   (ख) उभयतोपाश के प्रकार।
   (ग) उभयतोपाश का प्रतिक्षेप।
   (घ) उभयतोपाश की शुद्धि की जांच।
      उभयतोपाश की आकारगत विशुद्धि।
      उभयतोपाश की वस्तुगत विशुद्धि।
      प्रश्नमाला १२।

मिश्र-न्याय-युक्ति के तीन प्रकार

मिश्र न्याय-युक्ति उसे कहते हैं जिसके घटक तर्कवाक्य एक से सम्बन्ध के न हों। उसके तीन उप-विभाग हैं, यथा—(१) हेतुफलाश्रित निरपेक्ष (अथवा हेतुफलाश्रित) न्याय-युक्ति, (२) वैकल्पिक-निरपेक्ष (अथवा वैकल्पिक) न्याय-युक्ति तथा (३) उभयतोपाश।

§१ हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति (Hypothetical Categorical Syllogism)

हेतुफलाश्रित निरपेक्ष

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति उस मिश्र न्याय-युक्ति को कहते हैं जिसका साध्यवाक्य हेतुफलाश्रित हो, पक्षवाक्य निरपेक्ष हो तथा निष्कर्ष भी निरपेक्ष हो। इसे साधारणतया हेतु फलाश्रित न्याय-युक्ति (Hypothetical Syllogism) कहते हैं।

नियम। इस प्रकार के अनुमान के निम्नलिखित दो नियम हैं— नियम

(१) पूर्वांग को स्वीकार करने से उत्तरांग को भी स्वीकार किया जा सकता है; परन्तु इसका विलोम सत्य नहीं होता, और,

(ख) उत्तरांग को अस्वीकार करने से पूर्वांग को अस्वीकार किया जा सकता है; परन्तु इसका विलोम सत्य नहीं होता।

पहले प्रकार की न्याय-युक्ति को विधायक या 'विधि-प्रकार' और दूसरे प्रकार की न्याय-युक्ति को विघातक या 'निषेध-प्रकार' कहते हैं। विधायक और विघातक

(१) विधि-प्रकार (Modus Ponens) या विधायक (Constructive)

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति को 'विधि-प्रकार' की अथवा विधायक तब कहते हैं, जब साध्यवाक्य के पूर्वांग को पक्षवाक्य में स्वीकार करने से, साध्यवाक्य के उत्तरांग को निष्कर्ष में स्वीकार कर लेते हैं। यथा— विधायक

उदाहरण

(क) यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' है।
'क' 'ख' है।
∴ 'ग' 'घ' है।

(ख) यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' नहीं है।
'क' 'ख' है।
∴ 'ग' 'घ' नहीं है।

(ग) यदि 'क' 'ख' नहीं है। तो 'ग' 'घ' है।
'क' 'ख' नहीं है।
∴ 'ग' 'घ' है।

(घ) यदि 'क' 'ख' नहीं है। तो 'ग' 'घ' नहीं है।
'क' 'ख' नहीं है।
∴ 'ग' 'घ' नहीं है।

(क) यदि वह आता है, तो मैं जाऊँगा।
वह आता है।
∴ मैं जाऊँगा।

(ख) यदि वर्षा होगी, तो वह नहीं आएगा।
वर्षा हुई।
∴ वह नहीं आएगा।

(ग) यदि वह नहीं आए, तो मैं जाऊँगा।
वह नहीं आया।
∴ मैं जाऊँगा।

(घ) यदि वर्षा नहीं होगी तो फसल नहीं उगेगी।
वर्षा नहीं होगी।
∴ फसल नहीं उगेगी।

(२) निषेध-प्रकार (Modus Tollens) या विघातक (Destructive)

विघातक

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति को निषेध-प्रकार की या विघातक

तब कहते हैं, जब कि साध्यवाक्य के उत्तरांग को पक्षवाक्य में अस्वीकार करने से साध्यवाक्य के पूर्वांग को निष्कर्ष में अस्वीकार किया जा सकता है।

इस प्रकार,

उदाहरण

(क) यदि 'क' 'ख' है, तो
'ग' 'घ' है।
'ग' 'घ' नहीं है।
∴ 'क' 'ख' नहीं है।

(क) यदि वह आता है तो
मैं जाऊँगा।
मैं नहीं जाऊँगा।
∴ वह नहीं आता है।

(ख) यदि 'क' 'ख' है, तो
'ग' 'घ' नहीं है।
'ग' 'घ' है।
∴ 'क' 'ख' नहीं है।

(ख) यदि वर्षा होती है, तो
वह नहीं आयगा।
वह आयगा।
∴ वर्षा नहीं होगी।

(ग) यदि 'क' 'ख' नहीं है,
तो 'ग' 'घ' है।
'ग' 'घ' नहीं है।
∴ 'क' 'ख' है।

(ग) यदि वह नहीं आए,
तो मैं जाऊँगा।
मैं नहीं जाऊँगा।
∴ वह आयगा।

(घ) यदि 'क' 'ख' नहीं है,
तो 'ग' 'घ' नहीं है।
'ग' 'घ' है।
∴ 'क' 'ख' है।

(घ) यदि वर्षा नहीं होती तो
फसल नहीं उगती।
फसल उगती है।
∴ वर्षा होती है।

यह बात ज्ञातव्य है कि 'विधि-प्रकार' या विधायक और निषेध-प्रकार या विघातक रूप पक्षवाक्य या निष्कर्ष के गुण से सम्बन्ध नहीं रखता; उसका सम्बन्ध केवल इस बात से है कि पक्ष वाक्य में हम साध्य-वाक्य के पूर्वांग को स्वीकार करते हैं, अथवा उसके उत्तरांग को अस्वीकार करते हैं : पूर्वांग और उत्तरांग चाहे कुछ भी क्यों न हो।

(ख) दोष (Fallacies)

यदि हम इन नियमों का उल्लंघन कर देते हैं, तो या तो 'उत्तरांग की स्वीकृति' (Affirming the Consequent) का दोष हो जाता है अथवा 'पूर्वांग की अस्वीकृति' (Denying the Antecedent) का दोष उत्पन्न हो जाता है। यथा—

दोष

यदि 'क' 'ख' है, तो	यदि वह आता है तो
'ग' 'घ' है।	मैं जाऊँगा।
'क' 'ख' नहीं है।	वह नहीं आता है।
∴ 'ग' 'घ' नहीं है।	∴ मैं नहीं जाऊँगा।

यह युक्ति दोषपूर्ण है और इसमें पूर्वांग की अस्वीकृति का दोष, है; क्योंकि पक्षवाक्य में हमने पूर्वांग को अस्वीकार कर लिया है और उसी के बल पर उत्तरांग के निष्कर्ष में अस्वीकार कर लिया है। यह नियम-विरुद्ध है। **१. पूर्वांग की अस्वीकृति का दोष**

यदि हम दी हुई हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति के साध्यवाक्य-को निरपेक्ष रूप देकर निरपेक्ष-न्याय-युक्ति बना लें, तो वह इस प्रकार होगी:—

शुद्ध-निरपेक्ष

'आ' : 'क' के 'ख' होने की सब दशाएँ 'ग' के 'घ' होने की दशाएँ हैं।
'ए' : यह दशा 'क' के 'ख' होने की दशा नहीं है।
∴ 'ए' : यह दशा 'ग' के 'घ' होने की दशा नहीं है।

यहां पर हम देखते हैं कि "साध्य 'ग' के 'घ' होने की दशा" साध्य-वाक्य में तो व्याप्त नहीं है, परन्तु निष्कर्ष में व्याप्त है; अतः यहां अवैध-साध्य (Illicit Major) का दोष उत्पन्न हो गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि **'पूर्वांग की अस्वीकृति' का दोष शुद्ध निरपेक्ष न्याय-युक्ति के अवैध-साध्य के दोष के अनुरूप है।**

अब निम्नलिखित युक्ति को देखिए:—

यदि 'क' 'ख' है, तो	यदि वह आता है तो
'ग' 'घ' है।	मैं जाऊँगा।
'ग' 'घ' है।	मैं जाऊँगा।
∴ 'क' 'ख' है।	∴ वह आता है।

इस युक्ति में **'उत्तरांग की स्वीकृति'** का दोष है, क्योंकि पक्षवाक्य में हमने उत्तरांग को स्वीकार किया है, तथा उसी के बल पर निष्कर्ष में पूर्वांग को स्वीकार किया है। यह नियम-विरुद्ध है। **२. उत्तरांग स्वीकृति**

यदि हम दी हुई हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष-न्याय-युक्ति के साध्यवाक्य को निरपेक्ष रूप देकर उसे निरपेक्ष न्याय-युक्ति में परिवर्तित कर दें, तो वह इस प्रकार होगा:—

शुद्ध-निरपेक्ष

'आ: 'क' के 'ख' होने की सब दशायें 'ग' के 'घ' होने की
दशायें हैं।

'आ' : यह दशा 'ग' के 'घ' होने की दशा है।
∴ 'आ' : यह दशा 'क' के 'ख' होने की दशा है।

इसमें हम देखते हैं कि हेतु 'ग' के 'घ' होने की दशा आश्रय-वाक्यों में एक बार भी व्याप्त नहीं है; अतः अव्याप्त-हेतु (Undistributed Middle) का दोष उत्पन्न हो गया है। इस प्रकार 'उत्तरांग की स्वीकृति' का दोष शुद्ध-निरपेक्ष न्याय-युक्ति के अव्याप्त-हेतु के दोष के अनुरूप हैं।

(ग) निरपेक्ष-न्याय-युक्ति में परिवर्तन।

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्तियों को, उनके साध्यवाक्य को निरपेक्ष तर्कवाक्य में बदलकर, निरपेक्ष न्याय-युक्ति का रूप दिया जा सकता है, यथा:—

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष	शुद्ध-निरपेक्ष
(ज) यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' है।	'क' के 'ख' होने की सब दशाएँ 'ग' के 'घ' होने की दशाएँ हैं।
'क' 'ख' है।	यह 'क' के 'ख' होने की दशा है।
∴ 'ग' 'घ' है।	∴ यह 'ग' के 'घ' होने की दशा है।
(२) यदि वह आता है, तो मैं जाऊँगा।	उसके आने की सब दशाएँ मेरे जाने की दशाएँ हैं।
वह आता है।	यह उसके आने की दशा है।
∴ मैं जाऊँगा।	∴ यह मेरे जाने की दशा है।

§ २ वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय-युक्ति (Disjunctive-Categorical Syllogism)

वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय-युक्ति उसे कहते हैं, जिसका साध्यवाक्य वैकल्पिक होता है, पक्षवाक्य निरपेक्ष होता है तथा निष्कर्ष निरपेक्ष होता है। इसे सामान्यतः वैकल्पिक न्याययुक्ति भी कहते हैं।

नियम—इस प्रकार के अनुमान का नियम यह है : वैकल्पिक साध्य वाक्य के किसी एक विकल्प को पक्षवाक्य में अस्वीकार करने से दूसरे विकल्प को निष्कर्ष में स्वीकार किया जा सकता है। एक विकल्प की असत्यता में दूसरे की सत्यता निहित रहती है। यथा:—

नियम : एक की अस्वीकृति ∴ दूसरे की स्वीकृति

(१) या तो 'क' 'ख' है, या 'ग' 'घ' है।
'क' 'ख' नहीं है।
∴ 'ग' 'घ' है।

(२) या तो 'क' 'ख' है, या 'ग' 'घ' है।
'ग' 'घ' नहीं है।
∴ 'क' 'ख' है।

कुछ तर्कशास्त्री, यथा—यूबरवेग (Ueberweg) ऐसे भी हैं, जिनके विचार में उपर्युक्त नियम का विलोम भी सत्य होता है, अर्थात् साध्यवाक्य के एक विकल्प को पक्षवाक्य में स्वीकार करने से दूसरे विकल्प को निष्कर्ष में अस्वीकार किया जा सकता है। यथा—

उपर्युक्त नियम का विलोम कुछ परिस्थितियों में सत्य होता है

(३) या तो 'क' 'ख' है या 'ग' 'घ' है।
'क' 'ख' है।
∴ 'ग' 'घ' नहीं है।

(४) या तो 'क' 'ख' है या 'ग' 'घ' है।
'ग' 'घ' है।
∴ 'क' 'ख' नहीं है।

यह स्पष्ट है कि दूसरा नियम केवल तब ही सत्य होता है जबकि दोनों विकल्प विरुद्ध तर्कवाक्यों के समान परस्पर व्यावर्तक हों। अतः सामान्य नियम के रूप में केवल पहले दो स्वरूप ही (जिनमें किसी एक विकल्प को अस्वीकार करने से दूसरे विकल्प को स्वीकार किया जाय) सत्य होते हैं। तीसरे और चौथे स्वरूप तो केवल विरुद्ध दशाओं में ही सत्य होते हैं।

§ ३ उभयतोपाश (Dilemma)

(क) उभयतोपाश उस मिश्र-अनुमान को कहते हैं, जिसमें साध्य-वाक्य एक संयुक्त हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य होता है, पक्षवाक्य एक वैकल्पिक तर्कवाक्य होता है (जिसके विकल्प साध्यवाक्य के या तो पूर्वांगों को स्वीकार

परिभाषा

करते हैं, या उत्तरांगों को अस्वीकार करते हैं) और निष्कर्ष या तो निरपेक्ष होता है या वैकल्पिक होता है। अब हम उभयतोपाश को उसके अवयव तर्कवाक्यों में विश्लेषित करते हैं :—

(क) साध्य-वाक्य संयुक्त हेतु-फलाश्रित

(क) साध्यवाक्य एक संयुक्त हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य होता है : अर्थात् उसमें दो हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य होते हैं, जो कि परस्पर जुड़े रहते हैं।

(ख) पक्ष-वाक्य वैक-ल्पिक

(ख) पक्षवाक्य एक वैकल्पिक तर्कवाक्य होता है। हेतुफलाश्रित निरपेक्ष न्यायवाक्य के नियमों के अनुसार, साध्यवाक्य के पूर्वांग को पक्ष-वाक्य में स्वीकार करने से, उसके उत्तरांग को निष्कर्ष में स्वीकार किया जा सकता है और इसी प्रकार, साध्यवाक्य के उत्तरांग को पक्षवाक्य में अस्वीकार करने पर, उसके पूर्वांग को निष्कर्ष में अस्वीकार किया जा सकता है। उभयतोपाश तो केवल दो हेतुफलाश्रित निरपेक्ष-न्याय-युक्तियों का योग होता है। अतः वैकल्पिक पक्षवाक्य के दोनों विकल्प साध्यवाक्य के पूर्वांगों को स्वीकार करते हैं अथवा उत्तरांगों को अस्वीकार करते हैं, ताकि निष्कर्ष में पहली दशा में उत्तरांग स्वीकार किये जा सकें एवं दूसरी दशा में पूर्वांग अस्वीकार किये जा सकें।

(ग) निष्कर्ष या तो निरपेक्ष या वैकल्पिक

(ग) निष्कर्ष निरपेक्ष हो सकता है अथवा वैकल्पिक।

साधारण बोलचाल में उभयतोपाश को 'द्विविधा' कहते हैं, और इस शब्द से उसके तार्किक अर्थ का संकेत मिलता है। साधारणतया हम द्विविधा में तब पड़ जाते हैं, जब कि हमारे सामने केवल दो ही मार्ग होते हैं और दोनों में से किसी एक को ग्रहण करने से हम असुविधापूर्ण स्थिति में फंस जाते हैं। वास्तव में हमारी दशा 'इधर कुआं तो उधर खाई' वाली होती है। तर्क में इसी प्रकार दो विकल्पों में से एक को ग्रहण करना पड़ता है और दोनों अवस्थाओं में सिवाय फंसने के और कोई रक्षा का मार्ग नहीं दीखता।

विधायक तथा विघातक

(ख) उभयतोपाश के प्रकार :—

किसी उभयतोपाश में यदि वैकल्पिक पक्षवाक्य हेतुफलाश्रित-साध्य वाक्य के पूर्वांगों को वैकल्पिक रूप में स्वीकार करता है, तो उसे

उभयतोपाश कहते हैं। यदि उभयतोपाश में पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उतरांगों को वैकल्पिक रूप में अस्वीकार करते हैं, तो उसे विघातक कहते हैं। अतः उभयतोपाश का विधायक या विघातक होना पक्षवाक्य पर निर्भर होता है।

शुद्ध तथा मिश्र

विधायक तथा विघातक दोनों प्रकार के उभयतोपाश या तो शुद्ध हो सकते हैं अथवा मिश्र हो सकते हैं। शुद्ध-उभयतोपाश में निष्कर्ष निरपेक्ष होता है और मिश्र उभयतोपाश में निष्कर्ष वैकल्पिक होता है। अतः उभयतोपाश का शुद्ध या मिश्र होना निष्कर्ष पर निर्भर रहता है।

चार प्रकार :

अतः उभयतोपाश के चार प्रकार होते हैं:—

(१) शुद्ध विधायक (Simple Constructive)
(२) मिश्र विधायक (Complex Constructive)
(३) शुद्ध विघातक (Simple Destructive)
(४) मिश्र विघातक (Complex Destructive)

अब हम इन चारों प्रकार के उभयतोपाश के दृष्टांत देखेंगे।

(१) शुद्ध-विधायक उभयतोपाश

शुद्ध विधायक

यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' है; और यदि 'च' 'छ' है, तो 'ग' 'घ' है या तो 'क' 'ख' है या 'च' 'छ' है।

∴ 'ग' 'घ' है।

यदि मनुष्य अपनी इच्छानुसार कार्य करता है, तो उसकी आलोचना होती है; और वह दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है, तो भी उसकी आलोचना होती है।

मनुष्य या तो अपनी इच्छानुसार कार्य करता है, या दूसरों की इच्छा-नुसार।

∴ प्रत्येक दशा में उसकी आलोचना होती है।

यह उभयतोपाश शुद्ध (Simple) है, क्योंकि इसका निष्कर्ष निरपेक्ष है; और यह विधायक (Constructive) है क्योंकि इसके पक्ष-वाक्य में साध्यवाक्य के पूर्वांगों को स्वीकार किया गया है।

अन्य उदाहरण—शुद्ध विधायक उभयतोपाश का एक सुन्दर उदा-हरण इंगलैण्ड के राजा हेनरी सप्तम के अन्यायी अधिकारी एम्पसन

(Empson) का है, जिसके द्वारा वह अपराधियों को राजकोष में अर्थदण्ड के रूप में बड़ी-बड़ी रकमों को देने के लिए बाध्य किया करता था। वह कहता था:—

यदि अपराधी मितव्ययिता से रहता है, तो उसने प्रचुर धन इकट्ठा किया होगा और यदि वह खुले हाथ खर्च करता है तो इससे सिद्ध होता है कि वह धनी है।

किन्तु वह या तो मितव्ययिता से रहता है या खुले हाथ खर्च करता है।

∴ प्रत्येक अवस्था में उसके पास प्रचुर धन है (अर्थात् वह राजकोष में अधिक मात्रा में धन दे सकता है)।

इस तर्क को 'एम्पसन की दुधारी' (Empson's Fork) कहते हैं।

(२) मिश्र-विधायक उभयतोपाश

मिश्र विधायक

यदि 'क' 'ख' है तो 'ग' 'घ' है; और यदि 'च' 'छ' है, तो 'ज' 'झ' है।
या तो 'क' 'ख' है या 'च' 'छ' है।
∴ या तो 'ग' 'घ' है या 'ज' 'झ' है।

इस प्रकार के उभयतोपाश का एक प्रसिद्ध उदाहरण सेनापति उमर खलीफा का है, जो सन् ६४० ईस्वी में अलेक्जेन्ड्रिया के पुस्तकालय के अधीक्षक के समक्ष इस प्रकार रखा गया था:—

यदि पुस्तकें कुरान के अनुकूल हैं, तो वे अनावश्यक हैं, और यदि वे कुरान के अनुकूल नहीं हैं, तो अधर्म फैलानेवाली हैं।
या तो पुस्तकें कुरान के अनुकूल हैं या उसके अनुकूल नहीं हैं।
∴ या तो वे अनावश्यक हैं, या अधर्म फैलानेवाली हैं।

(३) शुद्ध-विघातक उभयतोपाश

शुद्ध विघातक

यदि 'क' 'ख' है तो, 'ग' 'घ' है और यदि 'क' 'ख' है तो 'च' 'छ' है।
या तो 'ग' 'घ' नहीं है, या 'च' 'छ' नहीं है।
∴ 'क' 'ख' नहीं है।

(क) यदि मुझे अपनी योजना पूरी करनी है, तो मुझे अपने विद्यार्थियों को पढ़ाना होगा; और यदि मुझे अपनी योजना पूरी करनी है, तो मुझे अपनी पुस्तक लिखनी है।

या तो मैं अपने विद्यार्थियों को नहीं पढ़ा सकता या मैं अपनी पुस्तक नहीं लिख सकता।

∴ मैं अपनी योजना पूरी नहीं कर सकता।

(ख) इसका एक ऐतिहासिक उदाहरण दार्शनिक जेनो (Zeno) का है, जो अपने उभयतोपाश के द्वारा गति की असम्भवता सिद्ध करना चाहता था। वह इस प्रकार है:—

यदि भौतिक पदार्थ गतिमान है, तो उसे वहीं गतिमान होना चाहिए, जहां वह है अथवा जहां वह नहीं है।

किन्तु भौतिक पदार्थ जहां है, वहां गतिमान नहीं हो सकता और न वहां, जहां वह नहीं है।

∴ एक भौतिक पदार्थ गतिमान नहीं हो सकता। (अर्थात् गति असम्भव है)।

यहां यह बात द्रष्टव्य है कि पक्षवाक्य वैकल्पिक नहीं है। पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उत्तरांगों को वैकल्पिक रूप में नहीं, अपितु एक साथ अस्वीकार करता है। जो कुछ भी विकल्प यहां है, वह साध्यवाक्य के दूसरे भाग में है।

कुछ तर्कशास्त्री यथा— ह्वैटली (Whately), मैन्सल (Mansel), जैवन्स (Jevons) इत्यादि, केवल तीन प्रकार के उभयतोपाश को ही मानते हैं। वे शुद्ध विधायक उभयतोपाश को नहीं मानते।

(४) मिश्र-विघातक उभयतोपाश

यदि 'क' 'ख' है तो 'ग' 'घ' है; और यदि 'च' 'छ' है, तो 'ज' 'झ' है। **मिश्र विघातक**

या तो 'ग' 'घ' नहीं है, या 'ज' 'झ' नहीं है।

∴ या तो 'क' 'ख' नहीं है, या 'च' 'छ' नहीं है।

यदि मनुष्य कर्त्तव्यनिष्ठ है तो वह आदेश का पालन करेगा और यदि वह बुद्धिमान है, तो वह उसे समझेगा।

या तो वह आदेश का पालन नहीं करता है या उसे समझता नहीं है।

∴ या तो वह कर्तव्यनिष्ठ नहीं है या वह बुद्धिमान नहीं है।

अन्य उदाहरण

यदि मनुष्य बुद्धिमान है, तो वह अपने तर्क की व्यर्थता समझ लेगा और यदि वह ईमानदार है, तो वह अपनी गलती मान लेगा।

या तो वह तर्क की व्यर्थता नहीं समझता या समझते हुए भी अपनी गलती नहीं मानता।

∴ या तो बुद्धिमान नहीं है या वह ईमानदार नहीं है।

उभयतोपाश का प्रतिक्षेप

प्रतिक्षेप विरुद्ध उभयतोपाश प्रस्तुत करना

किसी उभयतोपाश के सर्वथा विरुद्ध उसी प्रकार का उभयतोपाश रखकर ठीक उल्टा निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया को उभयतोपाश का प्रतिक्षेप (Rebutting a dilemma) कहते हैं। जब हम किसी उभयतोपाश क प्रतिक्षेप करते हैं, तो हमें साध्यवाक्य के उत्तरांगों को परस्पर बदल देना चाहिये और उनका गुण भी बदल देना चाहिए। यह नियम केवल मिश्र-विघातक उभयतोपाश पर लागू हो सकता है। यह बात ज्ञातव्य है कि केवल अशुद्ध उभयतोपाश का ही प्रतिक्षेप हो सकता है, क्योंकि उसके आश्रयवाक्यों में कुछ दोष होता है। विशुद्ध उभयतोपाश का प्रतिक्षेप नहीं होता।

नियम

अब हम सर्वप्रथम मिश्र विधायक उभयतोपाश के उपर्युक्त सांकेतिक उदाहरण का प्रतिक्षेप करेंगे।

सांकेतिक उदाहरण

यदि 'क' 'ख' है तो 'ग' 'घ' है और 'च' 'छ' है तो 'ज' 'झ' है।
या तो 'क' 'ख' है या 'च' 'छ' है।
∴ या तो 'ग' 'घ' है या 'ज' 'झ' है।

प्रतिक्षेप के बाद यह इस प्रकार का होगा :—

यदि 'क' 'ख' है, तो 'ज' 'झ' नहीं है और यदि 'च' 'छ' है, तो 'ग' 'घ' नहीं है।
या तो 'क' 'ख' है या 'च' 'छ' है।
∴ या तो 'ज' 'झ' नहीं है या 'ग' 'घ' नहीं है।

अब हम कुछ वास्तविक उदाहरण देखेंगे :—

वास्तविक उदाहरण

प्रस्तुत उभयतोपाश

(१) यदि पुस्तकें कुरान के अनुकूल हैं तो वे निरर्थक हैं और यदि वे कुरान के अनुकूल नहीं हैं, तो वे हानिकारक हैं।
या तो पुस्तकें कुरान के अनुकूल हैं या नहीं हैं।
∴ या तो वे निरर्थक हैं या हानिकारक हैं।

प्रतिक्षेप रूप :

यदि पुस्तकें कुरान के अनुकूल हैं, तो वे हानिकारक नहीं हैं और यदि वे कुरान के अनुकूल नहीं हैं तो वे निरर्थक नहीं हैं।
या तो पुस्तक कुरान के अनुकूल हैं या उसके अनुकूल नहीं हैं।
∴ या तो वे हानिकारक नहीं हैं या निरर्थक नहीं हैं।

(२) एथेन्सवासी माता का उभयतोपाशः

यदि तुम न्यायपूर्वक कार्य करोगे तो मनुष्य तुमसे घृणा करेंगे और यदि तुम अन्याय से कार्य करोगे तो देवता तुमसे घृणा करेंगे।

या तो तुम न्यायपूर्वक कार्य करोगे या अन्यायपूर्वक कार्य करोगे।

∴ या तो मनुष्य तुमसे घृणा करेंगे या देवता तुमसे घृणा करेंगे।

पुत्र ने माता के उभयतोपाश का निम्नलिखित प्रकार से प्रतिक्षेप किया :—

यदि मैं न्यायपूर्वक कार्य करूँगा तो देवता मुझसे घृणा नहीं करेंगे और यदि मैं अन्यायपूर्वक कार्य करूँगा, तो मनुष्य मुझसे घृणा नहीं करेंगे।

या तो मैं न्यायपूर्वक कार्य करूँगा या अन्यायपूर्वक कार्य करूँगा।

∴ या तो देवता मुझसे घृणा नहीं करेंगे या मनुष्य मुझसे घृणा नहीं करेंगे।

(३) प्रस्तुत उभयतोपाशः—

यदि मनुष्य अविवाहित है, तो उसकी परवाह करनेवाला कोई नहीं है (अतः दुखी है) और यदि कोई मनुष्य विवाहित है, तो उसे अपनी पत्नी की परवाह करनी होगी (अतः दुखी है)।

या तो मनुष्य अविवाहित है या विवाहित।

∴ या तो उसकी कोई परवाह करनेवाला नहीं है, या उसे अपनी पत्नी की परवाह करनी होगी। (अतः दोनों दशाओं में वह दुःखी है।)

प्रतिक्षेप-रूप :

यदि मनुष्य अविवाहित है, तो उसे अपनी पत्नी की परवाह नहीं करनी होगी (अतः सुखी है); और यदि मनुष्य विवाहित है तो उसकी परवाह करनेवाली उसकी पत्नी है ही (अतः वह सुखी है)।

या तो मनुष्य अविवाहित है या विवाहति।

∴ या तो उसे अपनी पत्नी की परवाह नहीं करनी है या उसकी परवाह करने वाली उसकी पत्नी है। (अतः दोनों दशाओं में वह सुखी है।)

(४) इतिहास में एक प्रसिद्ध उभयतोपाश है, जिसे 'लिटिजिअस' (Litigious) कहते हैं। कहा जाता है कि प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक प्रोटागोरस (Protagoras) ने यूअथलस (Euathlus) को न्याय की शिक्षा इस शर्त पर दी कि आधी फीस तो उसे उसी समय मिलनी चाहिए और आधी पहला मुकदमा जीतने पर। परन्तु यूअथलस ने बहुत दिनों तक कोई मुकदमा ही नहीं लिया और प्रोटागोरस को

उसकी आधी फीस न मिली। अतः प्रोटागोरस ने उस पर अभियोग चलाया और निम्नलिखित उभयतोपाश उसके सामने रक्खा :—

"यदि तुम अभियोग में हार गये तो न्यायालय की आज्ञा से तुम्हें फीस देनी होगी और यदि तुम जीत गये तो तुम्हें अपने वचन के अनुसार फीस देनी होगी।"

उसके योग्य शिष्य ने इस उभयतोपाश का प्रतिक्षेप निम्नलिखित उभयतोपाश से किया—

"यदि मैं अभियोग में हार गया तो अपने वचन के अनुसार फीस नहीं दूंगा और यदि मैं जीत गया तो न्यायालय की आज्ञा से मुझे फीस नहीं देनी होगी।"

उभयतोपाश का परीक्षण

तार्किक दृष्टि में, उभयतोपाश को विशुद्ध तब माना जाता है, जब उसमें आकारगत एवं वस्तुगत दोनों प्रकार का सत्य हो। इस प्रकार उभयतोपाश के नियमों का पालन करना ही पर्याप्त नहीं है, वरन् उभयतोपाश के अवयव-तर्कवाक्यों में वस्तुगत-सत्य भी होना चाहिये।

उभयतोपाश की आकारगत विशुद्धता

उभयतोपाश की आकारगत विशुद्धता हेतुफलाश्रित न्याय-युक्तियों के नियमों का पालन करने में निर्भर है

उभयतोपाश दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्तियों का सम्मिलित रूप होता है। अतः यह ज्ञात करने के लिये कि किसी उभयतोपाश में आकारगत सत्य है या नहीं, हम उसको दो हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति में विश्लेषित कर देते हैं, और तब इस बात का परीक्षण करते हैं कि इस प्रकार की न्याय-युक्ति के नियमों का पालन किया गया है या नहीं। हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति के नियम ये हैं कि यदि पक्षवाक्य में हेतुफलाश्रित साध्यवाक्य के पूर्वांग को स्वीकार करते हैं, तो निष्कर्ष में हम उसके उत्तरांग को स्वीकार कर सकते हैं। परन्तु इसका विलोम सत्य नहीं होता। और यदि हम पक्षवाक्य में हेतुफलाश्रित साध्यवाक्य के उत्तरांग को अस्वीकार करते हैं तो निष्कर्ष में उसके पूर्वांग को अस्वीकार किया जा सकता है। परन्तु इसका विलोम सत्य नहीं होता। यदि उभयतोपाश का विश्लेषण करने पर पता चले कि इन नियमों

का पालन कर लिया गया है, तो उभयतोपाश में आकारगत सत्य है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित शुद्ध-विधायक उभयतोपाश देखिए:—

यदि 'क' 'ख' है तो 'ग' 'घ' है और यदि 'च' 'छ' है तो 'ग' 'घ' है।

या तो 'क' 'ख' है या 'च' 'छ' है।

∴ ग' 'घ' है।

जब हम इस उभयतोपाश का उसके अवयव हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्तियों में विश्लेषण करते हैं, तो वह इस प्रकार होता है:

(१) यदि 'क' 'ख' है, तो 'ग' 'घ' है।
'क' 'ख' है।
∴ 'ग' 'घ' है।

(२) यदि 'च' 'छ' है तो 'ग' 'घ' है।
'च' 'छ' है।
∴ 'ग' 'घ' है।

इन दोनों हेतुफलाश्रित-न्याय-युक्तियों में हम देखते हैं कि पूर्वांगों को पक्षवाक्य में स्वीकार किया गया है और निष्कर्ष में उत्तरांगोंको स्वीकार किया गया है। अतः दिये हुए उभयतोपाश में आकारगत सत्य है।

शुद्ध-विधायक उभयतोपाश का एक वास्तविक उदाहरण देखिए—

यदि कोई मनुष्य अपनी इच्छानुसार कार्य करता है, तो उसकी आलोचना होती है। और—

यदि कोई मनुष्य दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है, तो उसकी आलोचना होती है।—**साध्यवाक्य**।

मनुष्य या तो अपनी इच्छानुसार कार्य करता है अथवा दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है। —**पक्षवाक्य**।

∴ प्रत्येक दशा में उसकी आलोचना होती है। —**निष्कर्ष**

यह उभयतोपाश निम्नलिखित शुद्ध हेतुफलाश्रित निरपेक्ष न्याय-युक्तियों में विश्लेषित किया जा सकता है—

(१) यदि कोई मनुष्य अपनी इच्छानुसार कार्य करता है, तो उसकी आलोचना होती है।

एक मनुष्य अपनी इच्छानुसार कार्य करता है।

∴ उसकी आलोचना होती है।

(२) यदि कोई मनुष्य दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है, तो उसकी आलोचना होती है।

एक मनुष्य दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है।

∴ उसकी आलोचना होती है।

अतः उपर्युक्त उभयतोपाश में आकारगत सत्य है, क्योंकि हमने पक्ष-वाक्यों में पूर्वांगों को स्वीकार करके निष्कर्षों में उत्तरांगों को स्वीकार किया है।

इसी प्रकार, यदि हम मिश्र-विधायक उभयतोपाश, सरल विघातक उभयतोपाश तथा मिश्र-विधायक उभयतोपाश का विश्लेषण करें, तो ज्ञात होगा कि उन सबमें आकारगत सत्य है, क्योंकि हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष-न्याय-युक्ति सम्बन्धी नियमों का पूर्ण पालन किया गया है। यदि इन नियमों का उल्लंघन हो जाय तो उभयतोपाश में आकारगत सत्य नहीं होगा। अतः **उभयतोपाश के आकारगत सत्य का प्रदर्शन उसे उसके अवयव हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्तियों में विश्लेषण करने तथा यह बतलाने में है कि उसके किसी नियम का उल्लंघन नहीं हुआ है।**

उभयतोपाश का वस्तुगत विशुद्धि

उभयतोपाश का शुद्ध होना केवल आकारगत सत्य पर ही निर्भर नहीं रहता, वरन् वस्तुगत सत्य का होना भी आवश्यक है। उभयतोपाश में वस्तुगत सत्य तब होता है जबकि उसके दोनों आश्रयवाक्य वास्तव में सत्य हों। जब साध्यवाक्य के पूर्वांगों और उत्तरांगों का सम्बन्ध वास्तविक होता है, तो साध्यवाक्य में वस्तु सत्य होता है और पक्षवाक्य में वास्तविक सत्य तब होता है, जब उसके विकल्प परस्पर विरोधी होते हैं और उनके अतिरिक्त कोई नहीं होता।

उभयतोपाश का वस्तुगत सत्य

उभयतोपाश में वस्तुगत सत्य तभी होता है जब वह इन सब शर्तों को पूरा करे।

जैवन्स (Jevons) का कहना है कि **"उभयतोपाश सत्य होने की अपेक्षा असत्य अधिक होते हैं ।"** इसका कारण यह है कि ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते हैं, जहां दोनों विकल्प (पक्षवाक्य में) एक दूसरे के सर्वथा विरुद्ध हों। निम्नलिखित उभयतोपाश को देखिए:

यदि शिष्य को पढ़ने में रुचि है, तो उसे प्रोत्साहन की आवश्यकता नहीं; और यदि उसकी पढ़ने से घृणा है तो भी प्रोत्साहन उसके लिए लाभ-प्रद नहीं है।

या तो उसकी पढ़ने में रुचि है या पढ़ने से घृणा है।

∴ प्रोत्साहन या तो उसके लिए अनावश्यक है या लाभप्रद नहीं है ।

इस उभयतोपाश में यह मानना शुद्ध नहीं है कि पक्षवाक्य के दोनों विकल्प, यथा— (१) पढ़ने में रुचि तथा (२) पढ़ने से घृणा ही संभावित विकल्प हैं। ऐसा हो सकता है कि कुछ शिष्य ऐसे हों, जो न तो पढ़ने में रुचि रखते हों ओर न पढ़ने से घृणा करते हों और उनको पुरस्कार के रूप में प्रोत्साहन देना लाभप्रद हो सकता हो। अतः दिया हुआ उभय-तोपाश दोषपूर्ण है, क्योंकि पक्षवाक्य वास्तव में असत्य है। इसी प्रकार यह भी प्रदर्शित किया जा सकता है कि उभयतोपाश इस कारण दोषपूर्ण हो जाता है कि उसका साध्यवाक्य वास्तव में सत्य नहीं होता अर्थात् हेतु-फलाश्रित-न्याय-युक्तियों के पूर्वांग और उत्तरांग का सम्बन्ध वास्तविक नहीं होता।

उभयतोपाश की वस्तुगत असत्यता दो प्रकार से प्रदर्शित की जा सकती हैः— दो प्रकार

(१) साध्यवाक्य (Major Premise) अशुद्ध हो।

उभयतोपाश के साध्यवाक्य में दो हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य होते हैं। यदि परीक्षण के बाद पता चले कि इन हेतुफलाश्रित तर्कवाक्यों के उत्तरांग पूर्वांग से स्वतः फलित नहीं होते, तो स्पष्ट है कि साध्यवाक्य वास्तव में अशुद्ध है। जब आश्रयवाक्य ही अशुद्ध है तो उससे निकाला गया निष्कर्ष भी असत्य होगा। (१) साध्य-वाक्य अशुद्ध हो; अर्थात् पूर्वांग से उत्तरांग स्वतः फलित न हो।

(§३ ख२) में दिए गये मिश्र-विधायक उभयतोपाश के उदा-हरण में उत्तरांग 'वे अनावश्यक हैं' पूर्वांग 'यदि वे कुरान के अनुकूल हैं' से स्वतः फलित नहीं होता क्योंकि इसका कोई कारण समझ में नहीं आता कि कुरान के अनुकूल होने से ही पुस्तकें अनावश्यक हो जायेंगी। इसी प्रकार, दूसरा हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य कि (यदि पुस्तकें कुरान के अनु-कूल नहीं हैं तो वे अधर्म फैलानेवाली हैं' भी वास्तव में असत्य है। यह भी तो संभव हो सकता है कि पुस्तकें कुरान के अनुकूल न होते हुए भी अधर्म फैलाने वाली न हों। अतः उभयतोपाश की असत्यता यह प्रदर्शित करके कि उसका साध्यवाक्य असत्य है, स्पष्ट हो जाती है।

हम जानते हैं कि मनुष्य उभयतोपाश के दो शृंगों के बीच में फँस जाता है। उभयतोपाश की उपमा किसी क्रुद्ध बैल के दो शृंगों से दी जाती है और वह व्यक्ति जिसके समक्ष उभयतोपाश प्रस्तुत किया जाता

हैं, उसके दोनों श्रृंगों के बीच में फँसा हुआ-सा मनुष्य है। इस प्रकार से उभयतोपाश की असत्यता सिद्ध करने की क्रिया 'श्रृंग-निग्रह-विधि' (taking the dilemma by the horns) कहलाती है। वह मनुष्य उभयतोपाश का मुकाबला बैल के सींग पकड़कर करता है तथा यह सिद्ध कर देता है कि उसमें वह बल नहीं, जो कि प्रतीत होता है।

(२) पक्षवाक्य असत्य हो : अर्थात् दोनों विकल्प पूर्ण रूप से विरोधी न हों।

(२) पक्षवाक्य (Minor Premise) वास्तव में मिथ्या हो।

उभयतोपाश का पक्षवाक्य वैकल्पिक तर्कवाक्य होता है। दो विकल्प प्रस्तुत किये जाते हैं और यह मान लिया जाता है कि दोनों विकल्पों में विरोधपूर्ण है; और बीच की कोई अन्य संभावना नहीं है। यदि ऐसा पता चले कि अन्य संभावनाएँ भी हो सकती हैं, जिनकी उपेक्षा कर दी गई है, तो पक्षवाक्य वास्तव में मिथ्या सिद्ध हो जाता है।

§ ३ (ख) में वर्णित शुद्ध विधायक उभयतोपाश के उदाहरण में, पक्षवाक्य में दिए हुए विकल्प 'मनुष्य या तो अपनी इच्छानुसार कार्य करता है या दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है'—परस्पर पूर्ण विरोधी नहीं हैं। यह भी तो संभव हो सकता है कि वह कभी अपनी इच्छानुसार कार्य करे और कभी दूसरों की इच्छानुसार। अतः पक्षवाक्य में दोनों विकल्पों में जो पूर्ण विरोध मान लिया गया है, वह वास्तव में है नहीं।

उभयतोपाश की असत्यता उसके पक्षवाक्य के विकल्पों के सम्बन्ध में यह दिखलाकर कि वे परस्पर पूर्ण अथवा व्यावर्त्तक नहीं हैं, सिद्ध हो जाती है। इस विधि को 'श्रृंग-निर्गमन' (escaping between the horns of a dilemma) कहते हैं।

प्रश्नमाला १२

(१) निम्नलिखित की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए:—

(क) हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति (ख) वैकल्पिक न्याय-युक्ति। एक हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति तथा एक वैकल्पिक न्याय-युक्ति को निरपेक्ष-न्याय-युक्ति में परिवर्तित कीजिए।

(२) हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति के नियमों का वर्णन कीजिए। इन नियमों का उल्लंघन करने से जो दोष उत्पन्न होते हैं, वे निरपेक्ष न्याय-युक्ति के किन दोषों के तुल्य हैं?

(३) मिश्र-न्याय-युक्ति किसे कहते हैं? उसके भिन्न-भिन्न प्रकार कौन-कौन से हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

(४) निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय-युक्तियों को निरपेक्ष न्याय-युक्तियों में रूपान्तरित कीजिए और तब उन निरपेक्ष न्याय-युक्ति की विशुद्धि का परीक्षण कीजिए।

(क) यदि कोई विद्यार्थी अध्ययनशील है, तो वह परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है।
वह परीक्षा में उत्तीर्ण होता है।
∴ वह अध्ययनशील है।

(ख) यदि कोई व्यक्ति अपराधी है तो उसे दण्ड मिलेगा। परन्तु वह अपराधी नहीं है।
∴ उसको दण्ड नहीं मिलेगा।

(५) उभयतोपाश किसे कहते हैं? उदाहरण देकर यह बतलाइए कि उभयतोपाश की सत्यता की जांच कितने प्रकार से हो सकती है? (उ. प्र. १९५३, १९६०) उभयतोपाश का प्रतिक्षेप कैसे होता है? उदाहरण दीजिए। (उ. प्र. १९६३)

(६) निम्नलिखित युक्ति का परीक्षण कीजिए:—
यदि स्त्रियों को मताधिकार दे दिया जाय तो वे घर की उपेक्षा करेंगी। यदि उन्हें मताधिकार नहीं दिया जाय, तो वे पुरुषों को शांति से नहीं रहने देंगी। अतः प्रत्येक दशा में स्त्रियां परेशानी पैदा करेंगी।
(उ. प्र. १९५१)।

(७) यह प्रदर्शित करने के लिये कि "अच्छे शासन के लिये स्वतंत्र प्रेस का होना आवश्यक है" एक उभयतोपाश का निर्माण कीजिए। फिर उसका प्रतिक्षेप कीजिए। यह भी बतलाइए कि अन्य किन विधियों से उसका प्रतिक्षेप हो सकता है? अपने उत्तर की उदाहरणों से पुष्टि-कीजिए। (उ. प्र. १९५०)

(८) उभयतोपाश सत्य होने की अपेक्षा प्रायः असत्य ही होता है। ऐसा क्यों है? (उ. प्र. १९५९)

त्रयोदश प्रकरण

संक्षिप्त न्याय-युक्ति (Enthymeme)

संक्षिप्त न्याय-युक्ति

§ १ संक्षिप्त न्याय-युक्ति (Enthymeme)

यदि किसी न्याय-युक्ति के कुछ अवयव व्यक्त न किये जायें (अर्थात् लुप्त रहें) तो उसे संक्षिप्त न्याय-युक्ति कहते हैं।

पूर्णरूप से व्यक्त करने पर न्याय-युक्ति में तीन तर्कवाक्य होते हैं यथा-साध्यवाक्य, पक्षवाक्य तथा निष्कर्ष। साधारण युक्तियों में न्याय-युक्ति का प्रयोग कदाचित् ही उसके तार्किक रूप में किया जाता है। वास्तव में तर्क-विद्या के ग्रन्थों के बाहर पूर्ण रूप से व्यक्त न्याय-युक्ति कहीं नहीं मिलती। मनुष्य की ऐसी प्रवृत्ति होती है कि वह स्पष्ट रूप से केवल उतना ही कहता है, जितना कि स्पष्टता के लिये नितान्त आवश्यक हो। पूर्णरूपेण व्यक्त न्याय-युक्ति व्यर्थ का पांडित्य-प्रकाशन प्रतीत होती है। अतः न्याय-युक्ति प्रायः जिन साधारण रूपों में पायी जाती है, उनमें संक्षिप्त न्याय-युक्ति मुख्य है; इनमें न्याय-युक्ति के कुछ स्पष्ट अवयव व्यक्त नहीं किये जाते। अतः संक्षिप्त न्याय-युक्ति का अर्थ अपूर्ण न्याय-युक्ति है।

चार श्रेणी

प्रथम श्रेणी : साध्यवाक्य लुप्त

संक्षिप्त न्याय-युक्ति चार श्रेणियों (orders) की होती है :

(क) प्रथम श्रेणी की संक्षिप्त न्याय-युक्ति (Of the first order) उसे कहते हैं जिसमें पक्षवाक्य तथा निष्कर्ष तो व्यक्त हो, परन्तु साध्यवाक्य लुप्त हो। यथा—"सुकरात मर्त्य है क्योंकि वह मनुष्य ही तो है!"

इसको पूर्णरूप से न्याय-युक्ति के रूप में व्यक्त करने पर इस प्रकार कहेंगे:—

सब मनुष्य मर्त्य है।

सुकरात एक मनुष्य है।

∴ सुकरात मर्त्य है।

उपर्युक्त उदाहरण में, साध्यवाक्य 'सब मनुष्य मर्त्य हैं' लुप्त है। अतः यह प्रथम श्रेणी की संक्षिप्त न्याय-युक्ति हुई।

(ख) द्वितीय श्रेणी की संक्षिप्त न्याय-युक्ति (Of the second order) उसे कहते हैं जिसमें साध्यवाक्य और निष्कर्ष तो व्यक्त हों, पक्षवाक्य लुप्त हो। यथा—'सुकरात मर्त्य है, क्योंकि सब मनुष्य मर्त्य हैं।' इस उदाहरण में पक्षवाक्य 'सुकरात मनुष्य हैं' लुप्त है।

द्वितीय श्रेणी: पक्षवाक्य लुप्त

(ग) तृतीय श्रेणी की संक्षिप्त न्याय-युक्ति (Of the third order) उसे कहते हैं जिसमें दोनों आश्रयवाक्य तो व्यक्त हों, परन्तु निष्कर्ष लुप्त हो। यथा—'सब मनुष्य मर्त्य हैं' और 'सुकरात भी तो एक मनुष्य है।' स्पष्ट है कि इसमें निष्कर्ष 'सुकरात मर्त्य है' लुप्त हो गया है।

तृतीय श्रेणी: निष्कर्ष लुप्त

(घ) चतुर्थ श्रेणी की न्याय-युक्ति (Of the fourth order) उसे कहते हैं जब कि एक ही तर्कवाक्य में सम्पूर्ण न्याय-युक्ति का बल हो। कभी-कभी बातचीत में ऐसा होता है कि केवल एक ही वाक्य (कोई-सा आधार वाक्य अथवा निष्कर्ष) व्यक्त किया जाता है और अन्य भाग लुप्त कर दिये जाते हैं; क्योंकि वे इतने स्पष्ट होते हैं कि सन्दर्भ से स्वयं ही जान लिये जाते हैं। उदाहरणार्थ, जब शेक्सपीयर ने कहा, "निर्बलता, तेरा नाम स्त्री है"! (Frailty, thy name is woman!), तो यह वाक्य ही सम्पूर्ण न्याय-युक्ति का बल रखता है। इसका पूर्णरूप इस प्रकार होगा:

चतुर्थ श्रेणी: केवल एक ही तर्कवाक्य व्यक्त होता है।

सब स्त्रियां निर्बल होती हैं।
जर्ट्रूद एक स्त्री है।
∴ जर्ट्रूद निर्बल है।

इस वाक्य को स्पष्ट करने पर यह प्रतीत होता है कि शेक्सपीयर हेमलेट की मां (जर्ट्रूद) की ओर इशारा कर रहा था। प्रायः यह देखा जाता है कि जब हम किसी व्यक्ति के निधन पर शोक प्रकट करने के लिए जाते हैं, तो कहते हैं, 'हाय, मनुष्य मर्त्य ही तो है!' इसका स्पष्ट अर्थ यही है कि अन्ततः मनुष्य को मरना अवश्य है। इसी प्रकार यदि कोई न्यायाधीश गलती करता है तो हम कहते हैं: 'आखिरकार न्यायाधीश मनुष्य ही

तो है !' अथवा "गलती करना मनुष्य का स्वभाव है।" इत्यादि। इन सब वाक्यों को पूर्ण न्याय-युक्ति के रूप में रखकर इनकी अन्तर्निहित शक्ति को प्रकट किया जा सकता है।

प्रश्नमाला १३

(१) संक्षिप्त न्याय-युक्ति से आप क्या समझते हैं ? उसकी विभिन्न श्रेणियों को स्पष्ट कीजिए तथा प्रत्येक का उदाहरण दीजिए।

चतुर्दश प्रकरण

संयुक्त न्याय-युक्ति अथवा युक्तिमाला
(Compound Syllogisms or Trains of Reasoning)
प्रगामी (Progressive तथा प्रतीयगामी (Regressive)

§ १ प्रगामी (Progressive) तथा प्रतीयगामी (Regressive) युक्तिमाला ।

युक्तिमाला दो या उससे अधिक न्याय-युक्तियों की ऐसी शृंखला को युक्तिमाला कहते हैं, जिनका पारस्परिक सम्बन्ध इस प्रकार का होता है कि अन्त में उनसे एक ही निष्कर्ष प्राप्त होता है ।

(१) सब 'ख' 'ग' हैं ।
सब 'क' 'ख' हैं ।
∴ सब 'क' 'ग' हैं ।
(२) सब 'ग' 'घ' हैं ।
सब 'क' 'ग' हैं ।
∴ सब 'क' 'घ' हैं ।
(३) सब 'घ' 'ड.' हैं ।
सब 'क' 'घ' हैं ।
∴ सब 'क' 'ड.' हैं ।
(४) सब 'ड.' 'च' हैं ।
सब 'क' 'ड.' हैं ।
∴ सब 'क' 'च' हैं ।

इस उदाहरण में चार न्याय-युक्तियां इस प्रकार सम्बन्धित हैं कि एक का निष्कर्ष दूसरे का आश्रय-वाक्य बन जाता है और अन्त में सब " 'क' 'च' हैं" निष्कर्ष बन जाता है । इसको संयुक्त न्याय-युक्ति (Polysyllogism) अथवा युक्तिमाला कहते हैं ।

संयुक्त न्याय-युक्ति में जिस न्याय-युक्ति का निष्कर्ष दूसरी न्याय-युक्ति का आश्रयवाक्य बन जाता है, वह दूसरे के सम्बन्ध में पूर्व-न्याय-

युक्ति (Prosyllogism) कहलाती है; और वह न्याय-युक्ति जिसका एक आश्रयवाक्य अन्य न्याय-युक्ति का निष्कर्ष होता है, दूसरी के सम्बन्ध में उत्तर-न्याय-युक्ति (Episyllogism) कहलाती है।

पूर्व न्याय-युक्ति तथा उत्तर न्याय-युक्ति परस्पर सापेक्ष हैं।

यह बात स्पष्ट है कि **'पूर्व-न्याय-युक्ति'** तथा **'उत्तर-न्याय-युक्ति'** **सापेक्ष पद हैं।** विभिन्न न्याय-युक्तियों के सम्बन्ध में एक ही न्याय-युक्ति पूर्व न्याय-युक्ति तथा उत्तर-न्याय-युक्ति दोनों ही हो सकती है। उपयुक्त उदाहरण में दूसरी न्याय-युक्ति पहली न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में उत्तर-न्याय-युक्ति है; तथा तीसरी न्याय-युक्ति के संबंध में पूर्व-न्याय-युक्ति है। इसी प्रकार तीसरी न्याय-युक्ति दूसरी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में उत्तर न्याय-युक्ति है तथा चौथी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में पूर्व न्याय-युक्ति है।

उत्तरोन्मुखी युक्तिमाला (पूर्व-न्याय-युक्ति से उत्तर न्याय-युक्ति की ओर)

उपर्युक्त न्याय-युक्ति के उदाहरण में हम देखते हैं कि पहली न्याय-युक्ति दूसरी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में पूर्व-न्याय-युक्ति है दूसरी न्याय-युक्ति तीसरी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में पूर्व-न्याय-युक्ति है; तीसरी न्याय-युक्ति चौथी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में पूर्व न्याय-युक्ति है। अतः यह न्याय-युक्ति माला पूर्व-न्याय-युक्ति से उत्तर-न्याय-युक्ति की ओर हो रही है। ऐसी युक्तिमाला को **प्रगामी** (Progressive) अथवा **उत्तरोन्मुखी** (Episyllogistic) अथवा **संश्लेषणात्मक** (Synthetic) कहते हैं। अतः **प्रगामी युक्तिमाला दो या अधिक न्याय-युक्ति के संयोग को कहते हैं, जिसमें हम पूर्व-न्याय-युक्ति से उत्तर-न्याय-युक्ति की ओर अग्रसर होते हैं।**

पूर्वोन्मुखी युक्तिमाला (उत्तरन्याय-युक्ति से पूर्व न्याय-युक्ति की ओर)

दूसरी ओर यदि युक्तिमाला उत्तर-न्याय-युक्ति से प्रारम्भ होती है तथा पूर्व-न्याय-युक्ति की ओर अग्रसर होती है तो उसे प्रतीयगामी (Regressive) पूर्वोन्मुखी (Prosyllogistic) अथवा विश्लेषणात्मक (Analytic) युक्तिमाला कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण को यदि उल्टी दिशा में देखें तो प्रतीयगामी युक्तिमाला बन जायगी। इस प्रकार

(१) सब 'क' 'च' हैं। . . . .
सब 'ड' 'क' हैं, तथा . . . .
सब 'क' 'ड' हैं।

(२) सब 'क' 'ड.' हैं।
सब 'घ' 'ड.' हैं, तथा
∴ सब 'क' 'घ' हैं।
(३) सब 'क' 'घ' हैं।
सब 'ग' 'घ' हैं, तथा
∴ सब 'क' 'ग' हैं।
(४) सब 'क' 'ग' हैं।
सब 'ख' 'ग' हैं, तथा
∴ सब 'क' 'ख' हैं।

इस उदाहरण में पहली न्याय-युक्ति दूसरी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में उत्तर-न्याय-युक्ति है क्योंकि पहले का एक आधारवाक्य, यथा—"सब 'क' 'ड़' हैं" दूसरे का निष्कर्ष बन जाता है। इसी प्रकार दूसरी और तीसरी न्याय-युक्ति क्रमशः तीसरी और चौथी न्याय-युक्ति के सम्बन्ध में उत्तर-न्याय-युक्ति है। अतः यहां तर्कमाला उत्तर-न्याय-युक्ति से पूर्व-न्याय-युक्ति की दिशा में अग्रसर होती है; अतः प्रतीयगामी, पूर्वोन्मुखी अथवा विश्लेषणात्मक कहलाती है।

प्रश्नमाला १४

(१) सरल न्याय-युक्ति तथा संयुक्त न्याय-युक्ति का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(२) युक्तिमाला से क्या समझते हैं? एक वास्तविक उदाहरण दीजिए। सूत्रात्मक उदाहरण देकर प्रगामी एवं प्रतीयगामी युक्तिमाला का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(३) पूर्व-न्याय-युक्ति तथा उत्तर-न्याय-युक्ति से क्या तात्पर्य है?

पंचदश प्रकरण

संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला (Sorites) तथा संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला (Epicheirema)

§ 1 संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला (Sorites)

संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला

संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला न्याय-युक्ति का वह रूप है जिसमें पूर्व-न्याय-युक्तियों के सब निष्कर्ष (तथा उत्तर-न्याय-युक्तियों के संगत आश्रय) लुप्त होते हैं।

संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला पूर्व-न्याय-युक्ति से उत्तर-न्याय-युक्ति की ओर अग्रसर होती है। परन्तु पूर्व-न्याय-युक्ति तथा उत्तर-न्याय-युक्ति पूर्णरूपेण व्यक्त नहीं होती क्योंकि इसमें पूर्वन्याय-युक्तियों के निष्कर्ष एवं उत्तर-न्याय-युक्तियों के संगत आश्रय व्यक्त नहीं किये जाते। अतः संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला संक्षिप्त-न्याय-युक्ति-माला होती है। यथा—

सब 'क' 'ख' हैं।
सब 'ख' 'ग' हैं।
सब 'ग' 'घ' हैं।
सब 'घ' 'ङ' हैं।
सब 'ङ' 'च' हैं।
∴ सब 'क' 'च' हैं।

सूत्रात्मक उदाहरण

इसे पूर्ण रूप से व्यक्त करने पर यह युक्तिमाला इस प्रकार होगी—

(१) सब 'ख' 'ग' हैं।
सब 'क' 'ख' हैं।
∴ सब 'क' 'ग' हैं।

(२) सब 'ग' 'घ' हैं।
सब 'क' 'ग' हैं।
∴ सब 'क' 'घ' हैं।

(३) सब 'घ' 'ङ.' हैं।
सब 'क' 'घ' हैं।
∴ सब 'क' 'ङ.' हैं।

(४) सब 'ङ' 'च' हैं।
∴ सब 'क' 'ङ.' हैं।
सब 'क' 'च' हैं।

स्पष्ट है कि वे तर्कवाक्य (मोटे अक्षरों में लिखे हुए) जो कि पूर्व-न्याय-युक्तियों के निष्कर्ष तथा संगत उत्तर-न्याय-युक्तियों के आश्रय हैं, लुप्त कर दिये गये हैं।

§२ संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला के प्रकार

संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला दो प्रकार की होती है—यथा,

(१) अरस्तू की तथा (२) गोक्लिनिअस की।

(१) अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला (Aristotelian Sorites उस संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला को कहते हैं, जिसमें पूर्व न्याय-युक्ति के निष्कर्ष, जो कि लुप्त हों, संगत उत्तर-न्याय-युक्ति के पक्षवाक्य बनते हैं। यथा,

अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में, लुप्त निष्कर्ष अगली न्याय-युक्ति के पक्षवाक्य बनते हैं।

सूत्रात्मक उदाहरण	वास्तविक उदाहरण
सब 'क' 'ख' हैं।	चेतक एक घोड़ा है।
सब 'ख' 'ग' हैं।	एक घोड़ा एक चतुष्पद है।
सब 'ग' 'घ' हैं।	एक चतुष्पद एक जन्तु है।
सब 'घ' 'ङ.' हैं।	एक जन्तु एक पदार्थ है।
सब 'ङ.' 'च' हैं।	∴ चेतक एक पदार्थ है।
∴ सब 'क' 'च' हैं।	

यदि हम उपर्युक्त संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला को पूर्णरूप से व्यक्त करें तो पता चलेगा कि पूर्व-न्याय-युक्ति के लुप्त निष्कर्ष उत्तर-न्याय-युक्ति के पक्षवाक्य बनते हैं। सूत्रात्मक उदाहरण को पिछले खण्ड में पूर्णरूप

से व्यक्त किया जा चुका है। वास्तविक उदाहरण का विस्तारित रूप निम्नलिखित होगा:—

(१) सब घोड़े चतुष्पद हैं।
चेतक एक घोड़ा है ।
∴ चेतक एक चतुष्पद है।

(२) सब चतुष्पद जन्तु हैं।
चेतक एक चतुष्पद है।
∴ चेतक एक जन्तु है।

(३) सब जन्तु पदार्थ हैं।
चेतक एक जन्तु है।
∴ चेतक एक पदार्थ है।

[गो]क्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में लुप्त निष्कर्ष साध्यवाक्य [ब]नते हैं।

(२) गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला (Goclenian Sorites) उस संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला को कहते हैं, जिसमें पूर्व-न्याय-युक्ति का लुप्त निष्कर्ष उत्तर-न्याय-युक्ति का साध्यवाक्य बनता है। यथा—

सूत्रात्मक उदाहरण	वास्तविक उदाहरण
सब 'ङ.' 'च' हैं।	एक जन्तु एक पदार्थ है।
सब 'घ' 'ङ.' हैं।	एक चतुष्पद एक जन्तु है।
सब 'ग' 'घ' हैं।	एक घोड़ा एक चतुष्पद है।
सब 'ख' 'क' हैं।	चेतक एक घोड़ा है।
∴ सब 'क' 'च' हैं।	∴ चेतक एक पदार्थ है।

यदि हम उपर्युक्त संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला को पूर्ण रूप से व्यक्त करें, तो पता चलेगा कि पूर्व-न्याय-युक्ति के लुप्त निष्कर्ष संगत उत्तर-न्याय-युक्ति के साध्य-वाक्य बनते हैं। उपर्युक्त सूत्रात्मक उदारहरण को विस्तारित करके इस प्रकार व्यक्त किया ज़ा सकता है।

(१) सब 'ङ.' 'च' हैं।
सब 'घ' 'ङ.' हैं।
∴ सब 'घ' 'च' हैं।

(२) सब 'घ' 'च' हैं।
सब 'ग' 'घ' हैं।
∴ सब 'ग' 'च' हैं।

(३) सब 'ग' 'च' हैं।
सब 'ख' 'ग' हैं।
∴ सब 'ख' 'च' हैं।

(४) सब 'ख' 'च' हैं।
सब 'क' 'ख' हैं।
सब 'क' 'च' हैं।

इसी प्रकार वास्तविक उदाहरण को इस रीति से पूर्ण रूप में व्यक्त किया जा सकता है।

(१) सब जन्तु पदार्थ हैं।
सब चतुष्पद जन्तु हैं।
∴ सब चतुष्पद पदार्थ हैं।

(२) सब चतुष्पद पदार्थ हैं।
सब घोड़े चतुष्पद हैं।
∴ सब घोड़े दार्थ हैं।

(३) सब घोड़े पदार्थ हैं।
चेतक एक घोड़ा है।
∴ चेतक एक पदार्थ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्ति-माला में पूर्व-न्याय-युक्ति के निष्कर्ष उत्तर-न्याय-युक्ति के साध्य-वाक्य बनते हैं।

दोनों प्रकारों की तुलना

यदि हम संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला के दोनों प्रकारों की तुलना करें, तो ज्ञात होता है कि दोनों के आश्रयवाक्यों तथा निष्कर्ष समान होते हैं। परन्तु उनमें निम्नलिखित भेद होते हैं:

(क) साध्यः—अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में अंतिम आश्रयवाक्य का विधेय साध्य (Major term) होता है, परन्तु गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला पहले आश्रयवाक्य का विधेय साध्य होता है।

(ख) पक्षः—अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में प्रथम

आश्रयवाक्य का उद्देश्य पक्ष होता है तथा गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में अन्तिम आश्रयवाक्य का उद्देश्य पक्ष होता है।

(ग) **लुप्त निष्कर्ष**—अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में पूर्व-न्याय-युक्तियों के लुप्त निष्कर्ष संगत उत्तर-न्याय-युक्तियों के पक्षवाक्य बनते हैं, तथा गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में लुप्त निष्कर्ष उत्तर-न्याय-युक्ति के साध्य-वाक्य बनते हैं।

(घ) **घटक-आश्रयवाक्यः**—अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में, पहला आश्रयवाक्य पक्षवाक्य होता है तथा अन्य सब आश्रयवाक्य साध्य-वाक्य होते हैं। गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में, पहला आश्रयवाक्य साध्यवाक्य होता है तथा अन्य सब आश्रयवाक्य पक्ष-वाक्य बनते हैं।

टिप्पणीः—दोनों प्रकार प्रथम आकार में हैं।

कार्वेथ रीड (Carveth Read) का कहना है कि प्रथम दृष्टि में अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला चतुर्थ आकार के क्रम में अग्रसर होती हुई प्रतीत होती है। पूर्वकथित वास्तविक उदाहरण में 'हेतु' 'घोड़ा' प्रथम आश्रयवाक्य का विधेय है तथा द्वितीय आश्रयवाक्य में उद्देश्य है। किन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं, क्योंकि उस दशा में निष्कर्ष एक विशेष तर्कवाक्य होता (ब्रामान्तीप) और अन्तिम निष्कर्ष यह हो जाता : 'कुछ पदार्थ चेतक हैं।' परन्तु अन्तिम निष्कर्ष यह है: 'चेतक एक पदार्थ है।' इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला के आश्रयवाक्य यद्यपि चतुर्थ आकार में अग्रसर होते हुए प्रतीत होते हैं, परन्तु वास्तव में उन्हें प्रथम आश्रयवाक्य को पक्षवाक्य बनाकर प्रथम आकार के क्रम में रखना पड़ता है। गोक्लिनिअस की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में आश्रयवाक्य प्रथम आकार के क्रम में ही व्यक्त होते हैं। **तार्किक दृष्टिकोण से इन दोनों प्रकारों में कोई भी अन्तर नहीं है।** परन्तु गोक्लिनिअस का प्रकार अरस्तू के प्रकार से श्रेष्ठ हैं, क्योंकि उसमें आश्रयवाक्य प्रथम आकार के क्रम में स्वयं ही दिए हुए हैं। कार्वेथ रीड का सुझाव है कि अरस्तू का प्रकार या तो तर्कविद्या की पाठ्यपुस्तकों से निकाल दिया जाना चाहिए, अथवा वह चतुर्थ आकार का समझा जाना चाहिए, ताकि निष्कर्ष 'कुछ पदार्थ चेतक हैं' निकल सके।

§३ संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला के नियम

जब संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला पूर्णरूपेण प्रथम आकार में ही है, अर्थात् यदि उसके घटक न्याय-युक्तियां प्रथम आकार में हों, तो दोनों प्रकारों पर निम्नलिखित नियम चरितार्थ होते हैं:—

केवल एक ही आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो सकता है, अर्थात् अरस्तू के प्रकार में अन्तिम तथा गोक्लिनिअस के प्रकार में प्रथम । केवल एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो सकता है।

उपपत्ति : (क) केवल एक ही आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो सकता है अर्थात् एक से अधिक आश्रयवाक्य निषेधात्मक नहीं होते।

निषेधात्मक आश्रयवाक्य से निषेधात्मक निष्कर्ष निकलता है। अतः यदि एक से अधिक आश्रयवाक्य निषेधात्मक हों, तो अन्त में एक न्याय-युक्ति ऐसी हो जायेगी, जिसके दोनों आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो जायेंगे और उनसे कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा ।

(ख) यदि कोई आश्रयवाक्य निषेधात्मक होगा, तो वह अरस्तू के प्रकार का अन्तिम तथा गोक्लिनिअस के प्रकार का प्रथम होगा।

यदि कोई आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो, तो अंतिम निष्कर्ष निषेधात्मक होगा। अतः उसका विधेय व्याप्त होगा। अतः वह आश्रयवाक्य- जिसमें अन्तिम निष्कर्ष का विधेय, विधेय होगा, निषेधात्मक रहेगा। अतः वह तर्कवाक्य जिसमें अन्तिम निष्कर्ष का विधेय, विधेय होता है, अरस्तू के प्रकार में अन्तिम तथा गोक्लिनिअस के प्रकार में प्रथम होता है।

यदि किसी अन्य आश्रयवाक्य को निषेधात्मक माना जाय, तो अवैध-साध्य का दोष हो जायगा ।

(२) केवल एक आश्रयवाक्य विशेष हो सकता है, अर्थात्—अरस्तू के प्रकार में पहला तथा गोक्लिनिअस के प्रकार में अन्तिम । केवल एक आश्रयवाक्य विशेष हो सकता है।

उपपत्तिः—(क) केवल एक आश्रयवाक्य विशेष हो सकता है अर्थात् एक से अधिक आश्रयवाक्य विशेष नहीं हो सकते।

यदि एक आश्रयवाक्य विशेष हो, तो निष्कर्ष भी विशेष होगा; अतः यदि एक से अधिक आश्रयवाक्य विशेष हों, तो एक घटक न्याय-युक्ति ऐसी बन जायेगी जिसमें दो विशेष आश्रयवाक्य होंगे और कोई निष्कर्ष नहीं निकलेगा।

(ख) यदि कोई एक आश्रयवाक्य विशेष हो, तो वह अरस्तू के

प्रकार में प्रथम तथा गोक्लिनिअस के प्रकार में अन्तिम होगा।

अरस्तू के प्रकार में, प्रथम को छोड़कर अन्य सब आश्रयवाक्य साध्य-वाक्य होते हैं। ये नियम संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में भी तभी चरितार्थ होते हैं जबकि सब घटक न्याय-युक्तियां प्रथम आकार में हों। प्रथम आकार के विशेष नियमों के अनुसार, साध्यवाक्य सामान्य होना चाहिये। अतः केवल प्रथम आश्रयवाक्य, जो कि पक्षवाक्य होता है, विशेष हो सकता है।

गोक्लिनिअस के प्रकार में, यदि अन्तिम को छोड़कर अन्य कोई आश्रय-वाक्य विशेष होगा तो उस न्याय-युक्ति का निष्कर्ष, जिसमें यह विशेष आश्रय होगा, विशेष होगा। गोक्लिनिअस के प्रकार में, निष्कर्ष अगली न्याय-युक्ति का साध्य वाक्य होता है। परन्तु प्रथम आकार में साध्यवाक्य सामान्य होता है। अतः गोक्लिनिअस के प्रकार में, केवल अन्तिम आश्रयवाक्य ही विशेष होता है।

यदि कोई अन्य आश्रय विशेष माना जाय तो अव्याप्त-हेतु का दोष-हो जाता है।

§ ४ संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला (Epicheirema)

संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला

संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला उस प्रतीयगामी युक्तिमाला को कहते हैं जिसमें पूर्व न्याय-युक्ति का एक आश्रय लुप्त होता है।

संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला में हम उत्तर-न्याय-युक्ति से पूर्व-न्याय-युक्ति की दशा में तर्क करते हैं। इसमें प्रत्येक पूर्व-न्याय-युक्ति का एक आश्रय लुप्त होने के कारण इसे संक्षिप्त मानते हैं। परन्तु उत्तर-न्याय-युक्ति पूर्ण रूपेण व्यक्त रहती है। अतः संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला में, उत्तर-न्याय-युक्ति तो पूर्णरूप से व्यक्त रहती है, परन्तु पूर्व-न्याय-युक्तियां संक्षिप्त न्याय-युक्ति के रूप में होती हैं।

प्रकार शुद्ध तथा मिश्र

संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला या तो **शुद्ध** अथवा **मिश्र** होती है। शुद्ध संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला (Simple Epicheirema) में उत्तर-न्याय-युक्ति के आश्रयवाक्य संक्षिप्त-न्याय-युक्ति के द्वारा सिद्ध किये जाते हैं। मिश्र-प्रतीयगामी युक्तिमाला (Complex Epicheirema) में इन संक्षिप्त-न्याय-युक्तियों को पुनः अन्य संक्षिप्त-न्याय-युक्तियों से सिद्ध किया जाता है।

संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला पुनः एकनिष्ठ अथवा उभयनिष्ठ हो सकती है। एकनिष्ठ संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला (Single Epicheirema) में उत्तर-न्याय-युक्ति (Episyllogism) का एक आश्रयवाक्य एक संक्षिप्त-न्याय-युक्ति से सिद्ध किया जाता है। उभयनिष्ठ संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला (Double Epicheirema) में उत्तर-न्याय-युक्ति के दोनों आश्रयवाक्य संक्षिप्त न्याय-युक्ति से सिद्ध होते हैं। एकनिष्ठ तथा उभयनिष्ठ

अतः संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला के चार प्रकार होते हैं:— चार प्रकार

(१) शुद्ध एकनिष्ठ

(२) शुद्ध उभयनिष्ठ

(३) मिश्र एकनिष्ठ

तथा (४) मिश्र उभयनिष्ठ

अब हम एक-एक करके प्रत्येक के उदाहरण देखेंगे—

(१) शुद्ध-एकनिष्ठ (Single Simple) : शुद्ध-एकनिष्ठ

सब 'क' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'क्ष' 'ख' हैं तथा सब 'क' 'क्ष' हैं।

सब 'क्ष' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'म' 'ख' हैं।

पूर्ण रूप में व्यक्त करने पर, निम्नलिखित प्रतीयगामी युक्तिमाला प्राप्त होती है :

उत्तर-न्याय-युक्ति सब 'क्ष' 'ख' हैं।
सब 'क' 'क्ष' हैं।
∴ सब 'क' 'ख' हैं।

पूर्व न्याय-युक्ति सब 'म' 'ख' हैं।
सब 'क्ष' 'म' हैं।
∴ सब 'क्ष' 'ख' हैं।

इसमें प्रथम न्याय-युक्ति का आश्रयवाक्य "सब 'क्ष' 'ख' हैं" दूसरी न्याय-युक्ति का निष्कर्ष बन जाता है। अतः युक्ति उत्तर-न्याय-युक्ति से पूर्व-न्याय की दिशा में अग्रसर होती है। दूसरे शब्दों में यह प्रतीयगामी युक्तिमाला है। पूर्व-न्याय-युक्ति का एक आश्रयवाक्य लुप्त है; अतः यह संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला है।

यह संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला शुद्ध है, क्योंकि उत्तर-न्याय-युक्ति का आश्रय "सब 'क्ष' 'ख' हैं" एक संक्षिप्त न्याय-युक्ति के द्वारा सिद्ध हुआ है। यह एकनिष्ठ भी है, क्योंकि इस प्रकार एक ही आश्रयवाक्य को सिद्ध किया गया है, दूसरे को नहीं।

वास्तविक उदाहरण

सब दरिद्र दुखी हैं, क्योंकि सब तिरस्कृत दुखी हैं और सब दरिद्र तिरस्कृत हैं।
सब तिरस्कृत दुखी हैं, क्योंकि सब निस्तेज दुखी हैं।
सब दरिद्र तिरस्कृत हैं, क्योंकि सब दरिद्र निर्लज्ज हैं।

पूर्ण रूप से व्यक्त करने पर निम्नलिखित प्रतीयगामी युक्तिमाला प्राप्त होती है।

उत्तर न्याय-युक्ति :—

सब तिरस्कृत दुखी हैं।
सब दरिद्र तिरस्कृत हैं।
∴ सब दरिद्र दुखी हैं।

पूर्व-न्याययुक्तिः—

(१) सब निस्तेज दुखी हैं।
सब तिरस्कृत निस्तेज हैं।
∴ सब तिरस्कृत दुखी हैं।
(२) सब निर्लज्ज तिरस्कृत हैं।
सब दरिद्र निर्लज्ज हैं।
∴ सब दरिद्र तिरस्कृत हैं।

उभयनिष्ठ

(२) शुद्ध उभयनिष्ठ (Simple Double)

सब 'क' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'क्ष' 'ख' हैं तथा सब 'क' 'क्ष' हैं।
सब 'क्ष' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'म' 'ख' हैं। और,
सब 'क' 'क्ष' हैं, क्योंकि सब 'क' 'य' हैं।

यह शुद्ध है, क्योंकि उत्तर-न्याय-युक्ति के आश्रयवाक्यों को संक्षिप्त न्याय-युक्तियों से सिद्ध किया गया है। यह उभयनिष्ठ भी है, क्योंकि दोनों

आश्रयवाक्यों को इस प्रकार सिद्ध किया गया है। पहली संक्षिप्त-न्याय-युक्ति साध्यवाक्य अर्थात् "सब 'क्ष' 'ख' हैं" को सिद्ध करती है और दूसरी संक्षिप्त-न्याय-युक्ति पक्षवाक्य अर्थात् "सब 'क' 'क्ष' हैं" को सिद्ध करती है। यह भी निम्न प्रकार से पूर्णरूपेण व्यक्त होता है—

उत्तर न्याय-युक्ति : सब 'क्ष' 'ख' हैं।
सब 'क' 'क्ष' हैं।
∴ सब 'क' 'ख' हैं।

पूर्व न्याय-युक्ति : (१) सब 'म' 'ख' हैं।
सब 'क्ष' 'म' हैं।
∴ सब 'क्ष' 'ख' हैं।
(१) **सब 'य' 'क्ष' हैं।**
सब 'क' 'य' हैं।
∴ सब 'क' 'क्ष' हैं।

स्पष्ट है कि प्रथम पूर्व-न्याय-युक्ति साध्यवाक्य को तथा दूसरी पूर्व-न्याय-युक्ति पक्ष वाक्य को सिद्ध करती है। मोटे अक्षरों में लिखे आश्रय-वाक्य लुप्त थे।

वास्तविक उदाहरण :

सब दरिद्र दुखी हैं, क्योंकि सब तिरस्कृत दुखी हैं तथा सब दरिद्र तिरस्कृत हैं।
सब तिरस्कृत दुखी हैं, क्योंकि सब निस्तेज दुखी हैं।
पूर्ण रूप से व्यक्त करने पर निम्नलिखित प्रतीयगामी युक्तिमाला प्राप्त होती है—

उत्तर न्याययुक्ति :
सब तिरस्कृत दुखी हैं।
सब दरिद्र तिरस्कृत हैं।
∴ सब दरिद्र दुखी हैं।

पूर्व-न्याययुक्ति :
सब निस्तेज दुखी हैं।
सब तिरस्कृत निस्तेज हैं।

∴ सब तिरस्कृत दुखी हैं।

स्पष्ट है कि उत्तरन्याय-युक्ति का आश्रय 'सब तिरस्कृत दुखी हैं।' एक संक्षिप्त न्याय-युक्ति द्वारा सिद्ध हुआ है।

मिश्र एक निष्ठ

(३) मिश्र एकनिष्ठ (Complex Single)

सब 'क' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'क्ष' 'ख' हैं।

सब 'क्ष' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'म' 'ख' हैं; तथा—

सब 'म' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'म' 'ख' हैं।

यह संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला मिश्र है, क्योंकि उत्तर-न्याय-युक्ति का एक आश्रय एक संक्षिप्त-न्याय-युक्ति से सिद्ध किया गया है। फिर संक्षिप्त-न्याय-युक्ति का एक आश्रय दूसरी संक्षिप्त न्याय-युक्ति से सिद्ध किया गया है। यह एक निष्ठ है; क्योंकि उत्तर-न्याय-युक्ति का केवल एक आश्रय ही सिद्ध किया गया है। और दूसर आश्रय "सब 'क' 'क्ष' हैं" सिद्ध नहीं किया गया है।

वास्तविक उदाहरण :

सब ऋषि आदरणीय हैं, क्योंकि सब योगी आदरणीय हैं और सब ऋषि योगी हैं।

सब योगी आदरणीय हैं, क्योंकि सब दार्शनिक आदरणीय हैं।

सब दार्शनिक आदरणीय हैं, क्योंकि सब विद्वान आदरणीय हैं।

(४) मिश्र उभयनिष्ठ (Complex Double)

सब 'क' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'क्ष' 'ख' हैं और सब 'क' 'क्ष' हैं।

सब 'क्ष' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'म' 'ख' हैं। और,

सब 'म' 'ख' हैं, क्योंकि सब 'न' 'ख' हैं।

और पुनः,

सब 'क' 'क्ष' हैं क्योंकि सब 'ग' 'क्ष' हैं। और,

सब 'ग' 'क्ष' हैं, क्योंकि सब 'घ' 'क्ष' हैं।

वास्तविक उदाहरण :

सब ऋषि आदरणीय हैं, क्योंकि सब योगी आदरणीय हैं।

और सब ऋषि योगी हैं।

सब योगी आदरणीय हैं, क्योंकि सब दार्शनिक आदरणीय हैं।

और सब दार्शनिक आदरणीय हैं, क्योंकि सब विद्वान आदरणीय हैं।

और पुनः,

सब ऋषि योगी हैं, क्योंकि सब द्रष्टा योगी हैं,

और

सब द्रष्टा योगी हैं, क्योंकि सब परमार्थी योगी हैं।

यह **मिश्र उभयनिष्ठ** संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला का उदाहरण है, क्योंकि उत्तर-न्याय-युक्ति के दोनों आश्रयवाक्यों को संक्षिप्त-न्याय-युक्तियों के द्वारा सिद्ध किया गया है। और फिर इन संक्षिप्त न्याय-युक्तियों के आश्रयवाक्यों को अन्य संक्षिप्त-न्याय-युक्तियों से सिद्ध किया गया है।

प्रश्नमला १५

(१) अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला का एक सूत्रात्मक उदाहरण दीजिए। उसको उसकी घटक न्याय-युक्तियों में विश्लेषित कीजिए। यह प्रदर्शित कीजिए कि इस प्रकार की युक्तिमाला में पहले आश्रयवाक्य के सिवा अन्य सब सामान्य होते हैं।

(२) संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला किसे कहते हैं? उसके विभिन्न प्रकारों का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।

(३) निम्नलिखित का अन्तर स्पष्ट कीजिए:—

(क) संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला तथा संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमाला।

(ख) गोक्लिनिअस की तथा अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला।

(४) संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला के नियमों की व्याख्या कीजिए।

(५) सिद्ध कीजिए कि संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला में केवल एक आश्रयवाक्य निषेधात्मक हो सकता है—यथा—अरस्तू की में अन्तिम तथा गोक्लिनिअस की में प्रथम।

(६) निम्नलिखित का परीक्षण कीजिए:—

धर्म एक निश्चित विज्ञान नहीं है; एक निश्चित विज्ञान का प्रदर्शन हो सकता है; प्रदर्शित विज्ञान सत्य होता है; जो सत्य होता है, वह लाभकारी होता है; अतएव धर्म लाभकारी नहीं है।

(संकेत:—यह दोषपूर्ण (Fallacious) अरस्तू की संक्षिप्त प्रगामी युक्तिमाला है, क्योंकि इसका पहला आश्रयवाक्य निषेधात्मक है।)

षोड़श प्रकरण

मिल की न्याय-युक्ति पर आपत्तियाँ

§१. मिल (Mill) की दो आपत्तियाँ

मिल की आपत्तियां :

मिल महोदय ने न्याय-युक्ति को तर्क का आकारगत साधन मानने के विरुद्ध निम्नलिखित दो आपत्तियां की हैं।

प्रथम आपत्ति : न्याय-युक्ति के अनुसार हम तर्क नहीं करते ।

(१) प्रथम, मिल का कहना है कि मिल न्याय-युक्ति की प्रक्रिया ऐसी नहीं है, जिसके अनुसार हम तर्क करते हैं। उसके अनुसार "सब तर्क 'विशेष' से 'विशेष' का ज्ञान कराते हैं। सामान्य तर्कवाक्य केवल इसी प्रकार किए हुए तर्कों के समूह होते हैं। हम इस प्रकार के साधारण सूत्र बना लेते हैं, जिनके द्वारा तर्क किया करते हैं। न्याय-युक्ति का साध्यवाक्य इसी प्रकार का सूत्र होता है, तथा निष्कर्ष इस सूत्र से निकाला गया तर्क नहीं, वरन् इस सूत्र के अनुसार निकाला हुआ अनुमान है।"

परन्तु मिल न्याय-युक्ति को तर्क के लिये सर्वथा व्यर्थ नहीं समझता। उसके अनुसार, "न्याय-युक्ति उस आकार की तो नहीं होती, जिसमें हमारे तर्क अनिवार्यतः होने चाहिए, या होते हैं; परन्तु उसका मूल्य एक ऐसी प्रक्रिया को प्रस्तुत करना है, जिसके द्वारा उन तर्कों को सदा व्यक्त किया जा सकता है और जिसके द्वारा हम अपने तर्कों की जांच कर सकते हैं, तथा यदि वे अनिश्चित हुए तो उन्हें प्रकाश में ला सकते हैं।"

अतः मिल के अनुसार न्याय-युक्ति हमारे तर्क का सामान्य आकार तो नहीं है, परन्तु उसकी उपयोगिता तर्क के संदिग्ध उदाहरणों को विशुद्धता की जांच करने में है। हरशैल (Herschel) ह्वैवेल (Whewell), बेन (Bain) इत्यादि तर्कशास्त्री इसी दृष्टिकोण से सहमत हैं।

आलोचना—किन्तु कुछ तर्कशास्त्री, यथा—मैन्सल (Mansel), डी० मोर्गन (De Morgan), मार्टिनो (Martineau), डॉक्टर पी० के० रे (Dr. P. K. Ray), सर डब्लू० हैमिल्टन (Sir W.

Hamilton) इत्यादि मिल के उपर्युक्त मत का विरोध करते हैं। प्रसंग में निम्नलिखित युक्तियाँ प्रस्तुत की जाती हैं—

(क) मिल की यह आपत्ति सत्य है कि हम न्याय-युक्ति की क्रिया के अनुसार तर्क नहीं करते। परन्तु यह भी सत्य है कि हमारे तर्क तब तक सत्य नहीं होते, जब तक कि उनमें न्याय-युक्ति के आकार (अर्थात् नियमों) पर परिवर्तित हो सकने की क्षमता नहीं हो। ऐसा प्रतीत होता है कि मिल ने मनोविज्ञान तथा तर्कविद्या के कार्यों को परस्पर गड़बड़ा दिया है। तर्कविद्या का यह कार्य कदापि नहीं है कि वह उन प्रक्रियाओं का वर्णन करे, जिनके द्वारा लोग शुद्धतापूर्वक या अशुद्धतापूर्वक तर्क करते हैं। उसका उद्देश्य तो उन प्रक्रियाओं का वर्णन करना है, जिनसे लोगों को तर्क करना चाहिये, ताकि उनके विचार शुद्ध हो सकें। मनोविज्ञान तर्क के उस रूप का अध्ययन करता है जैसा कि वह है; परन्तु तर्कविद्या उस रूप का अध्ययन करती है, जैसा कि उसको होनी चाहिए। मिल ने इन दोनों में संभ्रन उत्पन्न कर दिया है और इन दोनों को ही तर्कविद्या का क्षेत्र में मान लिया है। अतः यह कहने से कि न्याय-युक्ति तर्क करने की सामान्य प्रक्रिया नहीं है, उसकी उपयोगिता किसी प्रकार भी कम नहीं होती जब तक कि न्याय-युक्ति को विशुद्ध तर्क के प्रकार की मान्यता रहेगी।

मिल ने तर्कविद्या के क्षेत्र को मनोविज्ञान के क्षेत्र के साथ गड़बड़ा दिया है।

(ख) मिल की यह आपत्ति कि "सब तर्क विशेष से विशेष का ही ज्ञान कराते हैं"—भी तर्क की कसौटी पर ठीक नहीं उतरती। यह सच है कि प्रायः हम सादृश्य के द्वारा 'विशेष' से 'विशेष' का ज्ञान करते हैं, किन्तु यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण है कि यही सामान्य ज्ञान करानेका एकमात्र साधन है। सादृश्य से प्राप्त ज्ञान प्रायः अशुद्ध होता है; किन्तु जब वह सत्य भी होता है, तब वह 'विशेषों' के सामान्य तत्व पर ही तो अवलम्बित रहता है। हमारे लिए 'विशेष' से 'विशेष' का ज्ञान करना ठीक होता है, जब हम दोनों में सादृश्य का भाव देखते हैं। यह सादृश्य का भाव सामान्य नियम का द्योतक होता है जो कि सब 'विशेषों को एक साथ संगठित कर देता है। अतः जब कभी भी हम सादृश्य से अनुमान करते हैं,

हम वास्तव में एक 'विशेष' से दूसरे 'विशेष' की दिशा में तर्क करते हैं क्योंकि उनमें एक सामान्य तत्व होता है।

तव हमारा अनुमान, विशेष पदार्थों के सामान्य तत्व के आधार पर ही चलता है, जो स्वयं विशेष नहीं होता। जैसा कि वैल्टन (Welton) ने कहा है, "उन उदाहरणों में जहां अनुमान एक या अधिक विशेषों पर निर्भर 'रहता-सा प्रतीत होता है, वह वास्तव में उस सामान्य तत्व पर निर्भर रहता है, जो उनके सादृश्य का आधार हो। और इसी को एक सामान्य तर्क-वाक्य के रूप में व्यक्त किया जा सकता है, जो कि न्याय-युक्ति का साध्य-वाक्य होता है।"

दूसरी आपत्ति : आत्माश्रय का दोष

(२) **मिल (Mill) की दूसरी आपत्ति यह है कि प्रत्येक न्याय-युक्ति में 'आत्माश्रय का दोष' होता है।**

आत्माश्रय का दोष (Fallacy of Petitio Principii) तव उत्पन्न होता है, जव हम निष्कर्ष को आश्रयवाक्यों (Premises) में ही निहित मान लेते हैं। इसको **प्रश्न-प्रार्थना** (Begging the Question) अथवा **चक्र-दोष** (Arguing in a circle) भी कहते हैं। उदाहरणार्थ—'मनुष्य मर्त्य है, क्योंकि उसकी मृत्यु होती है।'

अतः यह कहना कि प्रत्येक न्याय-युक्ति में **आत्माश्रय का दोष** होता है, उसकी सत्यता पर ही कुठाराघात करना है। इसका स्पष्ट अर्थ तो यह है कि प्रत्येक न्याय-युक्ति का निष्कर्ष एक न एक आश्रयवाक्य में ही सम्मिलित रहता है, परन्तु इसका साधारण अर्थ यह भी लिया जाता है कि आश्रयवाक्य पहले ही निष्कर्ष को सत्य मान लेते हैं, अतः उनका उपयोग निष्कर्ष को सिद्ध करने के लिए नहीं किया जा सकता। निम्नलिखित न्याय-युक्ति को देखिए:—

सब मनुष्य मर्त्य हैं; 'क' एक मनुष्य है; इसलिए 'क' मर्त्य है। इसका निष्कर्ष 'क' मर्त्य है" आश्रय "सब मनुष्य मर्त्य हैं" में पहले से ही समाविष्ट है।

आलोचना (क) सामान्य साध्यवाक्य केवल विशेष उदाहरणों का समूह-मात्र नहीं होता।

आलोचना (क) न्याय-युक्ति सम्बन्धी यह आपत्ति इस तथ्य पर आधारित है कि सामान्य साध्यवाक्य (Universal Major Premise) विशेष उदाहरणों का केवल समूह मात्र होता है। यदि ऐसा होता, तो यह आपत्ति उचित हो सकती थी। परन्तु प्रायः सामान्य तर्कवाक्यों

का निर्माण केवल कुछ विशेष उदाहरणों के परीक्षण के पश्चात् प्रकृति की एकरूपता के नियम (Law of Uniformity Nature) तथा कार्य-कारण नियम (Law of Causation) के आधार पर किया जाता है। यदि समग्र विशेष उदाहरणों की परीक्षा के वाद सामान्य तर्कवाक्य वनाया जाता है, तो उसे पूर्ण आगमन (Perfect Induction) कहते हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक आगमन (Scientific Induction) की क्रिया भी है, जिसमें सव उदाहरणों की परीक्षा करने पर व्याप्ति नहीं वनाई जाती, किन्तु केवल थोड़े से ही उदाहरणों की परीक्षा के वाद अनुमान किया जाता है। उदाहरणार्थ, 'सव मनुष्य मर्त्य हैं' इस सामान्य तर्कवाक्य को हम सव उदाहरणों की परीक्षा करने के वाद कभी नहीं वना सकते—क्योंकि कम से कम जीवित मनुष्यों को छोड़ ही देना पड़ेगा। अतः यदि हम कहें कि 'भारतवर्ष का वर्तमान राष्ट्रपति मर्त्य है' तो इस सामान्य तर्कवाक्य में निष्कर्ष आश्रय पर आधारित नहीं होगा।

(ख) निष्कर्ष दोनों आश्रय-वाक्यों को एक साथ रखने पर प्राप्त होता है।

(ख) न्याय-युक्ति में **दोनों आश्रयवाक्यों** की आवश्यकता होती है—साध्यवाक्य की भी और पक्षवाक्य की भी। परन्तु पूर्वोक्त आपत्ति के अनुसार तो पक्षवाक्य विल्कुल व्यर्थ सिद्ध होगा। स्थिति यह है कि निष्कर्ष दोनों आश्रयवाक्यों को एक साथ लेकर ही निकाला जाता है; किसी एक वाक्य से नहीं निकाला जाता। अतः पक्षवाक्य की आवश्यकता ही इस वात को सिद्ध करती है कि न्याय वाक्य में आत्माश्रय का दोष नहीं है।

(ग) न्याय-युक्ति में जो कुछ अन्तर्निहित होता है, वह व्यक्त कर दिया जाता है। अतः उससे ज्ञान का विकास होता है।

(ग) यदि वास्तव में न्याय-युक्ति में **आत्माश्रय का दोष** होता तो उसके द्वारा हमारे ज्ञान में कोई वृद्धि न होती। न्याय-युक्ति के बारे में हम कह सकते हैं कि निष्कर्ष का सत्य आश्रयवाक्यों के सत्य में निहित रहता है; परन्तु हमें निष्कर्ष का ज्ञान आश्रयवाक्यों के ज्ञान के पश्चात् ही प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में, निष्कर्ष आश्रयवाक्य में अन्तर्भूत हो सकता है, परन्तु इस वात का ज्ञान तो हमें तभी हो पाता है, जब हम आश्रय-वाक्यों से स्पष्टतया निष्कर्ष निकाल लेते हैं। अतः अन्तर्निहित या

अव्यक्त से व्यक्त ज्ञान की ओर अग्रसर होना वास्तव में ज्ञान में वृद्धि है। अतः निष्कर्ष पर पहुँचने पर ज्ञान में विकास अवश्य होता है।

(घ) मिल की आपत्ति तार्किक आपत्ति नहीं है।

(घ) अन्त में, यदि यह आपत्ति ठीक भी होती, तो वह तार्किक न होकर मनोवैज्ञानिक आपत्ति होती। किसी तर्क को इसलिये असत्य नहीं माना जा सकता क्योंकि 'इसको सब जानते हैं।' रेखागणित के सिद्धान्त इसलिए निरर्थक नहीं कहे जा सकते, क्योंकि कोई व्यक्ति उन्हें अच्छी तरह जानता है और उसे वे सब सिद्धान्त याद हैं।

इस प्रकार, आत्माश्रय की आपत्ति निराधार सिद्ध हो जाती है। तथा न्याय-युक्ति की तर्क-पद्धति की विशुद्धता स्थापित हो जाती है।

दूसरा सीमान्त दृष्टिकोण भी सत्य नहीं है।

यह बात ज्ञातव्य है कि न्याय-युक्ति की विशुद्धता स्थापित करते समय कुछ तर्कशास्त्री यहां तक कह डालते हैं कि 'न्याय-युक्ति विशुद्ध तर्क का एक मात्र स्वरूप है।' यह दृष्टिकोण ह्वेटली (Whately) का है। यह कथन स्पष्टतया अतिशयोक्तिपूर्ण है, क्योंकि न्याय-युक्ति में केवल उन्हीं तर्कवाक्यों का उपयोग होता है, जो कि उद्देश्य एवं गुणों का सम्बन्ध व्यक्त करते हैं और उद्देश्य और विधेय के अन्य सम्बन्धों से प्राप्त अनुमान न्याय-युक्ति के रूप में भलीभांति व्यक्त नहीं किये जा सकते।

प्रश्नमाला : १६

(१) आत्माश्रय के दोष से क्या तात्पर्य है? एक उदाहरण देकर समझाइए।

(२) मिल की यह आपत्ति कि प्रत्येक न्याय-युक्ति में आत्माश्रय का दोष होता है, कहां तक सच है?

(३) क्या प्रत्येक अनुमान विशेष से विशेष तक ही होता है?

(४) यह कहा जाता है कि न्याय-युक्ति का निष्कर्ष साध्यवाक्य से नहीं, वरन् उसके अनुसार प्राप्त किया जाता है। इस कथन की व्याख्या कीजिए।

सप्तदश प्रकरण

निगमन मूलक तर्क के दोष या आभास

(Fallacies in Deductive Reasoning)

§१. 'आभास' या दोष की परिभाषा। उसका वर्गीकरण।
§२. निगमनमूलक आभास।
§३. अर्द्ध-तार्किक आभास।
(क) वाक्य छल।
(ख) भ्रामकोच्चारण दोष।
(ग) अनेकार्थक दोष।
(घ) अनुप्रास दोष।
(ड़) उपाधि-भेद दोष।
(अ) अनुलोम उपाधि-भेद दोष।
(आ) प्रतिलोम उपाधि-भेद दोष।
(च) तथा (छ) विभाग का दोष तथा रचना का दोष।
§३. भारतीय न्याय में दोष।
(क) हेत्वाभास की परिभाषा तथा प्रकार।
(ख) सव्यभिचार हेतु।
(ग) विरुद्ध हेतु।
(घ) सत्प्रतिपक्ष हेतु।
(ङ.) असिद्ध हेतु।
(च) वाधित हेतु।
(छ) अन्य तर्क दोष।
४. अभ्यास हल करने के लिये संकेत।
कुछ हल किये हुए अभ्यास।
प्रश्नमाला १७।

§१. *आभास या दोष* (Fallacy) *की परिभाषा : उसका वर्गीकरण*

'दोष' या 'आभास' का साधारण अर्थ किसी प्रकार का भ्रम अथवा त्रुटि होता है और कुछ तर्कशास्त्री इस शब्द का उपयोग इसी व्यापक अर्थ

आभास का अर्थ तार्किक नियमों का उल्लंघन है।

में करते हैं और सब प्रकार के भ्रम या त्रुटि को 'दोष' कहते हैं। तथापि यहां, 'दोष' से हम यही अर्थ ग्रहण करते हैं कि दोष वह है **जो तार्किक नियमों के उल्लंघन करने से पैदा होता है।** तर्कविद्या उन नियमों का स्पष्ट वर्णन करती है, जो विचारों को नियमित तथा सुसम्बन्ध बनाते हैं। अतः जहां नियम हैं, वहां उनका उल्लंघन भी संभव है अर्थात् दोष हो जाते हैं। अतः दोष या आभासों की संख्या नियमों की संख्या के समान ही असंख्य है।

दोषों का वर्गीकरण

दोषों का वर्गीकरण : विभिन्न तर्कशास्त्रियों ने दोषों का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है। अब हम संक्षेप में अरस्तू (Aristotle), ह्वैटली (Whatley) तथा मिल (Mill) द्वारा वर्णित दोषों के वर्गीकरण पर विचार करेंगे।

अरस्तू

अरस्तू ने केवल उन दोषों का वर्णन किया है, जिन्हें वह **'सोफिज्म'** (Sophisms) कहता है। 'सोफिज्म' उस चातुर्यपूर्ण युक्ति को कहते हैं, जिसका उद्देश्य विपक्षी को धोखा देना है। 'सोफिज्म' दो प्रकार के होते हैं-(१) वे जो कि **भाषा के संदिग्ध प्रयोग** के कारण उत्पन्न होते हैं और (२) वे जिनका दोष युक्ति के **वस्तुविषय** के परीक्षण के बाद ही ज्ञात हो पाता है। पहिले प्रकार के 'सोफिज्म' के पांच उपविभाग हैं; यथा—(१) अनेकार्थक दोष (Equivocation), (२) वाक्य-छल (Amphiboly), (३) रचनाछल (Compsosition) (४) विभाग का दोष (Division), (५) भ्रमकोच्चारण दोष। (Accent) तथा (६) अनुप्रास-दोष (Figure of speech)। दूसरे प्रकार के सोफिज्म के सात उपविभाग हैं, यथा—(१) उपाधि-भेद दोष (Accident), (२) अनुलोम-उपाधि-भेद-दोष (Fallacia a dicto secundum quid ad dictum simplictier तथा उसका प्रतिलोम। (३) प्रतिवाद के अज्ञान का दोष (Ignoratio Elenchi), (४) समक्रमिक दोष (Cosequens), (५) आत्माश्रय दोष (Petitio principii), (६) अ-कारण का दोष (Non causa pro causa), (७) बहुप्रश्नात्मक दोष (Fallacy of many questions)।

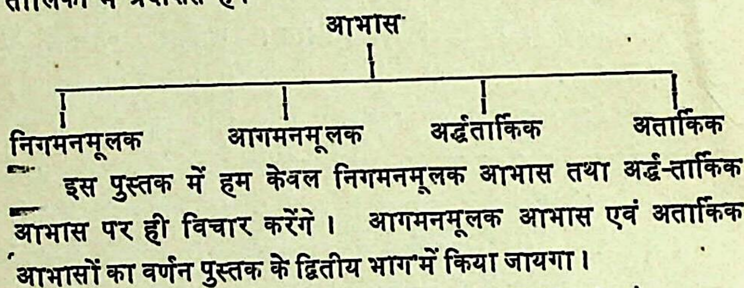
ह्वैटली (Whatley) ने आभास के दो विभाग माने हैं। यथा— (क) तार्किक आभास तथा (ख) अ-तार्किक (अथवा वस्तुविषयक) (Non-logical or Material) आभास। तार्किक आभास के पुनः दो भाग हैं। (१) शुद्ध तार्किक (Purely logical fallacies) जिसमें दोष केवल अभिव्यक्ति के आकार में है, और उसमें पदों के अर्थ पर ध्यान नहीं दिया जाता, (२) अर्द्ध तार्किक दोष (Semi-logical fallacies) ह्वैटली उन्हें मानता है जो कि शब्दों की सन्दिग्धता से उत्पन्न होते हैं। (ख) अतार्किक दोष उसे कहते हैं, जिसमें निष्कर्ष अनिवार्यतः आश्रयवाक्यों से फलित नहीं होता, यथा-आत्माश्रय का दोष (Petitio principii), प्रतिवाद के अज्ञान को दोष (Ignoratio Elenchi)। ह्वैटली

मिल (Mill) ने 'आभास' के पांच उपविभाग माने हैं। यथा— (१) सरल निरीक्षण के दोष (Fallacies of Simple Inspection) जो कि तर्कवाक्यों को स्वयंसिद्धि की अनियमित मान्यता देने से उत्पन्न होते हैं। (२) निरीक्षण के दोष (Fallacies of Observation) (३) सामान्यीकरण के दोष (Fallacies of Generalisation), (४) चिन्तन के दोष (Fallacies of Ratiocination), अर्थात् वे दोष जो अनुमान के आकारगत नियमों के उल्लंघन से उत्पन्न होते हैं तथा (५) भ्रम के दोष (Fallacies of Confusion)। मिल

सुयोग्य तर्कशास्त्रियों ने इन सभी वर्गीकरणों की बड़ी कटु-आलोचना की है। वैल्टन (Welton) का कथन है कि आभासों का पूर्ण रूपेण वैज्ञानिक 'वर्गीकरण' संभव नहीं है। डी मार्गन (De Morgon) का कहना है कि "मनुष्य जिन विधियों से त्रुटियां करता है, उसका वर्गीकरण हो ही नहीं सकता है।" चाहे आभासों का विधिवत् वर्गीकरण हो सके या नहीं, हम यहां पर उन आभासों का वर्णन करेंगे जो कि विभिन्न वर्गीकरण में एकत्रित किये गये हैं, अर्थात् वे आभास (१) जो, निगमनमूलक तर्क तथा तत्सम्बन्धी सहायक प्रक्रियाओं में होते हैं (संक्षेप में हम उन्हें निगमन-मूलक आभास' कहेंगे), (२) जो आगमन मूलक तर्क तथा तत्सम्बन्धी सहायक-प्रक्रियाओं में होते हैं (संक्षेप में हम उन्हें आगमनमूलक आभास कहेंगे), (३) जो भाषा की सन्दिग्धता से उत्पन्न होते हैं, जिन्हें ह्वैटली ने 'अर्द्धतार्किक आभास' कहा है, तथा (४) जो आश्रयवाक्यों को अनियमित मान्यता देने से उत्पन्न होते हैं, जिन्हें अतार्किक आभास (Extra-logical Fallacies) कहते हैं। अध्ययन में सुविधा के

निमित्त हम आभासों को चार वर्गों में बांट सकते हैं, जैसा कि निम्नलिखित तालिका में प्रदर्शित है।

तालिका



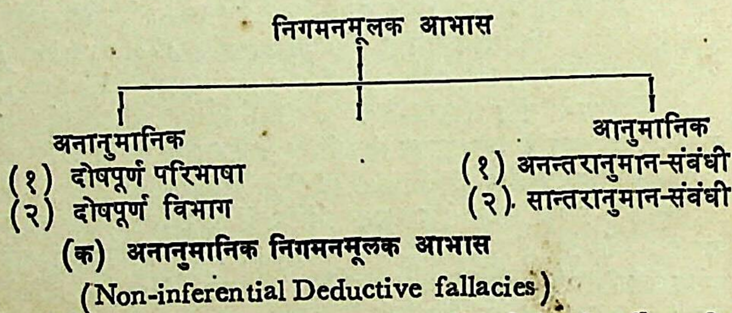
इस पुस्तक में हम केवल निगमनमूलक आभास तथा अर्द्ध-तार्किक आभास पर ही विचार करेंगे। आगमनमूलक आभास एवं अतार्किक आभासों का वर्णन पुस्तक के द्वितीय भाग में किया जायगा।

निगमनमूलक आभास

§२ *निगमन मूलक आभास* (Deductive Fallacies)

निगमनमूलक आभास के दो उप विभाग हैं : (१) अनानुमानिक (Non-Inferential) तथा आनुमानिक (Inferential)। इनका प्रदर्शन निम्नलिखित तालिका में कर दिया गया है।

तालिका



(क) अनानुमानिक निगमनमूलक आभास
(Non-inferential Deductive fallacies)

अनानुमानिक निगमनमूलक आभास

अनानुमानिक निगमनमूलक आभास उन्हें कहते हैं, जो तार्किक परिभाषा तथा तार्किक विभाग के नियमों के उल्लंघन करने से उत्पन्न होते हैं। ये क्रियायें स्वयं तर्क के अन्तर्गत नहीं आतीं; अतः इन दोषों को 'अनानुमानिक' कहते हैं।

दोषपूर्ण परिभाषा

तार्किक परिभाषा के दोष निम्नलिखित हैं :

(क) अतिरिक्त-परिभाषा।
(ख) आकस्मिक परिभाषा।
(ग) अतिव्याप्त तथा अव्याप्त परिभाषा।
(घ) दुर्बोध तथा आलंकारिक परिभाषा।

(ङ) पर्यायोक्ति परिभाषा।
(च) निषेधात्मक परिभाषा।

तार्किक विभाग के दोष निम्नलिखित हैं: दोषपूर्ण विभाग

(क) अतिभौतिक विभाग तथा भौतिक विभाग।
(ख) संकर-विभाग।
(ग) अपूर्ण या अतिसंकीर्ण विभाग।
(घ) अतिविस्तीर्ण विभाग।
(ङ) परस्पर-व्याप्त विभाग।

इन सभी दोषों का विस्तार विवेचन तत्सम्बन्धी प्रकरणों में कर दिया गया है। अतः पुनः उनका वर्णन करना व्यर्थ ही होगा। आनुमानिक निगमनमूलक दोष

(ख) आनुमानिक निगमनमूलक आभास
(Inferential Deductive fallacies)

आनुमानिक निगमनमूलक आभासों में अनंतरानुमान तथा सान्तरानुमान के दोष सम्मिलित हैं। ये दोष अनुमान-सम्बन्धी नियमों के उल्लंघन से उत्पन्न होते हैं, अतः 'आनुमानिक' कहलाते हैं। इन दोषों को 'आकारगत' भी कहते हैं, क्योंकि उनका सम्बन्ध तर्क के आकार से है, उसकी विषयवस्तु से नहीं, अर्थात् उनका सम्बन्ध न तर्कवाक्यों के अर्थ से नहीं होता, जिनसे युक्ति बनी होती है। अब हम आनुमानिक निगमनमूलक आभास के दोनों विभागों पर संक्षेप में विचार करेंगे। अनन्तरानुमान के दोष

(१) अनन्तरानुमान के दोष।

हमने नौ प्रकार के अनन्तरानुमानों का वर्णन प्रकरण ९ में किया है। यथा— परिवर्तन, प्रतिवर्तन, परिवर्तित-प्रतिवर्तन, विपर्यय, विरोध, संबंध-विलोमात्मक अनुमान, विध्याश्रित अनुमान, विशेषण-संयोगानुमान तथा मिश्र-धारणानुमान। इनमें से प्रत्येक के अपने निश्चित नियम हैं, जिनके उल्लंघन करने से दोष उत्पन्न हो सकते हैं। इन दोषों का वर्णन यथा-स्थान कर दिया गया है।

(२) सान्तरानुमान के दोष।

सान्तरानुमान में शुद्ध तथा मिश्र न्याय-युक्त तथा युक्तिमालाएँ सम्मिलित हैं। इन सबके अपने-अपने विशेष नियम हैं; यथा—न्याय-युक्ति के सामान्य नियम, हेतुफलाश्रित निरपेक्ष न्याय-युक्ति के नियम, उभयतोपाश के नियम, प्रगामी तथा प्रतीयगामी युक्ति मालाओं के नियम, सान्तरानुमान के दोष

संक्षिप्त प्रगामी तथा संक्षिप्त प्रतीयगामी युक्तिमालाओं के नियम। इन नियमों के उल्लंघन से दोष उत्पन्न होते हैं।

इन सब आभासों का वर्णन यथास्थान कर दिया गया है; अतः उनका पुनः वर्णन करना निरर्थक होगा।

अर्द्धतार्किक दोष

(३) *अर्द्धतार्किक दोष* **(Semi-logical Fallacies)**

अर्द्धतार्किक दोष उन आभासों को कहते हैं, जिनमें त्रुटि केवल युक्ति के आकार के परीक्षण से ही ज्ञात नहीं होता। वे भाषा की संदिग्धता से उत्पन्न होते हैं। अब हम सात प्रकार के आभासों का वर्णन करेंगे। यथा—

सात प्रकार

(१) वाक्य-छल, (२) भ्रामकोच्चारण (३) अनेकार्थक दोष, (४) अनुप्रास-दोष, (५) उपाधि-भेद दोष, (६-७) विभाग दोष और रचना दोष।

(क) वाक्य छल- (Amphibology या Amphiboly) :

वाक्य-छल

वाक्य-छल (Fallacy of Amphibology) **उस आभास को कहते हैं, जिसमें संदिग्धता वाक्य की बनावट के कारण होती है** यह वास्तव में वाक्य की भ्रामक रचना का दोष है। सन्दिग्ध वाक्य के पदों में नहीं अपितु बनावट में होती है। तब **वाक्य-छल** तब होता है, जब एक वाक्य का अर्थ दो रचनाओं में लिया जा सके। और यह कहना असंभव होता है कि उस वाक्य को किस अर्थ में लिया जाय।

उदाहरण

उदाहरण (क) रोको मत जाने दो।

इस वाक्य के दो अर्थ निकल सकते हैं; तथा—(१) रोको, मत जाने दो। तथा (२) रोको मत, जाने दो।

(ख) महेश इलाहाबाद को और फिर बनारस को मोटरकार से जायेगा।

(ग) दो और तीन का दूना बतलाइये।

(घ) दांत बिना तकलीफ के निकाले जाते हैं।

इस वाक्य के तीन अर्थ हो सकते हैं—(१) दाँत निकालते समय तकलीफ नहीं होती। (२) दांत निकाल दिए जाते हैं, परन्तु तकलीफ नहीं निकाली जाती और (३) ऐसे दांत निकाले जाते हैं, जिनमें तकलीफ नहीं होती।

यह बात स्मरणीय है कि वाक्य-छल आनुमानिक आभास नहीं है।

(ख) भ्रामकोच्चारण दोष (Fallacy of Accent) : भ्रामको-च्चारण दोष

यह दोष तब उत्पन्न होता है, जब हम किसी गलत शब्द पर जोर देकर उसका उच्चारण करते हैं। यथा—तुम अपने पड़ोसी के विरुद्ध गवाही नहीं दे सकते।

इसमें 'पड़ोसी' और 'विरुद्ध' दोनों पदों पर जोर देने से इस वाक्य के भिन्न-भिन्न अर्थ हो जाते हैं।

'पड़ोसी' पर जोर देने से इसका अर्थ होता है कि पड़ोसी के विरुद्ध तो नहीं, परन्तु अन्य के विरुद्ध गवाही दे सकते हो। 'विरुद्ध' पर जोर देने से यह अर्थ होगा कि उसके विरुद्ध नहीं, परन्तु पक्ष में गवाही दे सकते हो। इस प्रकार भिन्न-भिन्न शब्दों पर जोर देने से यह दोष उत्पन्न हो जाता है।

एक अन्य उदाहरण देखिये। "मैं तुम्हारे भाई को अपनी तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा।"

इस वाक्य के विभिन्न पदों पर जोर देने से निम्नलिखित अर्थ निकल सकते हैं।

(१) मैं तूम्हारे भाई को अपनी तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा। अर्थात् दूसरे व्यक्ति चाहे अपनी तर्कविद्या की पुस्तक तुम्हारे भाई को दे दें, मगर 'मैं' न दूंगा।

(२) मैं **तुम्हारे** भाई को अपनी तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा। अर्थात् अन्य व्यक्तियों के भाइयों को चाहे मैं अपनी तर्कविद्या की पुस्तक दे दूं, मगर तुम्हारे भाई को न दूंगा।

(३) मैं तुम्हारे **भाई** को अपनी तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा। अर्थात् मैं तुम्हारे अन्य संबंधियों को चाहे अपनी तर्कविद्या की पुस्तक दे दूंगा, किन्तु तुम्हारे भाई को न दूंगा।

(४) मैं तुम्हारे भाई को **अपनी** तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा। अर्थात् तुम्हारे भाई के लिये चाहे मैं किसी अन्य व्यक्ति की तर्कविद्या की पुस्तक मंगवा दूं, किन्तु अपनी तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा।

(५) मैं तुम्हारे भाई को अपनी **तर्कविद्या की पुस्तक** न दूंगा। अर्थात् तुम्हारे भाई को चाहे अपनी अन्य विषय की पुस्तक दे दूं, किन्तु तर्कविद्या की पुस्तक न दूंगा।

(ग) अनेकार्थक दोष (Fallacy of Equivocation) : अनेकार्थक दोष

जब एक से अधिक अर्थवाले शब्द का उपयोग किसी तर्क में किया जाय

तो अनेकार्थक दोष हो जाता है। जबकि ऐसे शब्द का उपयोग न्याय-युक्ति में किया जाता है, तो अनेकार्थक साध्य, अनेकार्थक पक्ष तथा अनेकार्थक हेतु का दोष हो जाता है। यह दोष चतुष्पदी आभास के समान है।

(घ) अनुप्रास दोष (Fallacy of Figure of speech या Fallacy of Paronymous Terms) :

अनुप्रास दोष

अनुप्रास-दोष उसे कहते हैं, जो शब्दों के समान रूप होने से उत्पन्न होता है। कभी-कभी एक ही धातु से बने हुए शब्द, समान रूप से होते हुए या संज्ञा विशेषण आदि से भेद रखते हुए प्रयोग कर दिए जाते हैं, तो इस प्रकार का दोष उत्पन्न हो जाता है। अतः यह दोष तब उत्पन्न होता है, जब भिन्नार्थक शब्दों को एकार्थ में ही ग्रहण कर लेते हैं। जैसे—

दर्शकों में बच्चों की-सी उत्सुकता होती है।

कणाद दर्शनकर्त्ता थे।

उदाहरण

उनमें बच्चों की-सी उत्सकता रही होगी।

यहां 'दर्शक' और 'दर्शनकर्त्ता' एक ही धातु से निकले हुए होने से एक ही अर्थ में ले लिये गये हैं।

अन्य उदाहरण देखिए:—

(१) अभिमानी मनुष्य को कोई भी प्रेम नहीं करता; महाराणा प्रताप बड़े स्वाभिमान थे, अतः उन्हें कोई भी प्रेम नहीं करता था।

(२) तराई के राजा के पास बड़े जंगल हैं। अतः वह बड़ा जंगली है।

(३) चित्रकार वह व्यक्ति है, जो चित्र बनाए, और कुम्भकार वह जो कुम्भ या घड़े बनाए। इसी प्रकार पत्रकार वह है, जो पत्र या कागज बनाये।

(ङ.) उपाधि-भेद-दोष (Fallacy of Accident)

उपाधि-भेद दोष दो प्रकार

उपाधि-भेद दोष के दो रूप हो सकते हैं। यथा— (१) अनुलोम उपाधि-भेद दोष तथा (२) प्रतिलोम उपाधि-भेद दोष। उपाधि-भेद दोष तब होते हैं, जब वह किसी वस्तु के आकस्मिक गुणों या सम्बन्धों में सत्य बात को उस वस्तु के विषय में सत्य मान लेते हैं।

(१) अनुलोम-उपाधि-भेद दोष (Direct Fallacy of Accident) तब होता है, जब हम उस प्रकार तर्क करने लगें कि जो बात सामान्यतया सत्य होती है, वह कुछ विशेष या आकस्मिक परिस्थितियों में भी सत्य होगी। प्राचीन तर्कशास्त्रियों ने इसको 'Fallacia a dicto simpliciter ad dictum secundum quid का नाम दिया था। अनुलोम-उपाधि-भेद दोष

उदाहरणः— उदाहरण

(१) मनुष्य विचारशील है।
∴ क्रोधित अवस्था में मनुष्य विचारशीलता से काम करता है।

इस युक्ति में अनुलोम उपाधि-भेद दोष है, क्योंकि निष्कर्ष में 'मनुष्य' के साथ 'क्रोधित अवस्था' में होने का आकस्मिक गुण जोड़ दिया गया है, जबकि आश्रय में उस पद के साथ कोई आकस्मिक गुण नहीं जुड़ा है।

(२) व्यायाम करना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। अतः ज्वरग्रस्त मनुष्य को व्यायाम करना चाहिए।

(३) पानी एक द्रव पदार्थ है।
वर्फ पानी है।
∴ वर्फ एक द्रव पदार्थ है।

(४) कोई भी मनुष्य दुःख सहन नहीं करना चाहता। अतः तुम्हारा भाई अपना फोड़ा नहीं चिरवायेगा।

(५) तुम्हें जीवधारी कहना सच है।
तुम्हें गधा कहना तुम्हें जीवधारी कहना है।
तुम्हें गधा कहना सच है।

(६) जो दूसरे मनुष्य कर चुके हैं, उसे कोई भी मनुष्य कर सकता है।

(७) जो दूसरों की हत्या करता है, वह फांसी की सजा पाता है।
सैनिक अपने दुश्मन की हत्या करता है।
∴ सैनिक को फांसी की सजा मिलनी चाहिए।

(२) प्रतिलोम उपाधि-भेद दोष (The converse Fallacy of Accident) तब उत्पन्न होता है, जब हम किसी आकस्मिक परिस्थितियों के सत्य आश्रय पर यह तर्क करने लगें कि वह बात सामान्यतया सच होती है। प्राचीन तर्कशास्त्रियों ने इस दोष को प्रतिलोम उपाधि-भेद दोष

Fallacia a dicto secundum quid ad dictum simpliciter' का नाम दिया है :

उदाहरण

उदाहरण—

(१) यदि मदिरा का बहुत अधिक सेवन किया जाय, तो वह विष होती है।
∴ मदिरा एक विष होती है।

(२) कभी-कभी रोगी व्यक्ति से छिपाने के लिये अथवा दुश्मन को धोखा देने के लिये सत्य बात नहीं कहते।
∴ सत्य बात का न कहना उचित है।

(३) भिखारियों को भीख देने से भिखारीपन में वृद्धि होती है, अतः वह बुरा है।
∴ जिन लोगों को आवश्यकता हो, उन्हें सहायता कभी नहीं देनी चाहिए।

(४) गार्ड चलती गाड़ी पर चढ़ता है। अतः सब यात्रियों के लिए चलती गाड़ी में चढ़ना ठीक है।

(५) बहुत से बेईमान मनुष्य भले प्रकार फल-फूल रहे हैं। अतः बेईमानी करना बुरा नहीं।

(६) शराब पीना बुरा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सर्दी लग जाने पर डाक्टर ने मेरे भाई को शराब पीना बतलाया था।

इसी से मिलता-जुलता एक अन्य दोष भी है, जिसे प्राचीन तर्कशास्त्रियों ने 'Fallacia a dicto secundum quid ad dictum secundum alterum quid' का नाम दिया था। यह दोष तब होता है, जब हम एक उपाधि वाले वर्णन से किसी अन्य उपाधिवाले वर्णन की दिशा में तर्क करने लगें। यथा—

दूसरे के शरीर में (वैमनस्य से) घाव करना बुरा है। डाक्टर चीर फाड़ करते समय दूसरे के शरीर में (अच्छा करने के इरादे से) घाव करता है। अतएव डाक्टर बुरा करता है।

अन्त में, यह बात द्रष्टव्य है कि 'अर्द्ध-तार्किक-आभास' जिनका वर्णन ऊपर किया गया है, भाषा की संदिग्धता से उत्पन्न होते हैं। जितने प्रकार से भाषा में संदिग्धता हो सकती है, उतने ही प्रकार के आभास माने गये हैं। ऐसा भी संभव हो सकता है कि एक दिए हुए

उदाहरण में भाषा की संदिग्धता इस प्रकार की हो कि उसमें एक से अधिक आभास उत्पन्न हो जायँ। ऐसी दशा में उन सभी आभासों का वर्णन करना पड़ता है।

(च) तथा (छ) विभाग का दोष (Fallacy of Division) तथा रचना का दोष (Fallacy of Composition)। विभाग तथा रचना के दोष

जो बात किसी समुदाय के विषय में सामूहिक रूप से सत्य हो, उसे उस समुदाय के भिन्न-भिन्न व्यक्तियों या पदार्थ के विषय में अलग-अलग सत्य मान लेने में विभाग का दोष हो जाता है। इसकी विलोम क्रिया को रचना का दोष कहते हैं। यह दोष तब उत्पन्न होता है जब अ-समूह-वाचक पदों का समूहवाचक पदों के रूप में प्रयोग कर दिया जाय।

विभाग के दोष के उदाहरण ↑ उदाहरण

(१) कालिदास की सब रचनायें एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकतीं।
'अभिज्ञान शाकुन्तल' कालिदास की एक रचना है।
∴ 'अभिज्ञान शाकुन्तल' एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकती।

(२) इस देश के व्यक्ति अकालपीड़ित हैं।
तुम इस देश के एक व्यक्ति हो।
∴ तुम अकालपीड़ित हो।

(३) भारतीय एक सुसंस्कृत जाति है।
'क' भारतीय है।
∴ 'क' एक सुसंस्कृत व्यक्ति है।

(४) इस नगर के निवासी पुरुष, स्त्री तथा बालक हैं। मैं टाउनहॉल में जिनसे मिला, वे इस नगर के निवासी थे।
∴ मैं टाउनहॉल में जिनसे मिला, वे पुरुष, स्त्री तथा बालक थे।

(५) मैं पुस्तक तथा कापी नहीं खरीद सकता।
∴ मैं पुस्तक या कापी नहीं खरीद सकता।

(६) तेरह एक संख्या है।
छः और सात तेरह होते हैं।
∴ छः और सात एक संख्या है।

(७) इस बाग की छाया बड़ी घनी है।
∴ इस बाग का यह बबूल का वृक्ष भी घनी छायावाला है।

(८) पानी से प्यास बुझती है और पानी हाइड्रोजन और

ऑक्सीजन नामक गैसों के मिलने से बनता है। अतः हाई-ड्रोजन और ऑक्सीजन प्यास बुझाने वाले पदार्थ हैं।

रचना के दोष के उदाहरण ।

(१) प्रत्येक व्यक्ति अपना सुख चाहता है।
∴ सब व्यक्ति सबका सुख चाहते हैं।

(२) पांच और आठ विषम और सम संख्यायें हैं।
तेरह पांच और आठ होता है।
∴ तेरह विषम और सम संख्या है।

(३) इन बीस व्यक्तियों में से प्रत्येक एक सेर अन्न का भोजन करता है, अतः ये बीसों मनुष्य एक सेर अन्न खाते हैं।

(४) दर्जी—इस कपड़े में आपका कोट बन सकता है। यदि कमीज की इच्छा हो, तो कमीज बना दूंगा और यदि आप चाहें तो पतलून बनवा लें।
ग्राहक:—अच्छा, एक कोट, एक कमीज और एक पतलून बना देना।

भारतीय न्याय में दोष

§४ भारतीय न्याय में दोष

(क) हेत्वाभास की परिभाषा तथा प्रकार।

परिभाषा

'हेत्वाभास' के दो अर्थ हो सकते हैं। इसका एक अर्थ यह हो सकता है कि जो हेतु की तरह दिखलाई दे, पर वास्तव में हेतु न हो। अर्थात् भ्रमपूर्ण हेतु दोषरहित हेतु की तरह जान पड़े। हेत्वाभास उस भ्रम या दोष को भी कहते हैं, जो किसी हेतु में रहता है, और उसे भ्रमपूर्ण या दोष-युक्त बना देता है। हम यहां 'हेत्वाभास' का उपयोग इसी दूसरे अर्थ में ही करेंगे। अतः दोषपूर्ण हेतु को हेत्वाभास कहते हैं।

पांच प्रकार के हेत्वाभास

नैयायिकों के अनुसार हेत्वाभास पांच होते हैं; यथा—(१) सव्यभिचार, (२) विरुद्ध (३) सत्प्रतिपक्ष, (४) असिद्ध और (५) बाधित। ये हेतु पांच मुख्य दोष बतलाते हैं, जो क्रमशः व्यभिचार, विरोध, प्रतिपक्ष, असिद्धि तथा बाधा हैं। अब हम इन पांचों हेत्वाभासों का पृथक्-पृथक् विवेचन करेंगे।

(ख) सव्यभिचार हेतु।

साध्यविचार

निर्दोष अनुमति तभी हो सकती है, जब लिंग अथवा हेतु साध्य के

साथ अनिवार्यतः सम्बद्ध हो। उन दोनों में नियत-साहचर्य आवश्यक है। नियम से भ्रष्ट होने को व्यभिचार कहते हैं। यदि हेतु इस प्रकार का हो कि वह उपर्युक्त नियम से भ्रष्ट हो गया हो अर्थात् उसका साध्य के साथ नियत साहचर्य न हो, तो ऐसे हेतु को सव्यभिचार हेतु कहते हैं। ऐसा हेतु कभी भी तो साध्य के साथ उपस्थित रहता है और कभी साध्य की अनुपस्थिति में भी उपस्थित रहता है। इस प्रकार के हेतु से साध्य को भी स्थापित किया जा सकता है तथा उसके विलोम को भी। ऐसा हेतु साध्य के साथ सदा उपस्थित नहीं रहता। निम्नलिखित उदाहरण देखिए :—

"ध्वनि नित्य है, क्योंकि उसका स्पर्श नहीं किया जा सकता।" इस उदाहरण में व्याप्ति विपक्ष की वस्तुओं के लिए तो सच है, क्योंकि मेज, पुस्तक, मकान इत्यादि, जिनका स्पर्श किया जा सकता है, वे सब अनित्य हैं। सपक्ष के कुछ उदाहरणों के लिए भी यह व्याप्ति सच है, क्योंकि आत्मा का स्पर्श नहीं किया जा सकता और वह नित्य है। परन्तु निम्नलिखित सपक्ष उदाहरण में व्याप्ति सत्य नहीं है। ज्ञान का स्पर्श नहीं किया जा सकता और वह अनित्य है। अतः 'अस्पर्शता' केवल 'नित्यता' में ही व्याप्त नहीं है, वरन् 'अनित्यता' में भी व्याप्त है।

इस दोष को 'अनैकान्तिक आभास' भी कहते हैं।

सव्यभिचार हेतु तीन प्रकार का हो सकता है। यथा : (१) साधारण, (२) असाधारण (३) अनुपसंहारी।

साधारण व्यभिचार

(१) साधारण व्यभिचार हेतु—उसे कहते हैं, जो सपक्ष तथा विपक्ष दोनों प्रकार के उदाहरणों में पाया जाय अर्थात् जो साध्य की उपस्थिति तथा उसकी अनुपस्थिति दोनों के साथ हो। यथा—"पर्वत पर अग्नि है, क्योंकि वह ज्ञान का विषय है"। "ज्ञान का विषय होना" अग्नि के साथ पाया जाता है। जैसे—रसोईघर, रेल का इंजन इत्यादि ज्ञान के विषय हैं और इनमें अग्नि भी उपस्थित है। अतः हेतु सपक्ष उदाहरणों में पाया जाता है। परन्तु ज्ञान का विषय वे वस्तुएँ भी तो हो सकती हैं, जहाँ अग्नि नहीं है, जैसे—नदी, पुस्तक इत्यादि।

अतः हेतु विपक्ष उदाहरणों में भी उपस्थित है। इसलिए इस हेतु में साधारण व्यभिचार का दोष है।

असाधारण सव्यभिचार

(२) असाधारण सव्यभिचार हेतु—उसे कहते हैं, जो न तो सपक्ष और न विपक्ष उदाहरणों में पाया जाय। साधारण हेतु पक्ष का निजी विशेष गुण होने के कारण पक्ष के सिवा अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। यथा—"शब्द नित्य हैं, क्योंकि उसमें शब्दत्व है।" शब्दत्व तो केवल शब्द का निजी विशेष गुण है। वह शब्द के अतिरिक्त किसी भी नित्य अथवा अनित्य वस्तु में नहीं होता। अतः इस प्रकार के हेतु में असाधारण व्यभिचार का दोष है। एक अन्य उदाहरण देखिए—"देवता अमर हैं, क्योंकि उनमें देवत्व है।" 'देवत्व' तो देवताओं का अपना विशेष गुण है, जो उनके सिवा कहीं भी अन्यत्र नहीं पाया जाता। अतः इस युक्ति में भी असाधारण व्यभिचार का दोष है।

अनुपसंहारी सव्यभिचार

(३) अनुपसंहारी सव्यभिचारहेतु—उसे कहते हैं, जिसके पक्ष में एक जाति की समस्त वस्तुएँ निहित हो जाने के कारण, वह किसी अन्य सपक्ष या विपक्ष उदाहरण में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। यथा—"सब वस्तुओं का अन्त होता है, क्योंकि उनका प्रारम्भ हुआ था।" इसमें पक्ष 'सब वस्तुयें' हैं। कोई भी अन्य वस्तु ऐसी नहीं हो सकती, जो 'सब वस्तुओं' के बाहर हो। अतः उसके हेतु में 'अनुपसंहारी व्यभिचार' का दोष है।

विरुद्ध हेतु

(ग) विरुद्ध हेत्वाभास।

विरुद्ध हेत्वाभास वहां सिद्ध होता है, जहां हेतु से जो बात सिद्ध करनी हो, उससे उल्टी बात सिद्ध हो। यह वह दोषपूर्ण हेतु है, जो कि प्रयोग किया जाता है साध्य को सिद्ध करने के लिये, पर सिद्ध कर बैठता है साध्य के अभाव को। 'शब्द नित्य है, बना हुआ होन के कारण।' 'बना हुआ होना' हेतु तो अनित्य पदार्थों में पाया जाता है, न कि नित्य पदार्थों में। अतः इसके आधार पर शब्द को नित्य नहीं किया जा सकता। इससे तो यह सिद्ध होता है कि शब्द अनित्य है। अतः उल्टी बात सिद्ध होती है। विरुद्ध हेतु सपक्ष दृष्टान्तों में, जहाँ उसे होना चाहिए, नहीं रहता, बल्कि विपक्ष दृष्टान्तों में रहता है, यहां उसे नहीं रहना चाहिए।

विरुद्ध हेतु और साधारण सव्यभिचार हेतु में यह भेद है कि विरुद्ध हेतु कभी भी सपक्ष दृष्टान्तों में नहीं रहता, पर साधारण सव्यभिचार हेतु सपक्ष दृष्टान्तों में रहता है। विरुद्ध तथा साधारण सव्यभिचार में भेद।

विरुद्ध हेतु और असाधारण सव्यभिचार हेतु में यह अन्तर है कि वह विपक्ष दृष्टान्तों में मिलता है, पर असाधारण सव्यभिचार हेतु विपक्ष दृष्टान्तों में कभी नहीं मिलता। विरुद्ध तथा असाधारण सव्यभिचार में भेद।

विरुद्ध हेतु और सव्यभिचार हेतु में यह भेद है कि सव्यभिचार में व्याप्ति केवल अपूर्ण या दोषपूर्ण होती है, पर विरुद्ध में व्याप्ति सर्वथा विरोधपूर्ण होती है। विरुद्ध तथा सव्यभिचार में भेद।

(घ) सत्प्रतिपक्ष हेतु।

यदि किसी साध्य को सिद्ध करने के लिये हम कोई हेतु उपस्थित करें और उसी के साथ हमारे सामने कोई दूसरा हेतु जो ठीक उसी साध्य के अभाव को सिद्ध करता हो, तो पहला हेतु सत्प्रतिपक्ष कहलायेगा। सत्प्रतिपक्ष हेतु

निम्नलिखित दो युक्तियां देखिए:—

'शब्द नित्य है, क्योंकि वह सुना जा सकता है'

'शब्द अनित्य है, क्योंकि वह कार्य है जैसे—घड़ा।'

पहले उदाहरण का हेतु 'शब्द' की 'नित्यता' को स्थापित करता है; दूसरे उदाहरण का हेतु 'शब्द' की अनित्यता को स्थापित करता है। दोनों युक्तियों के निष्कर्ष परस्पर विरोधी हैं। पहला हेतु दूसरे के मुकाबले में अधिक सबल नहीं है; अतः उसे सत्प्रतिपक्ष कहेंगे। इस सम्बन्ध में यह बात ज्ञातव्य है कि इसमें एक निष्कर्ष दूसरे का प्रतिकार होता है। यदि प्रतिपक्ष अधिक बलवान हो जाय, तो पहला हेतु सत्प्रतिपक्ष न कहला कर 'बाधित' कहलाएगा। सत्प्रतिपक्ष तथा बाधित

सत्प्रतिपक्ष तथा विरुद्ध हेत्वाभास में यह अन्तर है कि विरुद्ध में वही एक हेतु साध्य को नहीं, वरन् उसके अभाव को सिद्ध करता है; परन्तु सत्प्रतिपक्ष में दूसरा हेतु साध्य के अभाव को सिद्ध करता है। सत्प्रतिपक्ष तथा विरुद्ध में भेद

(ङ) असिद्ध हेतु।

साध्य की सिद्धि हेतु से होती है। जहां हेतु ही सिद्ध न हो, वहां असिद्ध हेतु

तीन प्रकार का असिद्ध :

साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती। ऐसे हेतु को, जो स्वयं अप्रमाणित हो असिद्ध हेतु कहते हैं तथा उससे उत्पन्न दोष को असिद्धि कहते हैं। यह तीन प्रकार का होता है; यथा–(१) आश्रयासिद्ध, (२) स्वरूपासिद्ध तथा (३) व्याप्यत्वासिद्ध। ये क्रमशः पक्षता, पक्षधर्मता तथा व्याप्ति के दोष हैं।

आश्रयासिद्ध

(१) आश्रयासिद्धः–आश्रयासिद्ध हेतु उस दोषपूर्ण हेतु को कहते हैं, जो कि साध्य को ऐसे आश्रय या पक्ष में सिद्ध करना चाहता है जो कि स्वयं ही असत् या काल्पनिक हो। जिस हेतु का आश्रय या पक्ष ही असिद्ध है, वह आश्रयासिद्ध कहलाता है। हेतु के लिए यह आवश्यक है कि वे हेतु में विद्यमान रहे। परन्तु कोई हेतु ऐसे पक्ष में कैसे विद्यमान रह सकता है, जो स्वयं ही असत् या काल्पनिक हो। यथा—

"आकाश का कमल सुगन्धित होता है, कमल होने के कारण, तालाब के कमल की भांति :" यहां 'आकाश का कमल' पक्ष है। यह पक्ष स्वयं असंभव है। अतः हेतु 'कमल होने के कारण' आश्रयासिद्ध हेतु है। एक अन्य उदाहरण देखिए। "प्रेत सांस लेता है, क्योंकि उसमें प्राण होता है, और जिस किसी में भी प्राण होता है, वह सांस लेता है, जैसे मनुष्य।" यहां पर 'प्रेत' पक्ष है। परन्तु 'प्रेत' है या नहीं, यह बड़ी संदिग्ध बात है। अतः यहां पर आश्रय या पक्ष असिद्ध है। अतः उसके सांस लेने का जो हेतु दिया है, वह आश्रयासिद्ध हेतु है। एक अन्य उदाहरण देखिए–"दुग्ध-सागर श्वेत होता है, क्योंकि उसमें दूध भरा है।" इस युक्ति में पक्ष 'दुग्ध-सागर' है, जो एक काल्पनिक वस्तु है। अतः जब पक्ष ही काल्पनिक है, तो उसमें हेतु का आरोप करना भी कल्पना मात्र होता है।

स्वरूपासिद्ध

(२) स्वरूपासिद्धः—स्वरूपासिद्ध हेतु वह होता है, जिसका स्वरूप ऐसा हो कि वह पक्ष में किसी भी प्रकार रह ही नहीं सकता; जैसे—तालाब में आग है, क्योंकि उसमें धुंआ है और जहां-जहां धुआँ है, वहां वहाँ आग होती है, जैसे रसोईघर में। इस उदाहरण में स्वरूपासिद्ध दोष है, क्योंकि यह स्पष्ट है कि धुंएँ का स्वरूप ऐसा है कि वह तालाब में रह ही नहीं सकता।

आश्रयासिद्ध और स्वरूपासिद्ध हेतु में यह भेद है कि आश्रयासिद्ध में तो पक्ष ही असत् या काल्पनिक होता है, पर स्वरूपासिद्ध में पक्ष तो सत् है, वास्तविक है, पर हेतु का स्वरूप ही ऐसा है कि वह उस पक्ष में रह नहीं सकता। स्वरूपासिद्ध में हेतु और पक्ष की असंगति होती है। इसमें हेतु भी सत् होता है और पक्ष भी होता है। परन्तु इस प्रकार का हेतु होता है कि वह पक्ष में नहीं रह सकता। दोनों में संगति नहीं होती। आश्रयासिद्ध तथा स्वरूपासिद्ध भेद

(३) व्याप्यत्वासिद्धः—यदि हेतु सोपाधिक हो और निरुपाधिक समझ लिया जाय, तो उसे व्याप्यत्वासिद्ध हेतु कहते हैं। इसमें पक्ष सत् होता है, हेतु भी पक्ष में रहता है, पर व्याप्यत्व असिद्ध होता है। इसमें हेतु किसी विशेष स्थिति या उपाधि के होते हुए ठीक होता है, पर उस उपाधि के न होने पर भी सत्य मान लिया जाता है। यथा—'पर्वत धूम्रवान् है, क्योंकि वहां अग्नि है। जहां-जहां अग्नि होती है, वहां-वहां धुआं होता है।' इस उदाहरण में व्याप्ति अशुद्ध है। जहां-जहां आग होती है, वहां-वहां सदैव धुआँ नहीं होता। आग में भले प्रकार तपाये हुए एक लोहे के गोले को लीजिए। उसमें आग है, पर धुआँ नहीं है। अतएव यह व्याप्ति कि 'जहां आग होती है, वहां-वहां धुंआं होता है' केवल एक विशेष 'उपाधि' के रहते हुए ठीक होती है और वह उपाधि है 'गीली लकड़ी का संयोग' अतः इसमें व्याप्यत्वासिद्ध दोष है। व्याप्यत्वासिद्ध

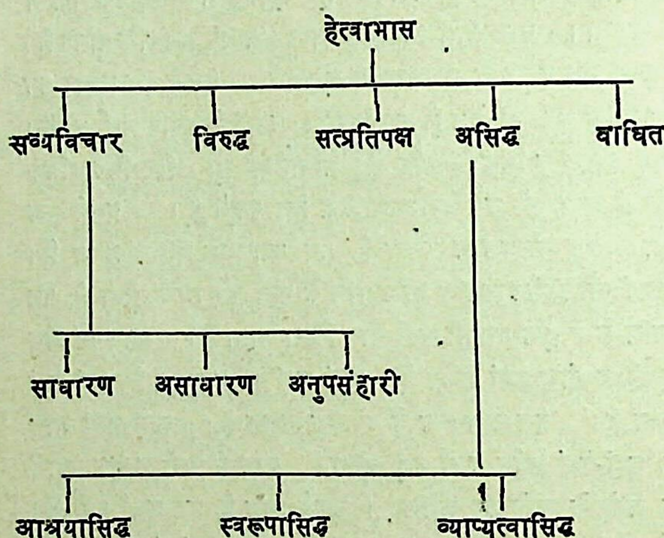
(च) बाधित हेत्वाभास। बाधित

जब हम प्रत्यक्ष या किसी प्रबल प्रमाण से जान लेते हैं कि जिस साधन को हेतु सिद्ध करना चाहता है, वह पक्ष में है ही नहीं, तो वह हेतु बाधित कहलाता है, जैसे 'आग ठंडी है, द्रव्य होने के कारण।' हम प्रत्यक्ष प्रमाण से जानते हैं कि आग में ठंडेपन का अभाव है; वह गरम है; अतएव इस उदाहरण में आग के ठंडेपन में आग के लिए जो हेतु दिया गया है, वह बाधित है।

बाधित और सत्प्रतिपक्ष हेतु में यह अन्तर है कि बाधित में साध्य दूसरे प्रबलतर प्रमाण से असिद्ध हो जाता है, पर सत्प्रतिपक्ष में किसी ऐसे प्रबलतर प्रमाण से साध्य का बोध नहीं होता। सत्प्रतिपक्ष में दोनों युक्तियां समान बल वाली होती हैं। बाधित और सत्प्रतिपक्ष अन्तर

तालिका

सारांश:—इन सभी हेत्वाभासों का प्रदर्शन निम्नांकित तालिका से हो जाता है:—



(६) अन्य तर्क दोष।

जाति, निग्रहस्थान तथा छल

पांच हेत्वाभासों के अतिरिक्त भारतीय विचारकों ने कुछ अन्य तर्क-दोषों का भी वर्णन किया है। **पक्षाभास, प्रतिज्ञाभास** तथा **दृष्टान्ताभास** क्रमशः पक्ष, प्रतिज्ञा एवं दृष्टान्त में दोष उपस्थित होने के कारण होते हैं। वाद-विवाद में अनेक युक्तियां दोषपूर्ण एवं असंगत होती हैं। उन्हें 'जाति' तथा निग्रहस्थान' का नाम दिया जाता है। जो दोष शब्द एवं वाक्यों की रचना के कारण उत्पन्न होते हैं, उन्हें 'छल' कहते हैं। इनके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार के आभास हैं।

परन्तु अधिकांश ग्रन्थों में प्रायः हेत्वाभासों का ही वर्णन मिलता है, तथा अन्य आभासों को छोड़ दिया जाता है। अधिकांश विचारकों का मत ऐसा रहा है कि प्रत्येक आभास को सरल करके किसी-न-किसी हेत्वाभास के अन्तर्गत लाया जा सकता है।

§५ आभास-सम्बन्धी अभ्यास हल करने के लिए संकेत

युक्तियों के दोषों की पकड़ करने के लिए जब उनका परीक्षण किया जाता है, तो प्रारंभ में इस कार्य में विद्यार्थियों को बड़ी कठिनाई होती है। अतः इस स्थान पर इस सम्बन्ध में कुछ संकेत दे देना उपयोगी होगा।

प्रारंभ में जो कठिनाई होती है, उसका विशेष कारण यह है कि तर्क-विद्या के ग्रन्थों के बाहर कोई भी युक्ति पूर्ण तार्किक आकार में नहीं प्राप्त होती। अतः युक्तियों का परीक्षण करने से पूर्व पहला काम यह होता है कि उनमें यथोचित् परिवर्तन करके उन्हें शुद्ध-तार्किक आकार में रक्खा जाय। इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि उसके अर्थ में कोई अन्तर न आने पावे। यहां पर हम केवल न्याय-युक्ति (Syllogism) के दोषों पर ही विचार करेंगे।

न्याय-युक्ति को तार्किक आकार में बदलते समय निम्नलिखित नियमों का पालन किया जाता है:—

(१) सर्वप्रथम न्याय-युक्ति का निष्कर्ष खोजा जाता है। न्याय-युक्ति में निष्कर्ष तीसरा तर्कवाक्य होता है, परन्तु दी हुई युक्ति में वह अपने निश्चित स्थान में नहीं भी हो सकता है। निष्कर्ष 'अतः' 'इसलिये', 'अतएव' इत्यादि शब्दों से प्रारंभ होता है, और आश्रयवाक्य का प्रारंभ 'क्योंकि' इत्यादि शब्दों से होता है। निष्कर्ष का पता चल जाने पर उसे शुद्ध तार्किक आकार में रखते हैं तथा संयोजक को रेखांकित कर देते हैं ताकि उद्देश्य और विधेय का ठीक-ठीक ज्ञान हो सके।

(२) इसके बाद साध्यवाक्य तथा पक्षवाक्य का पता लगाते हैं।

जब निष्कर्ष तार्किक आकार में होता है, तो उसका विधेय साध्य होता है; अतः वह तर्कवाक्य जिसमें निष्कर्ष का विधेय होता है, साध्यवाक्य है। निष्कर्ष का उद्देश्य पक्ष होता है। अतः निष्कर्ष के उद्देश्य को रखनेवाला तर्कवाक्य पक्षवाक्य होता है। साध्यवाक्य तथा पक्षवाक्य दोनों को तार्किक आकार में बदलते हैं।

(३) अन्त में तर्कवाक्य को नियमित क्रम में रखते हैं।

प्रायः न्याय-युक्ति संक्षिप्त-न्याय-युक्ति के रूप में होती है, जिसके कुछ भाग लुप्त होते हैं। अतः उन लुप्त भागों को अपनी ओर से मान लेते हैं।

इस प्रकार न्याय-युक्ति को तार्किक आकार में बदल लेने पर हम इस बात की जांच करते हैं कि न्याय-युक्ति सम्बन्धी नियमों का पालन किया गया है, अथवा नहीं। यह भी देखते हैं कि पदों के अर्थ में सन्दिग्धता तो नहीं है। जहां तक न्याय-युक्ति सम्बन्धी नियमों की बात है, उनमें पदों की व्याप्ति सम्बन्धी नियम अधिक आवश्यक हैं। [न्याय-युक्ति के

सामान्य नियम (३) तथा (४)।] अर्द्धतार्किक-आभासों के सम्बन्ध में न्याय-युक्ति का प्रथम सामान्य नियम (जिसके अनुसार न्याय-युक्ति में तीन और केवल तीन पद होने चाहिए) बड़ा आवश्यक है।

यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि किसी दी हुई युक्ति में आभास का होना अनिवार्य नहीं है। वह युक्ति शुद्ध भी हो सकती है।

अब हम कुछ युक्तियों को हल करेंगे। विद्यार्थियों को स्मरण रखना चाहिए कि आभास का केवल नाम लिख देना ही पर्याप्त नहीं है। उसके साथ में यह बतलाना भी आवश्यक है कि उस युक्ति में वह आभास क्यों है? आभास होने का कारण स्पष्टतया व्यक्त होना चाहिए।

कुछ हल किये हुए अभ्यास

(१) हरि परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकता है, क्योंकि वह बुद्धिमान लड़का है और केवल बुद्धिमान लड़के ही परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं।

उत्तर—इसमें 'हरि परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकता है' यह निष्कर्ष है। इसे तार्किक आकार में व्यक्त करने पर इस प्रकार कहेंगे—हरि एक लड़का है, जो परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकता है। यह 'आ'-तर्कवाक्य है क्योंकि यह स्वीकारात्मक है और इसका उद्देश्य निश्चित पद है, जो कि अपने पूर्ण निर्देश में प्रयुक्त हुआ है।

अब यह स्पष्ट है कि निष्कर्ष का उद्देश्य अर्थात् 'हरि' पक्ष है; अतः वह आश्रयवाक्य जिसमें यह पक्ष होगा, पक्ष वाक्य बनेगा। अतः "वह (अर्थात् हरि) बुद्धिमान लड़का है" पक्षवाक्य होगा। दूसरा तर्कवाक्य जिसमें निष्कर्ष का विधेय (अर्थात् 'जो परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकता है') पद आता है, यह साध्यवाक्य होगा। अतः "केवल बुद्धिमान लड़के ही परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते हैं" यह साध्यवाक्य हुआ। परन्तु यह तर्कवाक्य शुद्ध तार्किक आकार में नहीं है। इसका तार्किक रूप यह होगा—"सब लड़के जो परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं, बुद्धिमान हैं।" यह 'आ'-तर्कवाक्य है।

अतः दी हुई युक्ति को तार्किक आकार में इस प्रकार लिखेंगे :
सब लड़के जो परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं, बुद्धिमान लड़के हैं।
हरि बुद्धिमान लड़का है।
∴ हरि एक लड़का है, जो परीक्षा में उत्तीर्ण होता है।

इसमें हम देखते हैं कि हेतु, 'बुद्धिमान लड़का' (जो दोनों आश्रय वाक्यों में विद्यमान है) एक बार भी आश्रयवाक्यों में व्याप्त नहीं है न्याय-युक्ति के नियमों के अनसार हेतु कम-से-कम एक बार व्याप्त होना

चाहिए। यहां इस नियम का उल्लंघन हुआ है; अतः इस युक्ति में अव्याप्त-हेतु का दोष है।

(२) यह पदार्थ स्वर्ण नहीं हो सकता, क्योंकि यह बहुमूल्य नहीं है।

यह एक संक्षिप्त न्याय-युक्ति है, क्योंकि इसमें तीन के स्थान पर केवल दो तर्कवाक्य हैं। इसका निष्कर्ष 'यह पदार्थ स्वर्ण नहीं हो सकता', तार्किक आकार में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है; 'यह पदार्थ वह नहीं है जो स्वर्ण हो सकता हो।' यह 'ए' तर्कवाक्य है, क्योंकि इसमें निषेध का चिह्न है तथा इसका उद्देश्य निश्चित विशिष्ट पद है।

दिया हुआ आश्रय यह 'बहुमूल्य नहीं है' पक्षवाक्य है, क्योंकि निष्कर्ष का उद्देश्य पदार्थ' इसमें 'यह' सर्वनाम के रूप में प्रयुक्त हुआ है। तार्किक आकार में इसका स्वरूप निम्नलिखित होगा—

'यह पदार्थ स्वर्ण नहीं है।' यह 'ए' तर्कवाक्य है। अब हमें साध्य-वाक्य निश्चित करना है। इस युक्ति का साध्य 'स्वर्ण' है, क्योंकि वह निष्कर्ष का विधेय है। हेतु 'बहुमूल्य' है क्योंकि वह पक्षवाक्य में विद्य-मान है, परन्तु 'पक्ष' नहीं है। अतः हम साध्यवाक्य इस प्रकार बना सकते हैं: 'स्वर्ण बहुमूल्य है।' इसलिये निम्मलिखित न्याय-युक्ति बनती है:

स्वर्ण बहुमूल्य है।
यह पदार्थ बहुमूल्य नहीं है।
∴ यह पदार्थ स्वर्ण नहीं है।

यह युक्ति शुद्ध है क्योंकि यह कामेस्ट्रेस' (Camestres) है, जो कि द्वितीय आकार में सिद्ध संयोग है।

(३) बिल्ली अवश्य ही दूर होनी चाहिए क्योंकि चूहे खेल रहे हैं, और जब बिल्ली दूर होती है, तो चूहे खेलते हैं।

उत्तरः—स्पष्ट है कि "बिल्ली अवश्य ही दूर होनी चाहिए" निष्कर्ष है। 'क्योंकि' से प्रारंभ होनेवाले शेष दोनों तर्कवाक्य आश्रय हैं। जब हम आश्रय का परीक्षण करते हैं तो विदित होता है कि "जब बिल्ली दूर होती है, तो चूहे खेलते हैं" एक हेतुफलाश्रित तर्कवाक्य है, जिसमें 'जब' 'यदि' का समानार्थी है। दूसरा तर्कवाक्य निरपेक्ष है। अतः दी हुई युक्ति हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति के रूप में है। यथा—

यदि बिल्ली दूर होती है, तो चूहे खेलते हैं।
चूहे खेलते हैं।
∴ बिल्ली दूर है।

यह दोषपूर्ण है क्योंकि इसमें **उत्तरांग की स्वीकृति,** (Affirming the Consequent) का दोष है। पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उत्तरांग

को स्वीकार करता है तथा निष्कर्ष साध्यवाक्य के पूर्वांग को स्वीकार कर रहा है। यह नियम-विरुद्ध बात है।

(४) जनरल सेना पर शासन करता है; उसकी पत्नी जनरल पर शासन करती है। अतएव जनरल की पत्नी सेना पर शासन करती है।

उत्तर—तार्किक आकार में रखने से यह युक्ति इस प्रकार होगी—

जनरल वह व्यक्ति है, जो सेना पर शासन करता है।

जनरल की पत्नी वह व्यक्ति है, जो जनरल पर शासन करती है।

∴ जनरल की पत्नी वह व्यक्ति है, जो सेना पर शासन करती है।

इस युक्ति में **चतुष्पदी-दोष** (Fallacy of Four Terms) है, क्योंकि इस न्याय-युक्ति में निम्नलिखित चार पद हैं। यथा—

(१) जनरल (२) वह व्यक्ति जो सेना पर शासन करे (३) जनरल की पत्नी तथा (४) वह व्यक्ति जो जनरल पर शासन करे।

(५) यदि गुण ज्ञान है, तो उसकी शिक्षा दी जा सकती है। परन्तु गुण के शिक्षक कहां हैं?

इस युक्ति को तार्किक आकार में बदल कर इस प्रकार लिखेंगे:—

यदि गुण ज्ञान है, तो उसके शिक्षक होंगे।

गुण के शिक्षक नहीं हैं।

∴ गुण ज्ञान नहीं है।

यह एक हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति है, जिसमें उत्तरांग को अस्वीकार करने पर पूर्वांग को अस्वीकार किया गया है। अतः यह युक्ति शुद्ध है।

(६) वह एक मधुमक्खी है; उसे मत छूओ; वह काट लेगी।

इसका तार्किक आकार निम्नलिखित है:—

यदि तुम मधुमक्खी को छूओगे, तो वह काट लेगी।

तुम मधुमक्खी को छूते हो।

∴ वह काट लेगी।

यह हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष-न्याय-युक्ति शुद्ध है क्योंकि इसमें पूर्वांग को स्वीकार करके उत्तरांग को स्वीकार किया गया है।

(७) चतुर व्यक्तियों को छोड़कर कोई भी भला नहीं और भले व्यक्तियों को छोड़कर कोई भी सुखी नहीं।

तार्किक आकार में व्यक्त करने पर यह न्याय-युक्ति इस प्रकार होगी-

सब भले व्यक्ति चतुर व्यक्ति हैं।

सब सुखी व्यक्ति भले व्यक्ति हैं।
∴सब सुखी व्यक्ति चतुर व्यक्ति हैं।

यह युक्ति 'बार्बारा' (Barbara) प्रथम आकार के सिद्ध संयोग में है; अतः शुद्ध है।

(८) पढ़े-लिखे व्यक्ति कभी-कभी पागल हो जाते हैं; परन्तु क्योंकि वह पढ़ा-लिखा नहीं है, अतः उसके पागल होने का खतरा नहीं है।
(उ. प्र. १९४६)

शुद्ध तार्किक आकार में रखने से निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनेगी:—

'ई' : कुछ पढ़े लिखे व्यक्ति पागल हैं।
'ए' : वह पढ़ा लिखा व्यक्ति नहीं है।
'ए' : ∴वह पागल नहीं है।

इस युक्ति में अवैध-साध्य का दोष है; क्योंकि निष्कर्ष का विधेय अर्थात् साध्य व्याप्त है परन्तु वह साध्यवाक्य में व्याप्त नहीं है।

(९) क्या दुखी व्यक्तियों की सहायता करना पुण्य नहीं है? सचमुच है। पुलिस की हिरासत में जो व्यक्ति हैं, क्या वे दुखी नहीं हैं? तब सचमुच हो मुझे उनको पुलिस की हिरासत से छुड़ाना चाहिए।
(उ. प्र. १९४६)

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है:

सब दुखी व्यक्ति वे व्यक्ति हैं, जिनकी सहायता करनी चाहिए।
पुलिस की हिरासत में ये अपराधी दुखी व्यक्ति हैं।
∴पुलिस की हिरासत में ये अपराधी वे व्यक्ति हैं, जिनकी सहायता करनी चाहिए।

साध्यवाक्य में 'हेतु' 'दुखी व्यक्ति' सामान्य अर्थ में लिखा गया है, परन्तु पक्षवाक्य में उसका अर्थ है: 'किसी अपराध को करने के कारण दुखी' अतः इस युक्ति में उपाधि-भेद दोष है।

(१०) उसको ज्वर है क्योंकि उसका शरीर गर्म है।

इस युक्ति को पूर्ण रूप से व्यक्त करने पर निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:

यदि ज्वर हो, तो शरीर गर्म हो जाता है।
शरीर गर्म हो जाता है।
∴ज्वर है।

इसमें उत्तरांग की स्वीकृति का दोष है।

(११) यदि वह कहता है कि उसने चोरी नहीं की, तो मैं पूछता हूँ

कि उसने अपना सामान छिपाने का प्रयत्न क्यों किया जैसा कोई चोर करने में नहीं चुकता ?

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित होगा :

सब चोर वे व्यक्ति हैं, जो अपना सामान छिपाने का प्रयत्न करते हैं।

वह एक व्यक्ति है, जो अपना सामान छिपाने का प्रयत्न करता है ।

∴ वह चोर है।

स्पष्ट है कि इस युक्ति में **अव्याप्त-हेतु** का दोष, क्योंकि हेतु एक भी आश्रय में व्याप्त नहीं है।

(१२) तुम वह नहीं हो, जो मैं हूँ। मैं एक मनुष्य हूँ । अतः तुम मनुष्य नहीं हो।

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित होगा :

तुम वह नहीं हो, जो मैं हूँ ।

मैं मनुष्य हूँ ।

∴ तुम मनुष्य नहीं हो ।

इस युक्ति में **उपाधि-भेद-दोष** है, क्योंकि हम ऐसी बात से ज़ो किसी एक विशेष परिस्थिति में सत्य हो, एक ऐसी बात पर तर्क करते हैं, जो किसी अन्य परिस्थिति में सत्य हो।

(१३) नौ, 'चार और पांच' है। परन्तु 'चार' और 'पांच' दो संख्यायें हैं। अतः 'नौ' दो संख्यायें हैं।

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित होगा:—

'चार' और 'पांच' दो संख्यायें हैं।

'नौ' 'चार और पांच' हैं ।

∴ 'नौ' दो संख्यायें हैं।

इस युक्ति में 'चार और पांच' अलग-अलग दो संख्यायें हैं, परन्तु 'चार और पांच' सामूहिक रूप में 'नौ' होते हैं। अतः यहां हम व्यष्ट्यर्थ से समष्ट्यर्थ की ओर तर्क कर रहे हैं। इसलिए रचना का दोष है।

(१४) गधे के चार पैर होते हैं। इस मेज के चार पैर हैं, अतः यह मेज गधा है । (उ. प्र. १९५५)

इस युक्ति का आकार निम्नलिखित होगा :—

आ : गधा चतुष्पदी है।

आ : मेज चतुष्पदी है ।

आ : ∴ मेज गधा है।

उपर्युक्त न्याय-युक्ति में हेतु 'चतुष्पदी' एक भी आश्रयवाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः अव्याप्त-हेतु का दोष वर्तमान है।

(१५) उसे निस्संदेह रुपये की आवश्यकता है; क्योंकि यदि वह अमीर है, तो उसे रुपये की आवश्यकता नहीं, परन्तु वह अमीर नहीं है। (उ. प्र. १९५५)

इस युक्ति को तार्किक रूप में व्यक्त करने पर निम्नलिखित हेतुफलाश्रित मिश्र-न्याय युक्ति बनती है:—

यदि वह अमर है, तो उसे रुपये की आवश्यकता नहीं।
वह अमीर नहीं है।
∴ उसे रुपये की आवश्यकता है।

इसका पक्षवाक्य साध्यवाक्य के पूर्वांग को अस्वीकार कर रहा है और निष्कर्ष में साध्यवाक्य के उत्तरांग को अस्वीकार किया गया है। यह नियम विरुद्ध है और इसमें पूर्वांग की अस्वीकृति का दोष विद्यमान है।

(१६) उत्तर प्रदेश बिहार के बगल में है; बिहार बंगाल के बगल में है। अतः उत्तर प्रदेश बंगाल के बगल में है। (उ. प्र. १९५५)

इस युक्ति को शुद्ध तार्किक आकार में व्यक्त करने से निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:—

उत्तर प्रदेश है, जो बिहार के बगल में है।
बिहार वह है, जो बंगाल के बगल में है।
उत्तर प्रदेश वह है, जो बंगाल के बगल में है।

इस युक्ति में निम्नलिखित चार पद हैं:—

(१) उत्तर प्रदेश (२) वह जो बिहार के बगल में है। (३) बिहार (४) वह जो बंगाल के बगल में है। अतः इसमें चतुष्पदी दोष है।

(१७) यह कार्य अनैतिक है, क्योंकि यह सुदृढ़ नैतिक सिद्धान्तों के विरुद्ध है। (उ. प्र. १९५५)

इस युक्ति में आत्माश्रय दोष है, क्योंकि जो निष्कर्ष निकाला गया है, वह आश्रय में पहले से ही मान लिया गया है। 'नैतिक सिद्धांतों के विरुद्ध' बात को ही तो 'अनैतिक' बात कहते हैं। अतः आश्रय और निष्कर्ष दोनों समानार्थी हैं।

(१८) चार और पांच सम और विषम हैं। परन्तु चार और पाँच नौ होते हैं। अतः नौ सम और विषम हैं। (उ. प्र. १९५५)

यह युक्ति इस प्रकार है:—
चार और पांच सम और विषम हैं।
चार और पांच 'नौ' हैं।
∴ 'नौ' सम और विषम हैं।

इस युक्ति में 'चार और पांच' अलग-अलग दो संख्यायें हैं, परन्तु 'चार' और 'पांच' सामूहिक रूप से 'नौ' होते हैं। निष्कर्ष प्राप्त करने में हम व्यष्ट्यर्थ से समष्ट्यर्थ पर पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः रचना का दोष है।

(१९) सभी मनुष्य मर्त्य हैं, सभी कुत्ते मर्त्य हैं। अतः कुछ कुत्ते मनुष्य हैं। **(उ. प्र. १९५५)**

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित होगा:—
सर्व मनुष्य मर्त्य हैं।
सब कुत्ते मर्त्य हैं।
∴ कुछ कुत्ते मनुष्य हैं।

यहां पर हेतु (मर्त्य) एक भी आश्रयवाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः अव्याप्त हेतु का दोष उपस्थित है,

(२०) दूध सफेद है; सफेद एक रंग है; अतः दूध रंग है। **(उ. प्र. १९५५)**

इस युक्ति का तार्किक आकार इस प्रकार है:—
सफेदी एक रंग है।
दूध सफेद है।
∴ दूध एक रंग है।

इस युक्ति में चार पद हैं। (१) सफेदी (२) रंग (३) दूध (४) सफेद। अतः चतुष्पदी दोष है।

(२१) पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है; चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है, अतएव चन्द्रमा सूर्य की परिक्रमा करता है। **(उ. प्र. १९४५, १९५३)**

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है:—
पृथ्वी वह है, जो सूर्य की परिक्रमा करती है।
चन्द्रमा वह है, जो पृथ्वी की परिक्रमा करता है।
∴ चन्द्रमा वह है जो सूर्य की परिक्रमा करता है।

इस न्याय-युक्ति में चार पद हैं; यथा—
(१) पृथ्वी (२) वह जो सूर्य की परिक्रमा करती है, (३) चन्द्रमा (४) वह जो पृथ्वी की परिक्रमा करता है: अतः चतुष्पदी दोष है।

(२२) पानी तरल पदार्थ है; बरफ पानी है, अतएव बरफ तरल है। (उ. प्र. १९५३)

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है—

पानी तरल है।
बरफ पानी है।
∴ बरफ पानी है।

इस युक्ति में साध्यवाक्य में प्रयुक्त हेतु तो सामान्य दशा में उपयुक्त है, परन्तु पक्षवाक्य में हेतु एवं विशेष दशा में प्रयुक्त हुआ है। पानी सामान्यतया तरल होता है; परन्तु बरफ को पानी कहना एक आकस्मिक अथवा विशेष परिस्थिति (अर्थात् 0°C तक शीतल किया गया पानी) है। अतः इस युक्ति में अनुलोम उपाधि-भेद दोष है।

(२३) मेरा हाथ मेज को छूता है और मेज पृथ्वी को छूती है। अतएव मेरा हाथ पृथ्वी को छूता है। (उ. प्र. १९५४)

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है:—
मेरा हाथ वह है, जो मेज को छूता है।
मेज वह है, जो पृथ्वी को छूती है।
∴ मेरा हाथ वह है जो मेज को छूता है।

इसमें चार पद हैं, यथा—(१) मेरा हाथ (२) वह जो मेज को छूता है। (३) मेज (४) वह जो पृथ्वी को छूती है। अतः चतुष्पदी दोष है।

(२४) वह अवश्य ही हिन्दू है, क्योंकि वह भारतीय है और केवल भारतीय ही हिन्दू होते हैं। (उ. प्र. १९५४)

इस युक्ति का तार्किक रूप निम्नलिखित है:—
सब हिन्दू भारतीय हैं।
वह भारतीय है।
∴ वह हिन्दू है।

इस युक्ति में हेतु ('भारतीय') न तो साध्यवाक्य में और न पक्षवाक्य में व्याप्त है अतः अव्याप्त हेतु का दोष उपस्थित हो गया है।

(२५) सुरेश सज्जन है, क्योंकि वह धर्मात्मा है और धर्मात्मा ही सज्जन होते हैं। (उ. प्र. १९५४)

21

इस युक्ति का शुद्ध तार्किक रूप देने से निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है:—

सब सज्जन धर्मात्मा हैं।
सुरेश धर्मात्मा हैं।
∴ सुरेश सज्जन हैं।

इसमें हेतु ('धर्मात्मा') दोनों आश्रय-वाक्यों में से एक में भी व्याप्त नहीं है। अतः युक्ति दोषपूर्ण है और उसमें अव्याप्त हेतु का दोष है।

(२६) सजधज कर रहनेवाले ही धनी होते हैं। वह सज-धजकर रहता है। अतः वह धनी है। (उ. प्र. १९५३)

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है—

सब धनी (व्यक्ति) सजधज कर रहने वाले (व्यक्ति) हैं।
वह सजधज कर रहनेवाला (व्यक्ति) है।
∴ वह धनी (व्यक्ति) है।

इस युक्ति में हेतु अर्थात् 'सजधज कर रहने वाले व्यक्ति' एक भी आश्रय वाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः इसमें अव्याप्त हेतु का दोष है।

(२७) भारतीय शान्तिप्रिय जाति है। श्री जयकर भारतीय हैं। इसलिये वे भी शान्तिप्रिय हैं। (उ. प्र. १९५४)

तार्किक आकार—

भारतीय (जाति) शान्तिप्रिय है।
श्री जयकर भारतीय हैं।
∴ श्री जयकर शांतिप्रिय हैं।

इस न्याय-युक्ति के साध्यवाक्य में 'शांतिप्रियता' की बात भारतीयों के विषय में सामूहिक रूप से सत्य मानी गई है। परन्तु निष्कर्ष में वह बात भारतीय-समुदाय के अलग अलग सदस्यों (यथा—श्री जयकर) के विषय में सत्य बतलाई गई है। अतः युक्ति दोषपूर्ण हो गई है और उसे विभाग का दोष उपस्थित है।

(२८) त्रिभुज के सब कोण दो समकोण के बराबर हैं। यह कोण एक त्रिभुज का कोण है। इसलिए यह दो समकोण के बराबर है। (उ. प्र. १९५३)

इस युक्ति का तार्किक आकार निम्नलिखित है—

त्रिभुज के सब कोण दो समकोण के बराबर हैं।
यह कोण त्रिभुज का एक कोण है।
∴ यह कोण दो समकोण के बराबर है।

इस युक्ति में 'दो समकोण के बराबर होने' की बात त्रिभुज के तीनों कोणों के एक साथ सम्मिलित करने पर ही सत्य होती है, परन्तु निष्कर्ष में वही बात त्रिभुज के एक कोण के बारे में सत्य बतलाने का प्रयत्न किया गया है। अतः इस युक्ति में विभाग का दोष वर्तमान है।

(२९) भगवान ने मनुष्य को बनाया; मनुष्य ने पाप को बनाया, अतएव भगवान ने पाप को बनाया। (उ. प्र. १९५२)

यह युक्ति इस प्रकार है:—

भगवान वह है, जिसने मनुष्य को बनाया।
मनुष्य वह है, जिसने पाप को बनाया।
∴ भगवान वह है, जिसने पाप को बनाया।

इसमें निम्नलिखित चार पद हैं :— (१) भगवान, (२) वह जिसने मनुष्य को बनाया, (३) मनुष्य, (४) वह जिसने पाप को बनाया। अतः युक्ति में चतुष्पदी दोष है।

(३०) सुकरात ज्ञानी था और केवल ज्ञानी ही सुखी होते हैं। अतः सुकरात सुखी था। (उ. प्र. १९५२)

इस युक्ति को तार्किक आकार में बदलने से निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है :—

सब सुखी (व्यक्ति) ज्ञानी हैं।
सुकरात ज्ञानी है।
∴ सुकरात सुखी है।

इसमें हेतु 'ज्ञानी' है, जो एक भी आश्रय-वाक्य में व्याप्त नहीं है, अतः युक्ति में अव्याप्त हेतु दोष है।

(३१) यदि कोई अपराधी है, तो वह भय से कांपता है। यह अभियुक्त भय से कांप रहा है। अतः यह अपराधी है। (उ. प्र. १९५२)

इस युक्ति को तार्किक रूप देने से निम्नलिखित हेतु फलाश्रित न्याय युक्ति बनती है:—

यदि कोई अपराधी है, तो वह भय से कांपता है।
यह अभियुक्त भय से कांपता है।
∴ यह अभियुक्त अपराधी है।

यहां पक्षवाक्य में साध्यवाक्य के उत्तरांग को स्वीकार करने के निष्कर्ष में साध्यवाक्य के पूर्वांग को स्वीकार किया है। यह नियम-विरुद्ध है। अतः युक्ति में उत्तरांग की स्वीकृति का दोष है।

(३२) फ्रेंच बड़े नम्र होते हैं। मार्टिन, फ्रेंच होने के कारण, अति नम्र हैं। (उ. प्र. १९५१)

इस युक्ति का तार्किक-आकार निम्नलिखित है—

फ्रेंच नम्र हैं।
मार्टिन फ्रेंच है।
∴ मार्टिन नम्र है।

इस युक्ति के साध्यवाक्य में नम्रता का गुण 'फ्रेंच' पद के सामूहिक रूप के लिये समर्थित है, परन्तु निष्कर्ष में वह फ्रेंच जाति के एक सदस्य (मार्टिन) के संबंध में सत्य कहा गया है। अतः विभाग का दोष है।

(३३) सब मनुष्य स्वतन्त्र होने चाहिये, क्योंकि स्वतन्त्रता का हर मनुष्य को अधिकार है। (उ० प्र० १९५१)

इस युक्ति में आश्रय-वाक्य में जो बात स्वीकार कर रक्खी है, वही बात निष्कर्ष में व्यक्त है। अतः इसमें आत्माश्रय का दोष है।

(३४) सत्य की सदैव विजय होती है। यह सिद्धान्त सत्य होना चाहिए, क्योंकि इसकी विजय हुई है। (उ. प्र. १९५१)

इस युक्ति को तार्किक आकार में व्यक्त करने पर निम्नलिखित न्याय-युक्ति बनती है—

सत्य की सदैव विजय होती है।
इस सिद्धांत की विजय होती है।
∴ यह सिद्धांत सत्य है।

उपर्युक्त युक्ति में हेतु एक भी आश्रयवाक्य में व्याप्त नहीं है। अतः अव्याप्त-हेतु का दोष है।

(३५) किसी निर्दोषी को दण्ड का भागी नहीं बनना चाहिए। इस मनुष्य को दण्ड का भागी नहीं बनना चाहिए। अतः यह निर्दोष है। (उ. प्र. १९४८)

इस युक्ति को निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति में व्यक्त किया जा सकता है।

यदि कोई व्यक्ति निर्दोष है, तो उसे दंड का भागी नहीं बनना चाहिए।
इस मनुष्य को दंड का भागी नहीं बनना चाहिए।
∴ यह मनुष्य निर्दोष है।

उपर्युक्त युक्ति का पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उत्तरांग को स्वीकार कर

रहा है तथा निष्कर्ष साध्यवाक्य के पूर्वांग को स्वीकार कर रहा है। यह नियम विरुद्ध है। अतः उत्तरांग की स्वीकृति का दोष उपस्थित है।

तार्किक आकार—

(३६) उद्यान के सब वृक्ष एक घनी छाया देते हैं। यह एक उद्यान का वृक्ष है। अतः यह वृक्ष घनी छाया देता है। (उ. प्र. १९४८)

उद्यान के सब वृक्ष घनी छाया देते हैं।
यह वृक्ष उद्यान का वृक्ष है।
∴ यह वृक्ष घनी छाया देता है।

साध्यवाक्य में 'घनी-छाया देने' की बात वृक्षों के समुदाय के विषय में सामूहिक रूप से सत्य है। परन्तु निष्कर्ष में यह बात प्रत्येक वृक्ष के लिए अलग-अलग सत्य मान ली गई है। अतः इस युक्ति में विभाग का दोष है।

(३७) यदि मनुष्यों को कर्म-स्वातन्त्र्य है, तो वे अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं। परन्तु मनुष्यों को कर्म-स्वातन्त्र्य नहीं है। अतः वे अपने कार्यों के लिये उत्तरदायी नहीं हैं। (उ. प्र. १९४७)

इस युक्ति को तार्किक आकार देने पर निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति बनती है:—

यदि मनुष्यों को कर्म-स्वातंत्र्य है, तो वे अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं।
मनुष्य को कर्म-स्वातंत्र्य नहीं है।
∴ मनुष्य अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं है।

इस युक्ति में पक्षवाक्य हेतुफलाश्रित साध्य-वाक्य के पूर्वांग को अस्वीकार कर रहा है। और निष्कर्ष में साध्यवाक्य के उत्तरांग को अस्वीकार किया गया है। यह हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति के नियमों के विरुद्ध है। अतः इस युक्ति में पूर्वांग की अस्वीकृति का दोष है।

(३८) जहां धुंआं होता है, वहां आग होती है। इसलिये बिजली के बल्ब में भी धुंआं होगा, क्योंकि उसमें आग है। (उ. प्र. १९४५)

इस युक्ति को तार्किक आकार में रखने पर निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति बनती है:—

यदि किसी स्थान पर धुआँ होता है, तो वहां आग होती है।
बिजली के बल्व में आग है।
∴ बिजली के बल्व में धुंआँ है।

इसमें पक्षवाक्य हेतुफलाश्रित साध्यवाक्य के उत्तरांग को स्वीकार

कर रहा है तथा निष्कर्ष में साध्यवाक्य के पूर्वांग को स्वीकार किया गया है। यह नियम-विरुद्ध है। अतः इस युक्ति में उत्तरांग की स्वीकृति का दोष हो गया है।

(३९) मोटरकार साइकिल नहीं है, अतः मोटरकार का मालिक साइकिल का मालिक नहीं है। (उ. प्र. १९५६)

इस युक्ति में केवल एक आधारवाक्य से निष्कर्ष प्राप्त किया गया है। आधारवाक्य के उद्देश्य और विधेय को मिश्र-धारणा का रूप दिया गया है। अतः अनन्तरानुमान की यह युक्ति मिश्र-धारणानुमान (Inference by Complex Conception) की है। परन्तु उद्देश्य और विधेय के अर्थों में विभिन्नता आ गई है। अतः युक्ति दोषपूर्ण है।

(४०) कोई भी स्त्री एक्का नहीं हांकती; कुछ स्त्रियां पी-एच० डी० हैं, अतः कोई भी पी-एच० डी० एक्का नहीं हांकता। (उ.प्र. १९५६)

तार्किक आकारः—

कोई भी स्त्री एक्का नहीं हांकती। 'ए'
कुछ स्त्रियां पी-एच० डी० हैं। 'इ'
∴ कोई भी पी-एच० डी० एक्का नहीं हांकता। 'ए'

इस युक्ति में पक्ष 'पी-एच० डी०' पक्षवाक्य में व्याप्त परन्तु वह निष्कर्ष में व्याप्त हो गया है। अतः अवैध पक्ष का दोष (Fallacy of illicit minor) है।

(४१) सब कौवे काले होते हैं। कोई भी कुत्ता काला नहीं होता है, क्योंकि कोई भी कुत्ता कौवा नहीं है।

तार्किक आकारः—

सब कौवे काले हैं। 'आ'
कोई भी कुत्ता कौवा नहीं है। 'ए'
∴ कोई भी कुत्ता काला नहीं है। 'ए'

इस युक्ति में 'साध्य' का साध्यवाक्य 'आ' का विधेय होने के कारण, उसमें व्याप्त नहीं है, परन्तु निष्कर्ष में 'ए' वाक्य का विधेय होने के कारण व्याप्त है। अतः अवैध साध्य का दोष (Fallacy of illicit major) है।

(४२) कुछ मनुष्य अनपढ़ नहीं हैं, क्योंकि कोई भी शिक्षक अनपढ़ नहीं है और सब शिक्षक मनुष्य हैं।

तार्किक आकार:—

कोई भी शिक्षक अनपढ़ नहीं है। 'ए'
सब शिक्षक मनुष्य हैं। 'आ'
∴ कुछ मनुष्य अनपढ़ नहीं है। 'ओ'

इसमें न्याय-युक्ति के किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। अतः युक्ति शुद्ध है। यह तृतीय आकार में फेलाप्तोन के सिद्ध-संयोग में है।

(४३) हम लोगों को कदापि झूठ बोलना नहीं चाहिए; क्योंकि झूठ बोलना हमारा कर्त्तव्य नहीं है। (उ. प्र. १९५६)

इस युक्ति में निष्कर्ष आधार वाक्य को ही दूसरे शब्दों में व्यक्त करके प्राप्त किया गया है। अतः इसमें आत्माश्रय का दोष है।

(४४) 'दो' एक छोटी संख्या है; 'सौ' पचास बार 'दो' है। अतः सौ एक छोटी संख्या है।

तार्किक आकार—:—

'दो एक छोटी संख्या है। 'आ'
'सौ' 'पचास वार दो' है। 'आ'
∴ 'सौ' एक छोटी संख्या है। 'आ'

इस युक्ति में निम्नलिखित चार पद हैं:—(१) 'दो' (२) 'छोटी संख्या' (३) सौ तथा (४) 'पचास वार दो'। अतः इसमें चतुष्पदी दोष है।

(४५) बाल-विवाह निरोध सम्बन्धी तर्क मूल्यहीन हैं, क्योंकि हमारे पूर्व-पुरुष निर्बोध नहीं थे।

इस युक्ति में अर्थान्तर कादोष है, जिसे लोक प्रतियुक्ति (argumentum ad populum) कहते हैं। भावनाओं को उत्तेजित करके निष्कर्ष को सत्य मानने का प्रयत्न किया गया है। (इस प्रसंग में देखिए तर्कविद्या प्रवेशिका, द्वितीय भाग: आगमन, प्रकरण १४,§४, (२) (ख)

(४६) यदि शासक सम्प्रदाय का आदर्श ठीक हो तो जनता प्रसन्न रहेगी। क्योंकि जनता प्रसन्न है, शासक सम्प्रदाय का आदर्श अवश्य ठीक है।

इस युक्ति को तार्किक रूप देने पर निम्नलिखित हेतुफलाश्रित न्याय-युक्ति बनती है—

यदि शासक सम्प्रदाय का आदर्श ठीक हो, तो जनता प्रसन्न रहेगी। (साध्यवाक्य)

जनता प्रसन्न है। (पक्षवाक्य)

∴ शासक सम्प्रदाय का आदर्श अवश्य ठीक है। (निष्कर्ष)

उपर्युक्त युक्ति में पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उत्तरांग को स्वीकार कर रहा है और निष्कर्ष में साध्यवाक्य का पूर्वांग स्वीकृत हुआ है। यह नियम-विरुद्ध है और इस युक्ति में उत्तरांग की स्वीकृति का दोष है।

(४७) कुछ कपड़े लाल हैं; कुछ कपड़े हरे हैं; अतः कुछ लाल कपड़े हरे हैं। (उ. प्र. १९५७)

तार्किक आकार—

इ : कुछ कपड़े हरे हैं।
इ : कुछ कपड़े लाल हैं।
इ : कुछ लाल कपड़ें हरे हैं।

इस युक्ति में हेतु 'कपड़े' एक भी आधार-वाक्य में व्याप्त नहीं है अतएव अव्याप्त हेतु का दोष है।

(४८) श्री डालमिया जैन अवश्य ही दरिद्र हैं, क्योंकि भारतवासी दरिद्र हैं और श्री जैन भारतवासी हैं। (उ. प्र. १९५७)

तार्किक आकार—

सब भारतवासी दरिद्र हैं।
श्री डालमियां जैन भारतवासी हैं।
∴ श्री डालमियां जैन दरिद्र हैं।

इस युक्ति में विभाग का दोष (Fallacy of Division) है, क्योंकि दरिद्रता की बात भारतवासियों के विषय में सामूहिक रूप से सत्य हो सकती है, परन्तु विभिन्न भारतवासियों के विषय में व्यक्तिगत रूप से सत्य मान लेना उचित नहीं है।

(४९) कुछ तृणभोजी जानवर हिंसक नहीं हैं, क्योंकि कोई भी खरगोश हिंसक नहीं है और सब खरगोश तृणभोजी जानवर हैं। (उ. प्र. १९५७)

तार्किक स्वरूप:—

ए : कोई भी खरगोश हिंसक नहीं है।
आ : सब खरगोश तृणभोजी जानवर हैं।
ई : कुछ तृणभोजी जानवर हिंसक नहीं हैं।

यह युक्ति तृतीय आकार में 'फेज़ाप्तोन' के शुद्ध संयोग में है।

(५०) क्योंकि सभी राजनीतिविद् शिक्षित व्यक्ति हैं और सभी शिक्षित व्यक्ति ज्ञानी हैं। अतः सभी ज्ञानी राजनीतिविद् हैं।

तार्किक स्वरूप—

आ : सब राजनीतिविद् शिक्षित व्यक्ति हैं।
आ : सब शिक्षित व्यक्ति ज्ञानी हैं।
आ : सब ज्ञानी व्यक्ति राजनीतिविद् हैं।

इस युक्ति में निष्कर्ष का उद्देश्य (ज्ञानी व्यक्ति) व्याप्त है, परन्तु यह पद पक्षवाक्य में 'आ' का विधेय होने के कारण अव्याप्त है। अतः इस युक्ति में अवैध पक्ष का दोष है।

(५१) सभी शिक्षक श्रद्धाभाजन हैं; कुछ शिक्षक स्वार्थपर हैं, अतः कुछ स्वार्थपर व्यक्ति श्रद्धाभाजक हैं।

तार्किक स्वरूप—

आ : सब शिक्षक श्रद्धाभाजन हैं।
ई : कुछ शिक्षक स्वार्थपर हैं।
ई : कुछ स्वार्थपर व्यक्ति श्रद्धाभाजन हैं।

यह युक्ति तृतीय आकार में 'दातीसी' नामक सिद्ध-संयोग में है। अतः शुद्ध है।

(५२) जल तरल पदार्थ है; हाइड्रोजन और आक्सीजन से ही जल बनता है; अतः हाइड्रोजन और आक्सीजन तरल पदार्थ हैं।

तार्किक स्वरूप—

जल तरल पदार्थ है।
हाइड्रोजन और आक्सीजन जल है।
∴ हाइड्रोजन और आक्सीजन तरल पदार्थ हैं।

इस युक्ति में विभाग का दोष है, क्योंकि जो बात हाइड्रोजन और आक्सीजन के सम्मिलित रूप के लिए सत्य है, उससे उनके व्यष्ट्यर्थ के रूप में सत्य होने का निष्कर्ष निकाला गया है।

(५३) चिकित्सकों का मत है कि दूध एक परिपूर्ण तथा स्वास्थ्यप्रद खाद्य है। अतएव हैजे के मरीज को आप सदैव दूध दे सकते हैं। (उ. प्र. १९६८)

इस युक्ति में उपाधि-भेद दोष है, क्योंकि जो बात सामान्य रूप में सत्य है, उसे एक विशेष उपाधि युक्त परिस्थिति में सत्य मान लिया गया है।

(५४) दो और तीन पांच होते हैं। किन्तु दो और तीन दो संख्यायें हैं। इसलिए पांच भी दो संख्यायें हैं।

तार्किक स्वरूप:—

दो और तीन दो संख्यायें हैं।
दो और तीन पांच हैं।
∴ पांच दो संख्यायें हैं।

इस युक्ति में, दो और तीन व्यक्ति के अर्थ में दो संख्यायें हैं, परन्तु जब दो और तीन को पांच मानते हैं, तो उन्हें समष्टि के अर्थ में समझना पड़ता है। अतः निष्कर्ष प्राप्त करने में हम व्यष्ट्यर्थ से समष्ट्यर्थ पर पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः युक्ति में रचना का दोष है।

(५५) स्नान स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। अतः इन्फ्लुएँजा का रोगी यदि स्नान करेगा, तो स्वस्थ हो जायगा (उ. प्र. १९५९)

इस युक्ति में उपाधि-भेद दोष है।

सामान्य दशाओं में स्नान अवश्य ही स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होता है, परन्तु इन्फ्लुएँजा का रोगी सामान्य दशा का व्यक्ति नहीं है। अतः जो बात सामान्य दशा में सत्य है,उसे विशेष दशा में सत्य मान लेने से दोष उत्पन्न हो गया है।

(५६) सभी घोड़े प्राणी हैं। सभी चिड़ियां प्राणी हैं। अतः सभी चिड़ियां घोड़े हैं। (उ. प्र. १९५९)

तार्किक स्वरूप—

सब घोड़े प्राणी हैं।	'आ'
सब चिड़ियां प्राणी हैं।	'आ'
∴ सब चिड़ियां घोड़े हैं।	'आ'

इस युक्ति में हेतु 'प्राणी' दोनों साधारण वाक्यों में 'आ' वाक्य का विधेय होने के कारण अव्याप्त है। अतः युक्ति में अव्याप्त हेतु का दोष हो गया है।

(५७) सभी अंग्रेज सभ्य हैं। कोई भारतीय अंग्रेज नहीं है। अतः कोई भारतीय सभ्य नहीं है।

तार्किक आकार—

सब अंग्रेज सभ्य हैं। 'आ'
कोई भारतीय अंग्रेज नहीं है। 'ए'
∴ कोई भारतीय सभ्य नहीं है। 'ए'

इस युक्ति में साध्य 'सभ्य' साध्यवाक्य में, 'आ' वाक्य का विधेय होने के कारण व्याप्त नहीं है, परन्तु निष्कर्ष में 'ए' वाक्य का विधेय होने के कारण व्याप्त हो गया है। अतः अवैध साध्य का दोष है।

(५८) अफीम निद्रा-उत्पादक है, क्योंकि उसके खाने से नींद आती है।

(उ. प्र. १९६०)

तार्किक आकार—

अफीम खाने से नींद आती है।
∴ अफीम निद्रा-उत्पादक है।

इस युक्ति के निष्कर्ष में वही बात कही गई है, जो आधारवाक्य में है। अतः युक्ति में आत्माश्रय दोष है।

(५९) राजा देश पर शासन करता है; रानी राजा पर शासन करती है। इसलिए रानी देश पर शासन करती है। (उ.प्र.१९६०)

तार्किक आकार—

राजा वह है, जो देश पर शासन करता है।
रानी वह है, जो राजा पर शासन करती है।
∴ रानी वह है, जो देश पर शासन करती है।

इस युक्ति में निम्नलिखित चार पद हैं—(१) राजा, (२) वह जो देश पर शासन करता है, (३) रानी और (४) वह जो राजा पर शासन करती है। अतः युक्ति में चतुष्पदी दोष है।

(६०) आत्महत्या पाप नहीं हो सकती, क्योंकि वह ऐच्छिक मृत्यु है और वीरों ने प्रसन्नता से ऐच्छिक मृत्यु को गले लगाया है।

(उ. प्र. १९६०)

इस युक्ति का विश्लेषण करने पर विदित होता है कि किसी विशेष परिस्थिति में वीरों ने ऐच्छिक मृत्यु को गले लगाया है। वह विशेष परिस्थिति देश, जाति अथवा सम्मान की रक्षा के उद्देश्य से उत्पन्न हुई होगी। अतः जो बात इन विशेष परिस्थितियों में सत्य हो सकती है, उसे निष्कर्ष में सामान्य परिस्थिति में सत्य मान लेने से युक्ति में उपाधि-भेद दोष उत्पन्न हो गया है।

(६१) एक मनुष्य रोटी अथवा चावल अथवा फल अथवा किसी विशेष प्रकार के खाद्य पदार्थ के बिना जीवित रह सकता है। इसलिए वह बिल्कुल भोजन के बिना ही जीवित रह सकता है।

(उ. प्र. १९६०)

इस युक्ति में विभिन्न प्रकार के भोजनों का आधारवाक्य में व्यष्टि के अर्थ में प्रयोग हुआ है परन्तु निष्कर्ष में समष्टि के अर्थ में प्रयोग किया गया है। अतः युक्ति में रचना का दोष है।

(६२) उसका इस विद्यालय में प्रवेश हो जायगा क्योंकि इस विद्यालय में केवल प्रथम श्रेणी वालों का ही प्रवेश होता है। (उ. प्र. १९६०)

तार्किक आकार—

इस विद्यालय में प्रवेश पानेवाले सब छात्र प्रथम श्रेणी वाले छात्र हैं।

वह प्रथम श्रेणी वाला छात्र है।

∴ वह इस विद्यालय में प्रवेश पानेवाला छात्र है।

इस युक्ति में, हेतु 'प्रथम श्रेणी वाला छात्र' दोनों आधारवाक्य में "आ" वाक्यों के विधेय के स्थान पर होने से, अव्याप्त है। अतः युक्ति में अव्याप्त हेतु का दोष है।

युक्तियों का परीक्षण :

(६३) टैगोर की सब पुस्तकें एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकतीं। गीतांजलि टैगोर की एक पुस्तक है। इसलिए यह भी एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकती। (उ. प्र. १९६१)

युक्ति का तार्किक स्वरूप निम्नलिखित है;

E : टैगोर की सब पुस्तकें एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकतीं।

A : गीतांजलि टैगोर की एक पुस्तक है।

B : गीताजंलि एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकती।

उपर्युक्त में 'टैगोर की पुस्तकें' साध्यवाक्य में समष्टि के अर्थ में ली गई है तथा पक्षवाक्य में व्यष्टि के अर्थ में। अतः युक्ति में विभाग का दोष (fallacy of Division) है।

(६४) शराब स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं हो सकती; क्योंकि डाक्टर कभी-कभी रोगियों के लिए शराब पीना निर्धारित करते हैं। (उ. प्र. १९६१)

यह युक्ति इस प्रकार है : औषधि के रूप में तथा डॉक्टर के परामर्श से निश्चित मात्रा में शराब का उपयोग हानिकारक नहीं होता। इससे यह निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया गया है कि किसी भी दशा में और किसी भी मात्रा में शराब का पीना हानिकारक नहीं हो सकता। अतः युक्ति में उपाधि-भेद दोष (fallacy of accident) है।

(६५) झूठ बोलना अनुचित है क्योंकि वह सदाचार के नियमों के विरुद्ध है। (उ. प्र १९६१, ६६)

इस युक्ति का तार्किक स्वरूप निम्नलिखित है:

झूठ बोलना सदाचार के नियमों के विरुद्ध है।

∴ झूठ बोलना अनुचित है।

जो बात 'सदाचार के नियमों के विरुद्ध' होती है, उसी को 'अनुचित' कहते हैं। अतः इस युक्ति के निष्कर्ष में वही बात व्यक्त की गई है जो आश्रयवाक्य में पहले से ही वर्तमान है। इसलिए युक्ति में आत्माश्रय दोष (fallacy of Petitio principii) है।

(६६) साम्यवाद के सिद्धान्त अवश्य ही सत्य हैं, क्योंकि इसने बड़े-बड़े सामाजिक तथा राजनैतिक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं।

इस युक्ति में, इस आधार पर कि साम्यवाद ने बड़े-बड़े सामाजिक तथा राजनैतिक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं, यह निष्कर्ष निकला गया है कि साम्यवाद के सिद्धांत अवश्य हीं सत्य हैं। जो निष्कर्ष निकाला गया है, वह आधारवाक्य से किसी भी प्रकार फलित नहीं किया जा

सकता। अतः युक्ति में अर्थान्तर का दोष (fallacy of Ignoratio Elenchi) है।

(६७) किसी उद्योग में सफलता प्राप्त करने के लिए एक मनुष्य को या तो बहुत परिश्रमी या बहुत चालाक होना चाहिए। वह बहुत परिश्रमी है तथा उद्योग में बहुत सफल हुआ है। इसलिए वह चालाक नहीं हो सका। (उ. प्र. १९६१)

युक्ति का तार्किक स्वरूप निम्नलिखित है :

उद्योग में सफल व्यक्ति या तो बहुत परिश्रमी है, या चालक है।

यह उद्योग में सफल व्यक्ति बहुत परिश्रमी है।

∴ यह व्यक्ति चालाक नहीं हो सकता।

इस वैकल्पिक न्याययुक्ति में, पक्षवाक्य में साध्यवाक्य के एक विकल्प को स्वीकार किया गया है, तथा निष्कर्ष में दूसरे विकल्प को अस्वीकार किया है। यह नियम विरुद्ध है। अतः युक्ति में वैकल्पिक न्याययुक्ति का दोष विद्यमान है।

(६८) कोई भी दार्शनिक सिद्धान्त सत्य नहीं हो सकता क्योंकि सब दार्शनिक एक दूसरे की आलोचना करते हैं। (उ. प्र. १९६२)

इस युक्ति का तर्किक स्वरूप निम्नलिखित है—

सब दार्शनिक एक दूसरे की आलोचना करते हैं।

∴ सब दार्शनिक सिद्धान्त असत्य हैं।

उपर्युक्त निष्कर्ष युक्ति के आधारवाक्य से किसी भी प्रकार फलित नहीं हो पाता। अतः युक्ति में अर्थान्तर दोष है।

(६९) यदि कोई छात्र असाधारणतया बुद्धिमान है, तो वह प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण करेगा। क्योंकि राम ने प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण की है, इसलिए वह असाधारणतया बुद्धिमान अवश्य होगा। (उ. प्र. १९६२)

युक्ति का तार्किक रूप निम्नलिखित है—

यदि कोई छात्र असाधारणतया बुद्धिमान है, तो वह प्रथम श्रेणी में परीक्षा उतीर्ण करेगा—साध्यवाक्य।

राम ने प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण की —पक्षवाक्य।

देवेन्द्र प्रसाद मिश्रा

∴ राम असाधारणतया बुद्धिमान है। निष्कर्ष।

उपर्युक्त हेतुफलाश्रित युक्ति में पक्षवाक्य साध्यवाक्य के उत्तरांग को स्वीकार कर रहा है। तथा निष्कर्ष पूर्वांग को स्वीकार कर रहा है। यह नियम विरुद्ध है। अतः युक्ति में उत्तरांग की स्वीकृति का दोष (fallacy of affirming the consequent) है।

(७०) दासता बुरी नहीं हो सकती, क्योंकि अफलातून और अरस्तू जैसे दार्शनिक इसके पक्ष में थे। (उ. प्र. १९६२)

इस युक्ति में आप्त प्रतियुक्ति (Argumentum ad verecun diam) का दोष है क्योंकि इसमें तर्क की बात न कह कर अफलातून और अरस्तू के प्रति आदर का भाव उत्पन्न किया गया है।

(७१) केवल गुणी ही सुखी होते हैं, क्योंकि राम सुखी नहीं है इसलिए वह गुणी नहीं है। (उ. प्र. १९६२)

युक्ति का तार्किक स्वरूप निम्नलिखित है।

A सब सुखी (व्यक्ति) गुणी हैं।

A राम सुखी (व्यक्ति) नहीं है।

E राम गुणी नहीं है।

इस युक्ति में गुणी नहीं है।

इस युक्ति में साध्य 'गुणी' निष्कर्ष में E वाक्य का विधेय होने के कारण व्याप्त है, परन्तु साध्यवाक्य में A-वाक्य का विधेय होने के कारण अव्याप्त है। अतः युक्ति में अवैध साध्य का दोष (fallacy of Illicit Major) है।

(७२) हमारी भारतीय सेना शूरवीरता के लिए प्रसिद्ध रही है। क्योंकि 'अ' भारतीय सेना का सैनिक है, इसलिए वह शूरवीर अवश्य है। (उ. प्र. १९६२)

उपर्युक्त युक्त में 'सेना' साध्यवाक्य में समष्टि के अर्थ में प्रयुक्त है, परन्तु पक्षवाक्य में उसका एक सैनक के रूप में व्यष्ट्यर्थ में प्रयोग हुआ है। अतः युक्ति में विभाग का दोष (fallacy of Division) है।

(७३) लंदन में मि० सोलोमन ने एक फलविक्रेता से पूछा–"एक पौंड में कितने मझोले आकार के शफ्तालू?" "पांच या पचास जैसा आप चाहें!" विभ्रमकारी यह उत्तर मिला। (उ. प्र. १९६६)

[संकेत-'पौंड शब्द द्विअर्थक है। भार की इकाई; सिक्का]

प्रश्नमाला_१७

(क) भारतीय न्याय :

(१) हेतु किसे कहते हैं ? हेतु तथा हेत्वाभास में भेद बतलाइए। विभिन्न हेत्वाभासों के नाम लिखिए और प्रत्येक का उदाहरण दीजिए। (उ० प्र० १९४६)

(२) तीनों प्रकार के सव्यभिचार हेतु को समझाइए। पाश्चात्य तर्क-शास्त्र में उनके अनुरूप कौन से आभास हैं ? (उ० प्र० १९४८)

(३) हेत्वाभास किसे कहते हैं ? बाधित तथा विरुद्ध हेत्वाभास की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए। (उ० प्र० १९४६)

(४) निम्नलिखित हेत्वाभासों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए :—

(क) सव्यभिचार हेतु। (उ० प्र० १९५०, १९५०, १९६६)
(ख) असिद्ध हेतु (उ० प्र० १९५०, १९५१, १९६८)
(ग) विरुद्धहेतु (उ० प्र० १९५०)
(घ) सत्प्रतिपक्ष हेतु। (उ० प्र० १९५०)

(ख) युक्तियों का परीक्षण :

निम्नलिखित युक्तियों को न्याय-युक्ति के रूप में रखिये तथा उनकी विशुद्धि का परीक्षण कीजिए और यदि उनमें कोई आभास हों, तो उनका उल्लेख कीजिए।

चतुष्पदी आभास
(Fallacy of Four Terms)

(१) जनरल सेना का शासन करता है; जनरल की पत्नी जनरल का शासन करती है; अतः जनरल की पत्नी सेना का शासन करती है।

(२) भारतवर्ष में बंगाल निहित है; बंगाल में बम्बई निहित नहीं है। अतः भारतवर्ष में बम्बई निहित नहीं है।

(३) थैमिस्टोक्लीज का पुत्र अपनी मां पर शासन करता था; वह अपने पति पर शासन करती थी; वह एथेन्स पर शासन करता था,

और एथेन्स पर शासन करता था। अतः थैमिस्टोक्लीज का पुत्र ग्रीस पर शासन करता था।

(४) परमात्मा ने मनुष्य का सृजन किया; मनुष्य ने पाप का सृजन किया। अतः परमात्मा ने पाप का सृजन किया।

(५) प्रत्येक मुर्गी अण्डे से निकलती, है, प्रत्यक अण्डा एक मुर्गी से निकलता है। इसलिए प्रत्येक अण्डा एक अण्डे से निकलता है।

शिवपूजन शंभुनाथ से छोटा है।
शंभुनाथ शिवजीवन से छोटा है।
इस तरह शंभुनाथ से जो छोटा है,
वह शंभुनाथ से वड़ा है। (उ० प्र० १९६६)

अव्याप्त-हेतु का दोष

(Fallacy of Undistributed Middle)

(६) में प्रवेश पी सकूगा क्योंकि मैं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ हूँ और केवल प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण व्यक्ति ही प्रवेश पा सकते हैं।

(७) यह व्यक्ति ईमानदार है,क्योंकि यह अपना कर्त्तव्य पालन करता है और सब ईमानदार व्यक्ति अपना कर्त्तव्य पालन करते हैं।

(८) यह तुम कैसे कह सकते हो कि वह सावधान परीक्षक नहीं है, जबकि वह प्रश्न-पत्रों को जांचने में बड़ा कठोर है, जैसे कि सब सावधान परीक्षक होते हैं।

(९) अरस्तू एक महान् नैयायिक था, क्योंकि वह एक दार्शनिक था और सब महान् नैयायिक दार्शनिक होते हैं।

(१०) भारतीय होने के कारण वह हिन्दू होगा, क्योंकि केवल भारतीय ही हिन्दू होते हैं।

(११) महान् व्यक्ति सामान्यतया सनकी होते हैं; तुम सनकी हो; अतः तुम महान् व्यक्ति हो।

(१२) सुकरात चतुर था और केवल चतुर मनुष्य ही सुखी होते हैं। अतः सुकरात सुखी था।

(१३) यदि वह कहता है कि उसने सामान नहीं चुराया तो मैं पूछता हूँ कि उसने सामान छिपाने का प्रयत्न क्यों किया, जैसा कि करने से कोई चोर नहीं चूकता।

(१४) यदि वह कहता है कि वह झूठा नहीं है, तो मैं पूछता हूं कि वह झेंप क्यों गया, जैसा कि सब झूठे करते हैं।

(१५) केवल गर्म देशों में ही शराब बनती है। स्पेन एक गर्म देश है; अतः स्पेन में शराब बनती है।

अनेकार्थक साध्य का दोष

(Fallacy of Ambiguous Major)

(१६) कन्नौज के रहने वाले कन्नौजिया हैं।
रामसिंह क्षत्री कन्नौज का रहने वाला है।
∴ रामसिंह क्षत्री कन्नौजिया है।

[यहां साध्यवाक्य में "कन्नौजिया' का अर्थ कन्नौज में रहने वाले तथा निष्कर्ष में कन्नौजिया (कान्यकुब्ज) ब्राह्मण के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।]

अनेकार्थक पक्ष का दोष

(Fallacy of Ambiguous Minor)

(१७) उत्तम खाद्यपदार्थ स्वास्थ्यवर्धक है। सेंधव (=नमक) उत्तम खाद्यपदार्थ है। अतः सेंधव (=घोड़ा) स्वास्थ्यवर्धक है।

अनेकार्थक हेतु का दोष

(Fallacy of Ambiguous Middle)

(१८) सब आचार्य पंडित होते हैं। यह ब्रा ण आचार्य है। अतएव यह ब्राह्मग पंडित है। [इसमें 'आचार्य' का अर्थ साध्यवाक्य में तो 'आचार्य-परीक्षा-पास' तथा निष्कर्ष में 'कर्म कराने वाला' है।]

(१८क) गोरा योरोप के निवासी हैं। भारतेन्दु गोरा है। अतएव भारतेन्दु योरप के निवासी हैं। (उ. प्र. १९६६)

अवैध-साध्य का दोष

(Fallacy of Illicit Major)

(१९) सब हिन्दू आर्य हैं; कोई भी पारसी हिन्दू नहीं है। अतः कोई भी पारसी आर्य नहीं है।

(२०) वह अन्धविश्वासी नहीं है, क्योंकि सब अज्ञानी व्यक्ति अन्ध-विश्वासी होते हैं और वह अज्ञानी नहीं है।

(२१) चमगादड़ों के पर नहीं होते, क्योंकि वे पक्षी नहीं हैं और सब पक्षियों के पर होते हैं।

(२२) सब मनुष्य मेहनती नहीं होते। परन्तु मोहन मेहनती है; अतः वह मनुष्य नहीं हो सकता।

(२३) प्रत्येक सैनिक अपने देश की सेवा करता है। स्त्रियां सैनिक नहीं हैं। अतः स्त्रियां अपने देश की सेवा नहीं करतीं।

अवैध-पक्ष का दोष
(Fallacy of Illicit Minor)

(२४) सब अपराधियों को दण्ड मिलना चाहिए। कुछ अंग्रेज अपराधी हैं। अतः सब अंग्रेजों को दण्ड मिलना चाहिए।

(२५) कुछ जर्मन यहूदी हैं। सब जर्मन चतुर हैं। अतः सब यहूदी चतुर हैं।

(२६) सब मनुष्य विचारशील हैं; सब विचारशील व्यक्ति प्रगतिशील व्यक्ति हैं। इसलिए सब प्रगतिशील व्यक्ति मनुष्य हैं।

उपाधि-भेद-दोष
(Fallacay of Accident)

(२७) जो कोई भी जान-बूझ कर दूसरे व्यक्ति के शरीर पर छुरा चलाता है उसे कानूनन् दण्ड मिलता है। चीर-फाड़ करते समय डॉक्टर ऐसा करता है; अतः उसे कानूनन दण्ड मिलना चाहिए।

(२८) भोजन जीवन के लिए आवश्यक है। चावल भोजन है; अतः चावल जीवन के लिए आवश्यक है।

(२९) जो एक व्यक्ति करता है, वह दूसरा व्यक्ति भी कर सकता है; क्या महात्मा गांधी मनुष्य नहीं थे? तो जो कुछ उन्होंने किया, वह मैं क्यों नहीं कर सकता?

(३०) प्रत्येक मनुष्य के अधिकार समान हैं; अतः 'क' को एक हजार पये वार्षिक पाने का अधिकार होना चाहिए क्योंकि 'ख' को वह अधिकार प्राप्त है।

(३१) तुम वह नहीं हो, जो मैं हूँ। मैं मनुष्य हूँ। अतः तुम मनुष्य नहीं हो।

(३२) मानव जाति लुप्त होने वाली है, कारण प्रत्येक मनुष्य मरणशील है और मनुष्यों की समष्टि ही मानव जाति है। (उ०प्र० १९६६)

विभाग का दोष
(Fallacy of Divisson)

(३३) कालिदास की सब रचनायें एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकतीं। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' कालिदास की रचना है। अतः उसे एक दिन में नहीं पढ़ा जा सकता है।

(३४) इस देश के सब व्यक्ति अकालपीड़ित हैं; तुम इस देश के व्यक्ति हो। अतः तुम अकाल पीड़ित हो।

(३५) तेरह एक संख्या है। छः और सात तेरह हैं। अतः 'छः और सात' एक संख्या है।

(३६). वे सब व्यक्ति इस कार्य के लिए पर्याप्त हैं। तुम उनमें से एक हो। अतः तुम इस कार्य के लिए पर्याप्त हो।

रचना का दोष

(Fallacy of Composition)

(३७) काशी का प्रत्येक नागरिक कुल सात छटांक राशन पाता है। यहां के विश्वविद्यालय के सब अध्यापक काशी के नागरिक हैं। अतः यहां के सब अध्यापक कुल सात छटांक राशन पाते हैं।

(३८) पांच और आठ विषम और सम हैं। तेरह पांच और आठ हैं। अतः तेरह विषम और सम है।

(३९) मैं 'क' या 'ख' या 'ग' खरीद सकता हूँ, अतएव मैं 'क' और 'ख' और 'ग' खरीद सकता हूँ।

पूर्वांग की अस्वीकृति का दोष

(Fallacy of Denying the Antecedent)

(४०) यदि मनुष्यों को कर्म-स्वातंत्र्य है तो वे अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं। परन्तु मनुष्यों को कर्म–स्वातंत्र्य नहीं है; अतः वे अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं हैं।

(४१) यहां अग्नि नहीं हो सकती, क्योंकि यहां धूम्र नहीं है और जहां धूम्र होता है वहीं अग्नि होती है।

उत्तरांग की स्वीकृति का दोष

(Fallacy of Affirming the Consequent)

(४२) यदि कोई व्यक्ति अपराधी है तो उसे दण्ड मिलता है; परन्तु उसे दण्ड मिला, अतः वह अपराधी है।

(४३) यदि कोई विद्यार्थी मेहनत करता है तो वह परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है। वह परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ; अतः उसने मेहनत की।

(४४) बिल्ली दूर नहीं होनी चाहिए क्योंकि चूहे खेल रहे हैं और जब बिल्ली दूर होती है तभी चूहे खेलते हैं।

(४५) यदि तुम मेहनत करते हो, तो तुमको पुरस्कार मिलता है। अतः तुमने मेहनत की होगी क्योंकि तुमको पुरस्कार मिला।

(४६) रात को वर्षा हुई होगी क्योंकि धरती गीली है।

वस्तुगत-अशुद्धि युक्त उभयतोपाश

(Materially fallacious Dilemma)

(४७) यदि मनुष्य पवित्र हैं तो नियम बेकार है, और जब मनुष्य अपवित्र हैं, तो नियमों का उल्लंघन करेंगे ही। अतः नियम बेकार हैं।

(४८) नैतिक शिक्षायें व्यर्थ हैं क्योंकि भले व्यक्तियों को उनकी आवश्यकता नहीं होती और बुरे व्यक्ति उनकी परवाह नहीं करते।

(४९) अपने बारे में न तो अच्छी और न बुरी बात कहो। यदि अच्छी बात कहोगे तो मनुष्य विश्वास नहीं करेंगे; यदि बुरी बात कहोगे तो वे उसमें नमक-मिर्च मिलाकर और अधिक बुरी बात का प्रसार करेंगे।

(५०) कविता या तो सत्य होगी अथवा असत्य। यदि वह असत्य है तो वह भ्रामक होती है; यदि वह सत्य होती है तो वह इतिहास का छद्म वेष ही होती है। यही कारण है कि विचारवान व्यक्ति कविता का अध्ययन नहीं करते।

(५१) यदि मेरे भाग्य में मृत्यु है तो कोई चिकित्सक मुझे नहीं बचा सकता; यदि मेरे भाग्य में जीना बदा है, तो चिकित्सक अनावश्यक है। फिर चिकित्सक को बुलाने का व्यय क्यों किया जाय ?

संक्षिप्त न्याय-युक्ति
(Enthymeme)

(५२) अफ्रीका में उत्पन्न होने के क़ारण वह स्वभावतः काला है।

(५३) ये सब व्यक्ति भले नागरिक हैं क्योंकि केवल भले नागरिक ही नियमों का पालन करते हैं।

(५४) नारी! तेरा नाम दुर्बलता है।

हेतुफलाश्रित-निरपेक्ष न्याय-युक्ति
(Hypothetical-Categorical Syllogism)

(५५) यदि कोई व्यक्ति वृत्त को चौकोर बना सके तो वह बहुत बड़ा गणितज्ञ होगा। परन्तु ऐसा कोई नहीं कर सकता।

(५६) यदि ओस न गिरे तो मौसम बुरा होता है। परन्तु ओस गिरी है, अतः मौसम अच्छा होगा।

वैकल्पिक-निरपेक्ष न्याय-युक्ति
(Disjunctive-Categorical Syllogism)

(५७) उसने एम० ए० की परीक्षा में पाली का पर्चा नहीं दिया, क्योंकि परीक्षार्थी या तो संस्कृत का पर्चा दे सकते थे या पाली का; और उसने संस्कृत का पर्चा दिया।

परिशिष्ट

उत्तर-प्रदेश शिक्षा-परिषद्

(U. P. Board Intermediate Examination)

इण्टरमिडिएट परीक्षा

प्रथम प्रश्नपत्र

१९५०

१. तर्कशास्त्र क्या है? मनोविज्ञान और दर्शन से यह किस प्रकार भिन्न है?

२. वाच्यों को वतलाइये और उनके अर्थ समझाइये। वाच्यों का विधेय पद से अन्तर स्पष्ट कीजिए।

३. (अ) तर्कवाक्य में पदों की व्याप्ति को वतलाइये और समझाइये।

(आ) निम्नलिखित का उचित तार्किक रूप वतलाइये:—

१. दो को छोड़कर सव मारे गये।

२. वे सव जो अधिक पढ़ते हैं, वुद्धिमान नहीं होते।

३. इस फाटक से गणितज्ञ ही प्रवेश कर सकते हैं।

४. निम्नलिखित की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

१. परिवर्तन।

२. प्रतिवर्तित परिवर्तन।

३. पूर्ण प्रतिवर्तन।

४. आंशिक विपर्यय।

५. (अ) यदि हेतु आश्रयवाक्यों में व्याप्त है, तो निष्कर्ष के विषय में हम क्या जानते हैं?

(आ) प्रमाणित कीजिए कि पहले आकार में 'ओ' आश्रय नहीं हो सकता।

६. "स्वतंत्रता के लिए समाचार पत्रों की आवश्यकता हैं", इस भाव का एक उभयतोपाश वनाइए और उसका प्रतिक्षेप भी कीजिए।

७. स्वार्थानुमान तथा परार्थानुमान में क्या अन्तर है? परार्थानुमान के सव अवयव उदाहरण देकर समझाइये।

८. उपयुक्त उदाहरण देकर निम्नलिखित में से किन्हीं दो की व्याख्या कीजिये।

१. सव्यभिचार हेतु।
२. असिद्ध हेतु।
३. विरुद्ध हेतु।
४. सत्प्रतिपक्ष हेतु।

९. निम्नलिखित युक्तियों में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये। उनमें यदि कोई आभास हो तो बताइये।

(क) साम्यवाद का दमन आवश्यक है, क्योंकि वह कौटुम्बिक सम्बन्धों का विनाश करता है।

(ख) त्रिभुज के कोण दो समकोण के तुल्य होते हैं। 'क' तथा 'ख' एक त्रिभुज के कोण हैं। इसलिये वह दो समकोणों के तुल्य हैं।

(ग) किसी पदार्थ का आयतन ठण्डा करने से कम हो जाता है, क्योंकि उसके अणु तब सन्निकट आ जाते हैं।

(घ) जब वह निर्दोषिता जतलाता है, तो मैं पूछता हूँ कि उसने माल क्यों लुटाया जैसा करने से कोई चोर नहीं चूकता।

(ङ) जो मनुष्य शिक्षित होता है, वह हाथों से काम करना नहीं चाहता, इसलिये यदि शिक्षा सार्वजनिक हो जायगी, तो उद्योग बंद हो जायेंगे।

(च) चारुदत्त महान विद्वान है, क्योंकि वह काशी का निवासी है।

१९५१

१. "तर्कशास्त्र विज्ञानों का विज्ञान है" इस कथन पर विवेचनात्मक दृष्टि डालिये।

२. निम्न पदों की तार्किक विशेषताएँ बतलाइये।

बहरा, वर्ग, सुकरात, भारतीय गणराज्य का राष्ट्रपति, बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी, सुन्दरता, भीड़।

३. वाच्य-धर्म क्या है? निम्न वाक्यों में कौन-कौन से वाच्य-धर्म सम्मिलित हैं?

(अ) ज्ञान ही शक्ति है।
(ब) बन्दर स्तनपायी जन्तु है।

(स) एक त्रिभुज की तीन भुजाएँ होती हैं।
(द) सब सुधार अच्छे नहीं होते।
(प) वर्ग के चारों कोण बराबर होते हैं।
(फ) चीता जंगल में रहता है।

४. तार्किक विभाग से आप क्या समझते हैं ? तार्किक, भौतिक एवं अतिभौतिक विभाग में अन्तर कीजिये और प्रत्येक का उदाहरण दीजिये।

५. निम्न वाक्यों को उचित तार्किक रूप दीजिये और प्रत्येक का परिमाण निर्धारित कीजिये।

(१) केवल प्रथम श्रेणी वाले निःशुल्क शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।
(२) मूर्खों को उनके सिवाय और कोई बड़ा नहीं समझता।
(३) संसार में विरले ही मनुष्य सुखी हैं।
(४) सब विद्यार्थी परिश्रमी नहीं होते।
(५) इस परीक्षा में कोई भी उत्तीर्ण हो सकता है।
(६) पुस्तकें सर्वदा लाभदायक नहीं होतीं।

६. आकारान्तरण से आप क्या समझते हैं ? इसके विभिन्न भेद बताइये। उचित उदाहरणों द्वारा प्रत्येक को समझाइये।

७. स्वार्थ-अनुमान और परार्थ-अनुमान में भेद कीजिये और अन्तिम की पाश्चात्य अनुमान से तुलना कीजिये।

८. हेत्वाभास किसे कहते हैं ? निम्नलिखित हेत्वाभासों की परिभाषा दीजिए और उदाहरण दीजिये :-असिद्ध और सव्यभिचार।

९. निम्नलिखित चार तर्कों की परीक्षा कीजिए और यदि उनमें कोई आभास हो तो बताइये।

(अ) बुद्धिमानी आयु के साथ बढ़ती है। अतः आधुनिकों से प्राचीन समय के पुरुष अधिक बुद्धिमान थे।

(ब) फ्रेंच बड़े नम्र होते हैं। इसलिये मार्टिन,जो कि एक फ्रेंच है, बड़ा नम्र है।

(स) सब मनुष्य स्वतन्त्र होने चाहिए,क्योंकि स्वतन्त्रता का हर मनुष्य को अधिकार है।

(द) सत्य की सदैव विजय होती है। यह सिद्धान्त सत्य होना चाहिये क्योंकि इसकी विजय हुई है।

(य) केवल प्रथम श्रेणीवालों को प्रवेश मिल सका है, मुझे प्रवेश मिलेगा क्योंकि मैंने प्रथम श्रेणी में परीक्षा पास की है।

१९५२

१. ज्ञान से क्या समझते हैं? ज्ञान का उद्भव किस प्रकार होता है? अव्यवहित (Immediate) तथा व्यवहित (Mediate) ज्ञान में क्या अन्तर है? तर्कशास्त्र का विषय किस प्रकार का ज्ञान है?

२. किसी पद के गुण और निर्देश से आप क्या समझते हैं? क्या प्रत्येक पद का गुण होता है? क्या व्यक्तिवाचक पद गुणवाचक होते हैं? इसका पूर्णतया विवेचन कीजिये।

३. तार्किक परिभाषा के नियमों का उल्लेख समझा कर कीजिये और उनके भंग करने से उत्पन्न होने वाले दोषों को वताइये।

४. तार्किक विभाग किसको कहते हैं? निम्नलिखित विभागों की परीक्षा कीजिये।

(क) पुस्तकों का धार्मिक, ऐतिहासिक और दिलचस्प पुस्तकों में विभाजन।

(ख) त्रिभुज का समद्विवाहु (Isosceles) समत्रिवाहु, (Equilateral) और समकोण (Right Angled) त्रिभुजों में विभाजन।

(ग) पदों का व्यक्तिवाचक (Singular), भावात्मक (Positive) और भाववाचक (Abstract) पदों में विभाजन।

(घ) भारतवर्ष का बंगाल, मद्रास, वम्बई और उत्तर प्रदेश में विभाजन।

५. निम्नलिखित वाक्यों का तार्किक वाक्यों में रूपान्तर कीजिये और उनका गुण और परिमाण वतलाइये।

(क) कुछ को छोड़कर सभी बन्दी बना लिये गये।

(ख) आई० ए० एस० की नौकरियों के लिये केवल स्नातक ही अधिकारी हैं।

(ग) इस परीक्षा को कोई भी पास कर सकता है।

(घ) कुछ बहुमूल्य पुस्तकें शायद ही कभी पढ़ी जाती हैं।

६. निम्नलिखित वाक्यों की संगतता पर विचार कीजिये।

(क) शुद्ध-हृदय मनुष्य सदैव सुखी रहते हैं।

(ख) कुछ शुद्ध-हृदय मनुष्य सुखी रहते हैं।

(ग) कोई भी शुद्ध-हृदय मनुष्य सुखी नहीं रहता है।

(घ) कुछ शुद्ध-हृदय मनुष्य सुखी नहीं रहते हैं।

७. निम्नलिखित पदों की परिभाषा उदाहरण द्वारा कीजिये।
आकार, संयोग, अवैध साध्य दोष और भ्रामक हेतु दोष।

८. अनुमान के पांच अवयव क्या हैं ? न्यायवाक्य के तीन अवयवों के साथ उनकी तुलना कीजिये। क्या उनकी संख्या कम की जा सकती है ?

९. निम्नलिखित पदों की व्याख्या कीजिये—
हेतु, साध्य, व्याप्ति और उपाधि।

१०. नीचे दिये हुए तर्कों में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये; यदि उनमें कोई आभास हो तो वताइये।

(क) गुलाव फूल है, फूल वनस्पति है, वनस्पति प्राणी है, अतएव गुलाव प्राणी है।

(ख) यह नीति दोषपूर्ण थी, नहीं तो असफल न होती।

(ग) जो वह है, वह तुम नहीं हो। वह मनुष्य है। अतः तुम मनुष्य नहीं हो।

(घ) नैतिक उपदेश व्यर्थ हैं, क्योंकि भले आदमियों को उनकी आवश्यकता नहीं है और बुरे आदमी उनको सुनते नहीं।

(ड.) सुकरात ज्ञानी था और केवल ज्ञानी ही सुखी होते हैं, अतएव सुकरात सुखी था।

(च) भगवान ने मनुष्य को वनाया, मनुष्य ने पाप को वनाया, अतएव भगवान ने पाप को बनाया।

(छ) यदि कोई अपराधी है, तो वह भय से कांपता है; यह अभियुक्तभय से कांप रहा है। अतएव यह अपराधी है।

१९५३

१. तर्कशास्त्र क्या है ? तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान और दर्शन में भेद बताइये।

२. निम्नलिखित शब्दों में क्या भेद है उदाहरण देते हुए वतलाइये। शब्द, नाम, पद, धारणा।

३. किसी पद के निर्देश और गुण से आप क्या समझते हैं ? वे किस प्रकार सम्वन्धित हैं ?

४. तार्किक विभाग और परिभाषा से आप क्या समझते हैं ? उदाहरण देकर उनका सम्वन्ध वताइये।

५. निम्नलिखित वाक्यों का रूपान्तर कीजिये और उनका प्रतिवर्त्तन, परिवर्तन और परिवर्तित-प्रतिवर्त्तन तथा विपर्यय बताइये।

केवल स्नातक ही अधिकारी हैं।

६. न्यायवाक्य के आकार और संयोग से आप क्या समझते हैं? यह प्रमाणित कीजिये कि दूसरे आकार में कोई संयोग नहीं है, जिसका निगमन भावात्मक हो।

७. उभयतोपाश से आप क्या समझते हैं? उदाहरण देकर बताइये कि उभयतोपाश का प्रतिरोध कितने प्रकार से किया जा सकता है?

८. भारतीय न्याय में अनुमान किसे कहते हैं? अनुमान और पाश्चात्य न्याय-वाक्य का भेद बताइए। दोनों में कौन-सा अधिक स्वाभाविक है।

अथवा

हेतु किसे कहते हैं? हेतु और हेत्वाभास में भेद बताइये। विभिन्न हेत्वाभास का नाम लिखिये और प्रत्येक का उदाहरण दीजिये।

९. नीचे दिये हुए तर्कों में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये और यदि उनमें कोई आभास हो, तो बताइये।

(क) पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है और चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। अतएव चन्द्रमा सूर्य की परिक्रमा करता है।

(ख) सज-धज कर रहनेवाले ही धनी होते हैं। वह सज-धज कर रहता है, अतएव वह धनी है।

(ग) पानी तरल है, वरफ पानी है अतएव वरफ तरल है।

(घ) त्रिभुज के सब कोण दो समकोण के बराबर हैं। यह कोण एक त्रिभुज का कोण है, अतएव यह दो समकोण के बराबर है।

१९५४

१. विज्ञान (Science) किसे कहते हैं? विज्ञान और कला (Art) में क्या अन्तर है? तर्कशास्त्र कला है अथवा विज्ञान इस विषय पर अपना मत प्रकट कीजिये।

२. पद (Term) और शब्द (Word) में क्या अन्तर है? पदों का वर्गीकरण कीजिये और प्रत्येक वर्ग की उदाहरणपूर्वक व्याख्या कीजिये।

३. तार्किक विभाग (Division) किसे कहते हैं? उदाहरण देकर तार्किक विभाग और अन्य विभागों में भेद बतलाइये।

४. परिमाण (Quantity) और गुण (Quality) की दृष्टि से वाक्यों (proposition) के भेद करके उनके उदाहरण समझाइये।

५. निम्नलिखित वाक्यों को तार्किक वाक्यों में परिवर्तित कीजिये और उनके गुण (Quality) तथा परिमाण (Quantity) भी लिखिये।

(१) सभी चोर बदमाश नहीं होते।
(२) केवल स्नातक ही वोट देने के अधिकारी हैं।
(३) थोड़े ही मनुष्य ख्याति प्राप्त कर सकते हैं।
(४) प्रत्येक चोर डाकू नहीं होता।
(५) प्रायः सभी लड़के कक्षा में उपस्थित थे।

६. निम्नलिखित वाक्यों से विरुद्ध भाव (Contraposition), व्यत्यय (Inversion) और परिवर्तन (Conversion) द्वारा अनुमान निकालिये।

(१) कोई मनुष्य पूर्ण नहीं है।
(२) कुछ ही मनुष्य उपस्थित न थे।

७. सिद्ध कीजिये कि 'Syllogism' (पाश्चात्य अनुमान) की प्रथम आकृति (First Figure) में मुख्य वाक्य अवश्य सामान्य होना चाहिये। द्वितीय आकृति में दोनों में से एक वाक्य निषेधात्मक होना चाहिए।

८. भारतीय तर्कशास्त्र के अनुसार अनुमान का क्या स्वरूप है, उसे लिखिये और उसकी तुलना पाश्चात्य अनुमान (Syllogism) से कीजिये।

अथवा

हेत्वाभास किसे कहते हैं? मुख्य हेत्वाभासों के नाम उदाहरण सहित लिखिये।

९. निम्नलिखित तर्कों में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये और उनके दोषों को प्रकट कीजिये।

(क) सुरेश सज्जन है क्योंकि वह धर्मात्मा है, और धर्मात्मा ही सज्जन होते हैं?

(ख) पैसेंजर गाड़ियों के सिवाय इस स्टेशन पर कोई गाड़ी नहीं ठहरती, यह गाड़ी जो गई है, एक्सप्रेस के सिवाय और कोई नहीं हो सकती, क्योंकि वह इस स्टेशन पर नहीं ठहरी।

(ग) मेरा हाथ मेज को छूता है और मेज पृथ्वी को छूती है। अतएव मेरा हाथ पृथ्वी को छूता है।

(घ) वह अवश्य हिन्दू है, क्योंकि वह भारतीय है। केवल भारतीय ही हिन्दू होते हैं।

(ङ.) चम्पा फूल है; फूल वनस्पति (Vegetable) है, वनस्पति प्राणी है। अतएव चम्पा प्राणी है।

(च) भारतीय शान्तिप्रिय राष्ट्र हैं,श्री जयकर भारतीय हैं, इसलिए वे भी शान्तिप्रिय हैं।

१९५५

१. विचार के नियमों को लिखिये तथा समझाइये।

२. पदों के निर्देश (denotation) तथा गुण (Connotation) से आप क्या समझते हैं? यह कथन कहां तक सत्य है कि पद के निर्देश तथा गुण का प्रतिलोम अनुपात में परिवर्तन होते हैं?

३. वाच्य-धर्म (Predicables) क्या है? उपयुक्त उदाहरण देकर उन वाच्य धर्मों को समझाइए जिनके बारे में आपने पढ़ा है।

४. उदाहरण देकर निम्नलिखित विषयों के तात्पर्य को पूर्णतः स्पष्ट समझाइए:—

(अ) विभाजक धर्म (Fundamentum Divisions)
(द) अंत्य-जाति (Infima Species)
(स) विभाग-संकरता (Cross division)

५. वाक्य के किसी पद की व्याप्ति का क्या अभिप्राय है? वाक्य (Propositions) के चारों विभाग में से प्रत्येक में कौन से पद व्याप्त हैं और क्यों?

६. तर्कशास्त्र में प्रतिमुखता (Opposition) से आप क्या समझते हैं? यदि यह वाक्य सत्य हो कि "कुछ मनुष्य सच्चे नहीं हैं" तो सभी तर्कशास्त्रीय प्रतिमुखताएँ (Logical Opposites) बतलाइए और उनके लक्षण (Characteristics) दीजिये।

७. हेत्वाभास क्या है? उदाहरण-सहित हेत्वाभास के मुख्य भेद बतलाइये।

८. न्यायवाक्य (Syllogism) के आकार (Figure) और संयोग (Mood) का क्या अर्थ है? सिद्ध कीजिये कि सिद्ध न्यायवाक्य (Valid Syllogism) के प्रथम आकार में (अ) पक्ष-वाक्य (Minor

Premise) अवश्य भावात्मक (affirmative) होना चाहिये तथा (ब) साध्य-वाक्य (Major Premise) अवश्य समान्य (Universal) होना चाहिए।

९. निम्नलिखित अनुमानों में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये और यदि कोई दोष हो तो उन्हें बतलाइए :

(क) दूध सफेद है; सफेद एक रंग है; अतः दूध रंग है।

(ख) गधे के चार पैर होते हैं; इस मेज के चार पैर हैं; अतः यह मेज गधा है।

(ग) सभी मनुष्य मर्त्य हैं; सभी कुत्ते मर्त्य हैं; अतः कुछ कुत्ते मनुष्य हैं।

(घ) उसको निस्संदेह रुपये की आवश्यकता है; क्योंकि यदि वह अमीर है, उसको रुपये की आवश्यकता नहीं है; परन्तु वह अमीर नहीं है।

(ङ.) यह कार्य अनैतिक है, क्योंकि यह सुदृढ़ नैतिक सिद्धांतों के विरुद्ध है।

(च) उत्तर-प्रदेश विहार के वगल में है; विहार वंगाल के वगल में है; अतः उत्तर प्रदेश वंगाल के वगल में है।

(छ) चार तथा पांच विषम सम हैं, परन्तु चार और पांच नौ होते हैं; अतः नौ विषम तथा सम है।

(ज) मुझे किसी डाक्टर की सलाह नहीं लेनी चाहिए, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरे सभी मित्रों ने जिनकी गत वर्ष मृत्यु हुई थी डाक्टरों की सलाह ली थी।

१९५६

१. विचार के मूल नियम (Fundamental Laws of Thought) से आप क्या समझते हैं? ये कितने प्रकार के हैं और उनकी विशेषताएँ क्या हैं?

२. तर्कशास्त्र में पद (Term) का क्या अर्थ है? निम्नलिखित पदों की तर्क-शास्त्र सम्बन्धी विशेषताएँ (Logical Character) वताइये :— मनुष्य, संग्रहालय (Museum), भारतीय फुटवाल एकादश (The Indian Foot-Ball Eleven), वधिरता (Deafness)।

३. तार्किक परिभाषा (Logical definition) क्या है? तार्किक परिभाषा के नियमों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिये।

४. पदों के निर्देश (Denotation), तथा गुण (Connotation) में क्या सम्वन्ध है? उदाहरण देकर समझाइए।

५. 'तार्किक वाक्य' (Logical Proposition) से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित वाक्यों को तार्किक वाक्यों में रूपान्तरित कीजिए और उनके गुण (quality) तथा परिमाण (quantity) भी लिखिए:—

(क) सव नेता संच्चे (honest) नहीं हैं।
(ख) लगभग सव लड़के परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं।
(ग) केवल छात्र ही इस पुस्तकालय से किताव ले सकते हैं।
(घ) श्यामलाल के सिवाय सव लड़के उपस्थित हैं?

६. न्याय-वाक्य (Syllogism) के साधारण नियम क्या हैं? उदाहरण स्पष्ट कीजिए।

७. संक्षिप्त-अनुलोम-युक्तिमाला (Sorites) से आप क्या समझते हैं और यह कितने प्रकार की होती है? इसके स्वरूप उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

८. भारतीय तर्कशास्त्र के अनुसार अनुमान (Inference) और पाश्चात्य अनुमान की तुलनात्मक आलोचना कीजिए।

९. निम्नलिखित तर्कों (Arguments) में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिये और यदि उनमें कोई दोष हो, तो उन्हें वतलाइए।

(क) मोटरकार साइकिल नहीं है; अतः मोटरकार का मालिक साइकिल का मालिक नहीं है।

(ख) कोई भी स्त्री एक्का नहीं हांकती;
कुछ स्त्रियां पी-एच० डी० हैं;
अतः कोई भी पी०-एच० डी० एक्का नहीं हांकता।

(ग) सव कौवे काले होते हैं। कोई भी कुत्ता काला नहीं होता है, क्योंकि कोई भी कुत्ता कौवा नहीं है।

(घ) कुछ मनुष्य अनपढ़ नहीं है; क्योंकि कोई भी शिक्षक अनपढ़ नहीं है, और सव शिक्षक मनुष्य हैं।

(ङ.) हम लोगों को कदापि झूठ नहीं बोलना चाहिए; क्योंकि झूठ बोलना हमारा कर्त्तव्य नहीं है।

(च) 'दो' एक छोटी संख्या है,
'सौ' पचास बार 'दो' है,
अतः, सौ एक छोटी संख्या है।

१९५७

१. विज्ञान (Science) और कला (Art) में क्या अन्तर है? तर्कशास्त्र विज्ञान है या कला? आलोचना कीजिए।

२. किसी पद के निर्देश (Denotation) का क्या तात्पर्य है? क्या यह सच है कि तार्किक विभाजन (Logical Division) केवल पद के निर्देश का ही विश्लेषण है? उदाहरण द्वारा अपना उत्तर स्पष्ट कीजिए।

३. विरोधरूपक वर्ग (Square of Opposition) क्या है और तर्कशास्त्र में इसका क्या उपयोग है? "सभी साधु सच्चे नहीं होते" इस वाक्य की सत्यता से 'विरोधरूपक वर्ग' द्वारा अन्य वाक्यों के बारे में आप क्या अनुमान कर सकते हैं?

४. न्यायवाक्य के 'आकार' (Figure of Syllogism) का क्या अर्थ है? न्यायवाक्य के प्रथम आकार के विशेष नियमों को (Special rules of the First Figure) उदाहरण देकर समझाइए।

५. पाश्चात्य तर्कशास्त्र में न्यायवाक्य के रूपान्तरण (Reduction) करने का क्या अभिप्राय है? रूपान्तरण की प्रतिलोम विधि (Indirect Reduction) क्या है? उदाहरण देकर समझाइए।

६. संक्षिप्त प्रतिलोम न्यायमाला (Epicheirema) क्या है? इसके कितने प्रकार होते हैं? उदाहरण देकर समझाइए।

७. उभयतोपाश (Dilemma) का अर्थ स्पष्ट कीजिए और एक उदाहरण देकर बताइए कि उसका प्रतिरोध (Rebuttal) कितने प्रकार से हो सकता है।

८. तर्कशास्त्र में हेत्वाभास पढ़ने का क्या उद्देश्य है? विरुद्ध, सत्प्रतिपक्ष तथा बाधित हेत्वाभासों में क्या अन्तर है, उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

९. निम्नलिखित तर्कों (arguments) में से किन्हीं चार की परीक्षा कीजिए और यदि उनमें कोई दोष हो तो उन्हें बतलाइए।

(क) बाल-विवाह-निरोध सम्बन्धी सब तर्क मूल्यहीन हैं, क्योंकि हमारे पूर्व पुरुष निर्बोध नहीं थे।

(ख) यदि शासक-सम्प्रदाय का आदर्श ठीक हो, तो जनता प्रसन्न रहेगी। क्योंकि जनता प्रसन्न है, अतः शासक-सम्प्रदाय का आदर्श अवश्य ठीक है।

(ग) कुछ कपड़े लाल हैं, कुछ कपड़े हरे हैं, अतः लाल कपड़े हरे हैं।

(घ) श्री डालमिया जैन अवश्य ही दरिद्र हैं, क्योंकि भारतवासी दरिद्र हैं और श्री जैन भारतवासी हैं।

(ङ.) कुछ तृणभोजी जानवर हिंसक नहीं हैं, क्योंकि कोई भी खरगोश हिंसक नहीं है और सभी खरगोश तृणभोजी जानवर हैं।

(च) इन्टरमीडियट परीक्षा के लिए शिक्षाशास्त्र (Education), क्यों सबसे अधिक जनप्रिय विषय है ?

१९५८

१. विचार के मूल नियमों (Laws of thought) का वर्णन कीजिए और संक्षेप में उनका तुलनात्मक विवेंचना कीजिए।

२. 'तार्किक-विभाग' (Logical Division) कितने प्रकार के होते हैं? निम्नांकित विभागों की परीक्षा कीजिए:

(क) मनुष्य—एशियावासी, भारतवासी, जापानी तथा सभ्य।

(ख) त्रिभुज—न्यूनकोणिक (acute angled), समकोणिक (right angled) तथा विषमभुज (Scalene)

(ग) आम—छिलका, गुठली, गूदा।

३. तार्किक वाक्यों का अर्थ (Import of Proposition) से आप क्या समझते हैं? इस सम्बन्ध में विधान के मूल-सिद्धांतों (Primary Theories of Predication) को संक्षेप में बताइए।

४. निष्कर्षण (Education) से आप क्या समझते हैं तथा ये कितने प्रकार के होते हैं? निम्नलिखित वाक्य से निष्कर्षण द्वारा जितने सिद्धांत (Conclusions) आप निकाल सकें, उन्हें लिखिए।

"सभी विद्वान सुखी होते हैं।"

५. तर्कशास्त्र में न्याय-वाक्य के आकार (Figure of Syllogism) का क्या अर्थ है ? न्याय-वाक्य के तीसरे आकार के विशेष नियमों (Special rules of the third figure) को उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।

६. संक्षिप्त अनुलोम युक्तिमाला (Sorites) क्या है ? ये कितने प्रकार के होते हैं ? उदाहरण देकर समझाइए।

७. कुछ कलाकार विकृत-मस्तिष्क हैं।
सभी कलाकार मनुष्य हैं।
अतः कुछ मनुष्य विकृत-मस्तिष्क हैं।
उपर्युक्त न्याय-वाक्य का आकार (Figure) तथा संयोग (mood) निर्णय कीजिए और इसको प्रथम आकार में रूपान्तरित कीजिए।

८. भारतीय और पाश्चात्य अनुमान की तुलनात्मक आलोचना कीजिए।

९. निम्नलिखित तर्कों (Arguments) में से किन्हीं तीन को परीक्षा कीजिए और यदि उनमें कोई दोष हो, तो उन्हें बतलाइए:—

(क) क्योंकि सभी राजनीतिविद् (statesman) शिक्षित व्यक्ति हैं और सभी शिक्षित व्यक्ति ज्ञानी हैं, अतः सभी ज्ञानी व्यक्ति राजनीतिविद् हैं।

(ख) सभी शिक्षक श्रद्धाभाजन हैं;
कुछ शिक्षक स्वार्थपर हैं,
अतः कुछ स्वार्थ पर व्यक्ति श्रद्धाभाजन हैं।

(ग) चिकित्सकों का मत है कि दूध एक परिपूर्ण तथा स्वास्थ्य-प्रद खाद्य है। अतएव हैजा के मरीज को आप सदैव दूध दे सकते हैं।

(घ) किसी को परामर्श देना निरर्थक है। क्योंकि या तो आपका परामर्श उनके पूर्व-निर्धारित कर्मपंथा के अनुसार होगा, और

इसदशा में आपका परामर्श बिल्कुल ही अप्रयोजनीय होगा; नहीं तो, आपका परामर्श उनके कर्मपंथा का विरोधी होगा और इसलिए प्रभावहीन होगा।

(ङ-) जल तरल पदार्थ है।
Hydrogen और Oxygen से ही जल बनता है, अतः Hydrogen और Oxygen तरल पदार्थ हैं।

१९५९

(१) विधायक विज्ञान (PositiveScience) और नियामक विज्ञान (Normative Science) का अन्तर स्पष्ट कीजिए और यह बताइये कि तर्कशास्त्र किस प्रकार का विज्ञान है ?

(२) (अ) निम्नलिखित पद-युग्मों में अन्तर स्पष्ट कीजिए:—
(क) जातिवाचक पद (General Term) एवं एकवाचक पद (Singular Term)
(ख) अभावबोधक पद (Negative Term) एवं राहित्यबोधक पद (Privative Term)
(आ) निम्नलिखित पदों के तार्किक लक्षण बताइए:—
सेना, सफेदी, अंधा, मोहन, मनुष्य।

(३) पद के निर्देश (Denotation) एवं गुण (Connotation) की परिभाषा कीजिये और 'निर्देश व गुण के प्रतिलोम परिवर्तन-संबंध' की व्याख्या कीजिये।

(४) वाच्यधर्म (Predicables) किसे कहते हैं ? पॉरफिरी द्वारा दिए गए वाच्यधर्मों की स्पष्ट व्याख्या कीजिए।

(५) तार्किक विभाग (Logical Division) क्या है ?

आंगिक विभाग (Physical Division) एवं गुणात्मक विभाग (Metaphysical Division) से तार्किक विभाग की तुलना कीजिए।

(६) निम्नांकित परिभाषाओं में किन्हीं तीन की तार्किक दृष्टि से परीक्षा कीजिये:—

(i) तर्कशास्त्र सभी शास्त्रों का सम्राट् है।

(ii) प्रकाश अन्धकार की अनुपस्थिति है।

(iii) मनुष्य दो पैरोंवाला प्राणी है।

(iv) ज्ञानी वह व्यक्ति है जो ज्ञान रखता है।

(v) मनुष्य कविता लिखनेवाला प्राणी है।

(७) न्यायवाक्य के सामान्य नियम क्या हैं? उदाहरण देकर समझाइए।

(८) "उभयतोपाश (Dilemma) सत्य होने की अपेक्षा प्रायः असत्य ही होता है।" ऐसा क्यों है?

(९) "हेत्वाभास" से आप क्या समझते हैं? भारतीय तर्कशास्त्र के अनुसार हेत्वाभास के कितने प्रकार होते हैं? उदाहरण सहित समझाइए।

(१०) निम्नलिखित तर्कों में से किन्हीं तीन की परीक्षा कीजिये और उनके दोष बताइए:—

(i) दो और तीन पांच होते हैं। किन्तु दो और तीन दो होते हैं। इसलिए पांच भी दो संख्यायें हैं।

(ii) स्नान स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। अतः इन्फ्लुएंजा का रोगी, यदि स्नान करेगा, तो स्वस्थ हो जायगा।

(iii) सभी घोड़े प्राणी हैं। सभी चिड़ियां प्राणी हैं। अतः सभी चिड़ियां घोड़े हैं।

(iv) सभी अंग्रेज सभ्य हैं। कोई भारतीय अंग्रेज नहीं है। अतः कोई भारतीय सभ्य नहीं है।

—

१९६०

(१) विचार के आकार (Form) और वस्तु (Matter) तथा आकारतंत्र (Formal) और वस्तुतंत्र संवाद (Material Validity) में अन्तर स्पष्ट कीजिए। तर्कशास्त्र को "विचार के आकार सम्वन्धी नियमों का विज्ञान" कहना कहां तक उचित है ?

(२) विचार के मूल नियम (Fundamental Laws) क्या हैं। उनकी प्रकृति स्पष्ट कीजिए तथा उनका एक-दूसरे से सम्वन्ध भी बताइए।

(३) तर्कशास्त्रीय परिभाषा (Logical Definition) के नियमों को उदाहरण सहित समझाइए। परिभाषा की सीमाएँ स्पष्ट कीजिए तथा परिभाषा एवं वर्णन (Description) में भेद भी बताइए।

(४) गुण (Quality) एवं विधि (Modality) के अनुसार वाक्यों का वर्गीकरण (Classification) समझाइए। अधोलिखित वाक्यों को तर्कशास्त्रीय आकार में लाकर उनका गुण एवं परिमाण निश्चित कीजिए :—

१. केवल ज्ञानी ही सुखी होते हैं।

२. एक के अतिरिक्त सभी सदस्यों ने इस प्रस्ताव के लिए मत दिये।

३. सब चमकने वाली चीजें सोना नहीं होतीं।

(५) निष्कर्षण (Education) से आप क्या समझते हैं ? निम्नलिखित वाक्यों का परिवर्तित (converse), प्रतिवर्तित (obverse), परिवर्तित-प्रतिवर्तित (Contrapositive) तथा विपर्यय (Inverse) रूप दीजिए:—

१. सब प्राणी मरणशील हैं।
२. कोई मनुष्य पूर्ण नहीं हैं।

(६). निम्नांकित न्याय-वाक्य के नियमों को आप किस प्रकार सिद्ध करेंगे :—

१. दो विशेष वाक्यों से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।
२. अगर एक वाक्य विशेष है, तो निष्कर्ष भी विशेष होगा।
३. दीर्घवाक्य (Major Premise) के विशेष और ह्रस्व वाक्य (Minor Premise) के निषेधात्मक होने से कोई निष्कर्ष नहीं निकलता।

(७) उभयतोपाश से आप क्या समझते हैं ? उभयतोपाश की आधार-विषयक (Formal) और वस्तुविषयक शुद्धियाँ Material Conditions स्पष्ट कीजिए।

(८) भारतीय तर्कशास्त्र में अनुमान की प्रकृति क्या है और वह कितने प्रकार का होता है ?

(९) निम्नांकित तर्कों में से किन्हीं चार को तार्किक रूप में लाइए और उनकी परीक्षा कीजिए और उनमें जो दोष हों उन्हें प्रकट कीजिए:—

१. आत्महत्या पाप नहीं हो सकती; क्योंकि वह ऐच्छिक मृत्यु है और वीरों ने प्रसन्नता से ऐच्छिक मृत्यु को गले लगाया है।
२. एक मनुष्य रोटी अथवा चावल अथवा फल अथवा किसी विशेष प्रकार के खाद्यपदार्थ के विना जीवित रह सकता है। इसलिए वह विल्कुल भोजन के विना ही जीवित रह सकता है।
३. उसका इस विद्यालय में प्रवेश हो जायगा क्योंकि इस विद्यालय में केवल प्रथम श्रेणी वालों का ही प्रवेश होता है।
४. राजा देश पर शासन करता है; रानी राजा पर शासन करती है; इसलिए रानी देश पर शासन करती है।

५. अफीम निद्रा-उत्पादक है, क्योंकि उसके खाने से नींद आती है।

१९६१

१. तर्कशास्त्र किस प्रकार का विज्ञान है? तर्कशास्त्र तथा दूसरे विज्ञानों (Sciences) और कलाओं (Arts) में आप किस प्रकार भेद करेंगे?

२. विचार के तीन मूल नियमों (Fundamental Laws of Thought) की प्रकृति तथा महत्व स्पष्ट कीजिए। यह भी प्रकट कीजिए कि ये नियम किस प्रकार सोचने (thinking) के प्रत्येक रूप में पूर्वकल्पित होते हैं।

३. (अ) तार्किक विभाग (Logical Division) की प्रकृति (nature) तथा नियम समझाइए। तार्किक परिभाषा (Logical Definition) से इसका क्या सम्बन्ध है।

(ब) निम्न विभागों (Divisions) की तार्किक परीक्षा कीजिए :—

(१) मनुष्यों का विभाजन बुद्धिमान तथा मुर्खों में।

(२) भारतीयों का हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख तथा ईसाइयों में।

(३) कौओं का काले तथा काले-नहीं (not-black) में।

४. (अ) निम्नांकित में भेद बताइए:—

हेतुफलाश्रित (hypothetical) तथा वैकल्पिक (disjunctive) वाक्य; शाब्दिक (verbal) तथा वास्तविक (real) वाक्य; आवश्यक (necessary), प्रतिज्ञात (assertory) तथा सम्भावित (problematic) वाक्य।

(ब) निम्नलिखित वाक्यों को तार्किक रूप में लाकर उनका परिमाण (quantity) तथा गुण (quality) निश्चित कीजिए:—

(१) जला हुआ बच्चा आग से डरता है।

(२) मोहन न तो कवि है और न दार्शनिक।

(३) त्रुटियां मनुष्य से ही होती हैं।

५. (अ) न्यायवाक्य के अवयवों (Structure of Syllogism) को समझाइए। न्यायवाक्य में मध्यम-पद (Middle Term) के कार्य स्पष्ट रूप से लिखिए।

(ब) सिद्ध कीजिए कि ओ (O) वाक्य प्रथम आकार (1st Figure) और चतुर्थ आकार (Fourth Figure) में आधार वाक्य (Premise) नहीं हो सकता है।

६. रूपान्तरण (Reduction) किसे कहते हैं? नैगमनिक तर्कशास्त्र में इसका क्या महत्व है?

७. न्यायश्रृंखला (Sorites) से आप क्या समझते हैं? उचित उदाहरण देकर न्यायश्रृंखला के भेद तथा नियमों का उल्लेख कीजिए।

८. भारतीय अनुमान (Inference) की प्रकृति समझाकर लिखिये तथा इसकी पाश्चात्य न्याय (Western Syllogism) से तुलना कीजिए।

९. निम्नांकित तर्कों में से किन्हीं चार को तार्किक रूप में लाइए तथा उनकी परीक्षा कीजिए। अगर उनमें कोई दोष हों, तो उन्हें प्रकट कीजिए:—

(१) टैगोर की सब पुस्तकें एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकतीं। गीतांजलि टैगोर की एक पुस्तक है। इसलिए यह भी एक दिन में नहीं पढ़ी जा सकती है।

(२) शराब स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं हो सकती; क्योंकि डाक्टर कभी-कभी रोगियों के लिए शराब पीना निर्धारित करते हैं।

(३) झूठ बोलना अनुचित है, क्योंकि यह सदाचार के नियमों के विरुद्ध है।

(४) साम्यवाद (Communism) के सिद्धांत अवश्य ही सत्य हैं, क्योंकि इसने बड़े-बड़े सामाजिक तथा राजनैतिक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं।

(५) किसी उद्योग में सफलता प्राप्त करने के लिए एक मनुष्य को या तो बहुत परिश्रमी या बहुत चालाक होना चाहिए। वह बहुत

परिश्रमी है तथा उद्योग में वहुत फल हुआ है। इसलिए वह चालाक नहीं हो सकता।

१९६२

१. तर्कशास्त्र क्या है? तर्कशास्त्र के स्वरूप, क्षेत्र तथा महत्व का विवेचन कीजिए।

२. गुणवाचक (Connotative) तथा अगुणवाचक (Non-connotative) पदों में भेद बताइए। क्या व्यक्तिवाचक नाम (Proper Names) गुणवाचक होते हैं?

३. वाच्यधर्म (Predicables) से आप क्या समझते हैं? पॉरफिरी की वाच्यधर्मों की सूची की अरस्तू की वाच्यधर्मों की सूची से तुलना कीजिए।

४. (अ) तार्किक विभाजन (Logic Divisions) किसे कहते हैं? तार्किक विभाजन अंशगत विभाजन (Physical Divisions) तथा गुणगत विभाजन (Metaphysical Divisions) से किस प्रकार भिन्न है?

(ब) निम्नांकित विभाजनों की तार्किक परीक्षा कीजिए:—

(१) मनुष्यों का विभाजन सुखो तथा दुखी में।

(२) सेना का विभाजन अधिकारियों (Officers) तथा जो अधिकारी नहीं हैं (Non-officers) में।

(३) पुस्तकों का विभाजन हिन्दी, उर्दू, वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक पुस्तकों में।

५. (अ) तार्किक परिभाषा (Logical Definition) किसे कहते हैं? तार्किक परिभाषा के उपयोग तथा सीमाओं का विवेचन कीजिए।

(ब) निम्नलिखित परिभाषाओं का तार्किक परीक्षण कीजिए। यदि इनमें कोई दोष हों, तो उनको प्रकट कीजिए:—

(१) त्रिभुज वह आकृति है, जिसमें तीन सरल रेखाएं तथा एक कोण होते हैं।

(२) साहस (Courage) एक नैतिक गुण है, जो कि मनुष्य को विपद् का सामना करने के योग्य बनाता है।

(३) स्वतंत्र मनुष्य वह है जो किसी का दास नहीं है।

६. चतुर्थ आकार (Fourth Figure) के विशेष नियम क्या हैं? आप इन्हें किस प्रकार सिद्ध करेंगे?

७. उभयतोपाश (Dilemma) के स्वरूप तथा प्रकार (Nature and kinds) स्पष्ट रूप से समझाइए। उभयतोपाश की क्या दुर्बलताएँ हैं?

८. भारतीय तर्कशास्त्र में हेतु (Middle Term) का क्या महत्व है? दोषपूर्ण हेतु (Faulty Middle Term) से उत्पन्न होने वाले हेत्वाभासों (Fallacies) को उदाहरण देकर समझाइए।

९. निम्नांकित तर्कों में किन्हीं चार को तार्किक रूप में लाइए तथा उनकी परीक्षा कीजिए। यदि उनमें कोई दोष हों तो उन्हें प्रकट कीजिए:—

(१) कोई भी दार्शनिक सिद्धांत सत्य नहीं हो सकता, क्योंकि सब दार्शनिक एक दूसरे की आलोचना करते हैं?

(२) यदि कोई छात्र असाधारणतया बुद्धिमान है, तो वह प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण करेगा। क्योंकि राम ने प्रथम श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण की है, इसलिए वह असाधारणतया बुद्धिमान अवश्य होगा।

(३) दासता (Slavery) बुरी नहीं हो सकती, क्योंकि अफलातून और अरस्तू जैसे दार्शनिक इसके पक्ष में थे।

(४) केवल गुणी ही सुखी होते हैं, क्योंकि राम सुखी नहीं है इसलिए वह गुणी नहीं है।

(५) हमारी भारतीय सेना शूर-वीरता के लिए प्रसिद्ध रही है। क्योंकि 'अ' भारतीय सेना का सैनिक है, इसलिए 'अ' शूर-वीर अवश्य है।

———

१९६३

१. तर्कशास्त्र की उपयुक्त परिभाषा कीजिए। तर्कशास्त्र विज्ञान है अथवा कला ?

२. विचार के नियमों (Laws of Thought) की समुचित उदाहरणों के साथ व्याख्या कीजिए।

३. परिभाषा (Definition) के नियमों की व्याख्या कीजिए तथा उनके उल्लंघन से उत्पन्न दोषों को बताइए।

४. निम्नलिखित तर्कवाक्यों (Propositions) का तार्किक आकार (Logical form) व्यक्त कीजिए तथा इनके परिमाण (Quantity) और गुण (Quality) भी बताइए:—

(क) अधूरा ज्ञान हानिकारक होता है।

(ख) हर एक विद्यार्थी बुद्धिमान नहीं होता।

(ग) मनुष्य कभी भी पूर्ण नहीं हो सकते।

(घ) जहां चाह वहां राह।

(ङ) केवल सद्‌गुणी ही प्रसन्न होते हैं।

५. विवेचन कीजिए कि किसी न्याय वाक्य (Syllogism) में कोई निष्कर्ष नहीं निकलता यदि—

(क) दोनों आधार वाक्य (Premises) विशेष (Particular) हों।

(ख) दोनों आधार वाक्य (Premises) निषेधात्मक (Negative) हों ?

६. उभयतोपाश (Dilemma) किसे कहते हैं ? उभयतोपाश (Dilemma) का प्रतिक्षेप (Rebuttal) कैसे होता है ? उदाहरण दीजिए।

७. आकारान्तरण (Reduction) किसे कहते हैं ? आकारान्तरण (Reduction) का क्या महत्व है ? (Camestres) का अनुलोम आकारान्तरण (Direct Reduction) कीजिए।

८. निम्नलिखित विषयों में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए:—
   (क) एकवाचक पद (Singular Terms)
   (ख) जाति एवं व्यावर्त्तक गुण (Per genus et Differentium)
   (ग) वाक्यप्रतिमुखता का वर्ग (Square of Opposition)

९. निम्न तर्कों में से किन्हीं चार का परीक्षण कीजिए और दोष (यदि है तो) बताइए:—
   (क) कम से कम कुछ भारतीय ईमानदार हैं, परन्तु चूंकि कोई भी वकील ईमानदार नहीं हैं। इसलिए कोई वकील भारतीय नहीं हो सकता।
   (ख) प्रत्येक व्यक्ति को दानी होना चाहिए क्योंकि दान देना मनुष्य का कर्त्तव्य है।
   (ग) वह व्यक्ति जो सबसे अधिक भूखा है सबसे अधिक खाता है परन्तु वह व्यक्ति जो सबसे कम खाता है सबसे अधिक भूखा है, अतः वह व्यक्ति जो सबसे कम खाता है सबसे अधिक खाता है।
   (घ) यदि तुम्हारे भाग्य में नीरोग होना निर्धारित है तो डाक्टर को बुलाना व्यर्थ है और यदि तुम्हारे भाग्य में नीरोग न होना निर्धारित है तब भी डाक्टर को बुलाना व्यर्थ है। परन्तु तुम्हारे भाग्य में इन्हीं दो में से कोई एक निर्धारित है अतः दोनों अवस्थाओं में डाक्टर को बुलाना व्यर्थ है।
   (ङ) प्राणी एक जाति है। यह गाय एक प्राणी है और इसलिए एक जाति है।
   (च) सभी मनुष्य परिश्रमी नहीं हैं परन्तु राम परिश्रमी है। अतः राम मनुष्य नहीं हो सकता।
   (छ) यदि वह स्वस्थ है तो वह आवेगा। परन्तु वह स्वस्थ नहीं है, अतः वह नहीं आवेगा।

१०. हेत्वाभास क्या है ? इसे स्पष्ट समझाइए। असिद्ध तथा विरुद्ध हेत्वाभासों के उदाहरण दीजिए।

अथवा

क्या परार्थानुमान और अरस्तू (Aristotle) के न्याय वाक्य (Syllogism) में कोई साम्य है ?

१९६४

१. तर्कशास्त्रको क्यों विज्ञानों का विज्ञान कहा जाता है? इसको समझाइए।

२. क्या व्यक्तिवाचक संज्ञा गुणवाचक होती है? उचित उदाहरण देकर समझाइए।

३. तार्किक विभाग किसे कहते हैं? भौतिक विभाग से इसका अन्तर बताइए, तथा तार्किक विभाग के नियमों का विवेचन कीजिए।

४. प्रतिवर्तन किसे कहते हैं? विभिन्न निरपेक्ष वाक्यों के प्रतिवर्तन बताइए।

५. हेतुपद कम से कम एक बार आधार वाक्यों में व्याप्त होना चाहिए। पूर्ण व्याख्या कीजिए।

६. मिश्र हेतुफलाश्रित न्यायवाक्य किसे कहते हैं? इसके नियम हैं? उचित उदाहरण दीजिए।

७. निम्नलिखित विषयों पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए:—

(क) राहित्यबोधक पद।

(ख) उपाश्रितता।

(ग) "ओ" वाक्य का परिवर्तन।

(घ) अनुचित साध्य।

८. उचित (proper) तथा अनुचित (improper) आगमन में भेद बतलाइए। क्या वैज्ञानिक आगमन एक उचित पद्धति है?

९. कारण क्या है? उदाहरणों के साथ समवायी तथा असमवायी कारणों का भेद समझाइए।

१९६५

१. कहा गया है कि आगमनात्मक अनुमान निगमन के विलोम विधि है— इस कथन को समझाकर लिखिए।

२. विधेय सम्बन्ध से आप क्या समझते हैं, दृष्टान्तों सहित समझाइए।

३. परिभाषा क्या है? निम्न परिभाषाओं की परीक्षा कीजिए:—

(अ) प्रार्थना आत्मा की हार्दिक इच्छा है।

(ब) समय अनन्त का चंचल प्रतिबिम्ब है।

(स) विश्वविद्यालय एक शिक्षा-संस्था है।

(द) जीवन मृत्यु का विपरीत है।

४. निम्न वाक्यों का परिवर्तन तथा प्रतिवर्तन लिखिए तथा उनके तार्किक विरोधवाले वाक्य भी लिखिए:—

(अ) दुनिया के सब डाक्टर भी उसे बचा न पाए।

(ब) केवल भ्रष्ट ही निष्ठुर होते हैं।

(स) एक अज्ञ व्यक्ति को सम्मान नहीं मिलता।

५. सिद्ध कीजिए कि न्यायवाक्य के केवल प्रथम रूप में ही A वाक्य निष्कर्ष हो सकता है।

न्यायवाक्य के द्वितीय आकृति के विशेष नियम तथा प्रामाणिक योगों को सिद्ध कीजिए।

आगमन के आकारविषयक आधारों से आप क्या समझते हैं?

८. उदाहरणों सहित आंशिक गणना से आगमन, पूर्ण गणना से आगमन, और वैज्ञानिक आगमन से भेद बताइए। यह भी बताइए कि वैज्ञानिक खोज के लिए कौन उपयोगी हैं।

९. स्वार्थानुमान तथा परार्थानुमान का भेद समझाइए। परार्थानुमान के अवयवों को एरेस्टोटेलिएन सिलोजिस्म के रूप में परिवर्तित कीजिए।

अथवा

कारण के विषय में नैयायिक सिद्धान्त को स्पष्ट रूप से बताइए तथा इसकी तुलना पाश्चात्य तर्कशास्त्र के "कौज" के सिद्धान्त से कीजिए।

—